विद्वत परिषद् द्वारा समीक्षित पत्रिका
Peer Reviewed Journal
ISSN : 2454-1133

अनुग्रह ज्योति 2025

ए. एन. कॉलेज, पटना

चतुर्थ चक्र, श्रेणी 'ए+' – राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद् (नैक) द्वारा पुनर्मूल्यांकित
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यु.जी.सी.) द्वारा 'विशिष्ट' महाविद्यालय के रुप में रेखांकित
पाटलीपुत्र विश्वविद्यालय, पटना

बिहार विभूति
डॉ. अनुग्रह नारायण सिंह

तुम बिहार के गौरव गरिमा, तुम थे देव महान ।
हे बिहार के निर्माता, लो मेरा शत्–शत् प्रणाम ।।

कॉलेज गीत

करो अनुग्रह हे नारायण,
ज्ञान की ज्योति जले...!
भासित अन्तर्मन जन-जन का,
जगमग जग कर दे ...!
करो अनुग्रह ...!

आत्म विश्वास से भरा हृदय हो,
कर्म-धर्म हो, दया, विनय हो।
सत्य बने संबल जीवन का
ऐसा मन कर दे ...!
करो अनुग्रह ...!

ऊँच नीच का भेद नहीं हो
स्वस्थ तन, अनुशासित मन हो,
विजयी हो संघर्ष हमारा
बाधा सब हर ले
करो अनुग्रह ...!

प्रो. कलानाथ मिश्र

ISSN : 2454-1133

अनुग्रह ज्योति 2025

संरक्षक

प्रो. अरूण कुमार सिंह

प्रधान संपादक

प्रो. कलानाथ मिश्र

संपादक

प्रो. रत्ना अमृत

विद्वत परिषद्

प्रो. बिहारी सिंह
रसायनशास्त्र विभाग
(अवकाशप्राप्त)

प्रो. चंदन प्रसाद सिंह
दर्शन शास्त्र विभाग
(अवकाशप्राप्त)

प्रो. बबन कुमार सिंह
अंग्रेजी विभाग
(अवकाशप्राप्त)

प्रो. प्रतिभा सहाय
हिन्दी विभाग
(अवकाशप्राप्त)

संपादक मंडल

डॉ. सीमा प्रसाद

डॉ. संजय कुमार सिंह

डॉ. विद्या भूषण

डॉ. ज्योतिष कुमार

डॉ. अभिषेक दत्त

डॉ. निशा कुमारी

आरिफ मोहम्मद खां
Arif Mohammed Khan

सत्यमेव जयते

राज्यपाल, बिहार
GOVERNOR OF BIHAR

राज भवन
पटना–800022
RAJ BHAWAN
PATNA - 800022

12 जून, 2025

संदेश

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि अनुग्रह नारायण महाविद्यालय, पटना 18 जून 2025 को अनुग्रह बाबू की 138वीं जयंती के अवसर पर अपना 69वाँ स्थापना दिवस मनाने जा रहा है तथा इस अवसर पर महाविद्यालय की वार्षिक पत्रिका 'अनुग्रह ज्योति' का प्रकाशन भी किया जा रहा है।

आशा है, समारोह एवं पत्रिका के माध्यम से विद्यार्थीगण अनुग्रह बाबू के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से अवगत होकर यथेष्ट प्रेरणा ग्रहण करेंगे।

समारोह एवं पत्रिका प्रकाशन की सफलता हेतु हार्दिक मंगलकामनाएँ।

(आरिफ मोहम्मद खां)

मुख्य मंत्री
बिहार

बिहार सरकार

पटना

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि दिनांक **18 जून, 2025** को बिहार विभूति डॉ॰ अनुग्रह नारायण सिन्हा के **138वीं जयन्ती** के अवसर पर ए.एन.कॉलेज, पटना द्वारा अनुग्रह जयन्ती-सह-स्थापना दिवस समारोह का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर वार्षिक पत्रिका ''अनुग्रह ज्योति 2025'' का लोकार्पण भी प्रस्तावित है।

स्वतंत्रता सेनानी, कुशल प्रशासक, किसान समर्थन एवं श्रमिक हितैषी, बिहार के प्रथम उप मुख्य मंत्री सह वित्त मंत्री, बिहार विभूति अनुग्रह नारायण सिन्हा के नाम पर स्थापित महाविद्यालय का गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मुझे विश्वास है कि जयन्ती-सह-स्थापना दिवस समारोह के आयोजन एवं स्मारिका के प्रकाशन से स्व॰ अनुग्रह बाबू के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विभिन्न पहलुओं को नई पीढ़ी तक पहुँचाने में मदद मिलेगी।

मैं स्व. अनुग्रह बाबू को श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए विद्यार्थियों के उज्ज्वल भविष्य की मंगलकामना करता हूँ तथा 138वीं अनुग्रह जयन्ती-सह-69वाँ स्थापना दिवस समारोह के सफल आयोजन तथा अनुग्रह ज्योति-2025 के प्रकाशन एवं उसकी उपयोगिता हेतु अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

(नीतीश कुमार)

Nikhil Kumar, IPS (Retd.)

Former Governor, Negaland & Kerala

"S O P A N"
Boring Road, Patna - 800 001
Tel : 0612-2531171, 0612-253217
Mobile : 99101099268
E-mail : nikhilkumar1943@yahoo.com

MESSAGE

It gives me immense satisfaction to extend my heartfelt greetings to the entire fraternity of A. N. College, Patna on the auspicious occasion of the 138th Anugrah Jayanti cum Foundation Day, and on the publication of the annual college magazine Anugrah Jyoti 2025.

This celebration is not just a tribute to Bihar Vibhuti Dr. Anugrah Narayan Sinha's towering legacy, but also a reaffirmation of the values he stood for — integrity, education, service, and nation-building. In an era where knowledge is the true wealth, institutions like A. N. College play a vital role in shaping young minds with both academic excellence and moral grounding.

The college's continued commitment to quality education, as reflected in its NAAC A+ accreditation, is commendable. The publication of Anugrah Jyoti is a testimony to the vibrant academic and creative spirit that flourishes within the campus. It is through such endeavours that the intellectual and cultural aspirations of students and faculty find meaningful expression.

May Anugrah Jyoti 2025 inspire generations of learners and educators to walk in the footsteps of Bihar Vibhuti, upholding the ideals of knowledge, character, and service to society.

With best wishes for the continued growth and glory of A. N. College, Patna.

Jai Hind !

(Nikhil Kumar)

PATLIPUTRA UNIVERSITY

PATNA-800 020

Dr. Inderjeet Singh
Vice-Chancellor

Website : www.ppup.ac.in
E-mail : vc@ppu.ac.in
Mob. : +91

शुभकामना संदेश

पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना के लिए यह अत्यंत गर्व का विषय है कि अंगीभूत महाविद्यालय अनुग्रह नारायण कॉलेज, पटना द्वारा बिहार के पहले उप-मुख्यमंत्री सह वित्तमंत्री एवं आधुनिक बिहार के निर्माता के रूप में विख्यात बिहार विभूति अनुग्रह बाबू की 138वीं जयंती एवं संस्थान की अपनी 69वीं स्थापना दिवस मनाई जा रही है। इस पावन अवसर पर महाविद्यालय द्वारा अपने कॉलेज की वार्षिक पत्रिका ''अनुग्रह ज्याति'' का प्रकाशन भी किया जा रहा है।

मैं इस विशेष अवसर पर प्रकाशित होने वाली वार्षिक पत्रिका **'अनुग्रह ज्योति'** के सफल प्रकाशन के लिए प्रधानाचार्य, प्राध्यापकों, शिक्षकेत्तर कर्मचारियों एवं समस्त छात्र-छात्राओं को हार्दिक शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ एवं उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

(डॉ॰ इन्द्रजीत सिंह)
कुलपति

प्रधानाचार्य की कलम से

अनुग्रह ज्योति 2025 के प्रकाशन के अवसर पर, जो अनुग्रह जयंती सह स्थापना दिवस के पावन अवसर पर प्रकाशित हो रहा है, कुछ शब्द साझा करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष हो रहा है।

हम सबके लिए यह बड़े सम्मान की बात है कि बिहार के माननीय राज्यपाल श्री आरिफ मोहम्मद खां ने इस स्मरणीय अंक का विमोचन करने की सप्रेम स्वीकृति प्रदान की है। साथ ही, हमें यह कहते हुए भी अपार गर्व हो रहा है कि नागालैंड एवं केरल के पूर्व राज्यपाल, माननीय श्री निखिल कुमार इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि के रूप में हमारे मध्य उपस्थित रहेंगे। पद्मश्री डॉ. आर. एन. सिंह तथा पटलिपुत्र विश्वविद्यालय के माननीय कुलपति डॉ. इंद्रजीत सिंह की गरिमामयी उपस्थिति से यह आयोजन और भी गौरवान्वित हुआ है।

मैं यह देखकर प्रसन्न हूं कि संपादकीय टीम ने समर्पण, सजगता और उत्कृष्ट समन्वय के साथ उत्कृष्ट लेखों के संकलन, सटीक संपादन एवं समयबद्ध प्रकाशन के माध्यम से इस प्रतिष्ठित पत्रिका को एक नई ऊँचाई प्रदान की है।

मैं इस अवसर पर संपादकीय टीम के प्रत्येक सदस्य को उनकी लगन और निष्ठा के लिए हार्दिक धन्यवाद प्रकट करता हूँ। मुख्य संपादक, प्रधान संपादक एवं संपादकीय टीम के सदस्यों के बीच समन्वय विशेष रूप से सराहनीय रहा।

शिक्षा को प्रकृति, संस्कृति एवं प्रगति के अनुरूप होना चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं कि हम वैश्विक विकास की दौड़ में पीछे रहें। निरंतर प्रयास और सकारात्मक सोच के साथ यह पत्रिका कला, दर्शन और विज्ञान की मुख्यधारा में छात्र-छात्राओं को प्रेरित करने का कार्य करेगी - ऐसा मेरा विश्वास है।

वास्तव में, किसी भी महाविद्यालय की पत्रिका उसके कार्यकलापों की आत्मा होती है, जिसमें शैक्षणिक, बौद्धिक, सामाजिक और विकासात्मक गतिविधियों का समावेश होता है। सीमित समय में इस पत्रिका का प्रकाशन कर संपादकीय टीम ने अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किया है - इसके लिए वे हृदय से बधाई के पात्र हैं। तथापि, इसकी गुणवत्ता और प्रासंगिकता का सही मूल्यांकन सजग एवं सुधि पाठकों द्वारा ही किया जा सकता है।

मैं अनुग्रह ज्योति 2025 के सफल प्रकाशन में योगदान देने वाले सभी व्यक्तियों को हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूँ। यह अंक हमारी संस्था की शैक्षणिक चेतना, रचनात्मक उत्कृष्टता एवं सामूहिक संस्कारों को प्रतिबिंबित करे - यही मेरी कामना है।

सादर,

प्रो. अरूण कुमार सिंह
प्रभारी प्रधानाचार्य

Editorial

''आधुनिक बिहार के निर्माताओं में से अनुग्रह बाबू का नाम हमेशा
याद रखा जाएगा। उन्होंने बिहार के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया
और उनकी नेतृत्व क्षमता ने बिहार को नई दिशा दिलाई।''

- लोकनायक जयप्रकाश नारायण

Over the years, Anugrah Narayan College has evolved, adapting to changing times while staying true to its core values. From humble beginnings to its current stature, our college has consistently provided a nurturing environment for students to grow, learn and thrive.

Today, on 18th June, as we commemorate 138th "Anugrah Jayanti" and 68th Establishment Day of our college, we honour the vision and dedication of Bihar Vibhuti, Sri Anugrah Babu. We express our gratitude and rededicate ourselves to the ideals of the great man.

Anugrah Babu laid emphasis on self-reliance and hard work. He believed education was crucial for individual and societal development. His focus on education also underscored his belief in providing equal opportunities for all. "Absolute Enlightenment through Knowledge", is embedded in our logo which forms the core value of our institution. This institution draws inspiration from a famous quote of Anugrah Babu "Stand by Merit".

A.N. College has won accolades both at State as well as at national level. It has been accredited with Grade A+ by NAAC in August 2023. The college is fully attuned to face challenges posed by growing demands in the field of higher education.

Anugrah Jayanti is a celebration of the blessing and grace that have shaped our institution. It is an opportunity to reflect on our journey, acknowledging the contributions of the faculty, staff and students who have made a positive impact.

"Anugrah Jyoti" is a tribute and offering to the memory of the great visionary leader Bihar Vibhuti, Sri Anugrah Babu. The magazine is an expression of the sentiments and emotions of the teachers, staff and students of our college. It is a platform to exhibit their literacy skills and innovative ideas.

We extend our sincerest gratitude to our esteemed teachers for their invaluable contribution to our college magazine. Thank you for playing a pivotal role in shaping this edition of the magazine. We also thank the Professor in charge of our college for giving encouragement and free hand in this endeavour.

We hope you enjoy reading this edition of "Anugrah Jyoti" as we enjoyed making it. Best wishes to the all readers on 138th establishment day and 68th Anugrah Jayanti.

"The mind is not a vessel to by filled but a fire to be ignited"

- Plutarch

Prof. Ratna Amrit
Editor

Prof. Kalanath Mishra
Sr. Editor

राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का स्वायत्त संस्थान

NATIONAL ASSESSMENT AND ACCREDITATION COUNCIL

An Autonomous Institution of the University Grants Commission

Certificate of Accreditation

The Executive Committee of the
National Assessment and Accreditation Council
is pleased to declare
Anugrah Narayan College, Patna
Srikrishnapuri, Dist. Patna, a Constituent College of Patliputra University,
Bihar as
Accredited
with CGPA of 3.36 on four point scale
at A+ grade
valid up to August 01, 2028

Date : August 02, 2023

Director

EC(SC)/161/ 4th Cycle/BRCOGN12445

अनुक्रमणिका

Bihar Vidhuti a statesman beyong his era	: Prof Lakshmi Naraya Singh	01
बिहार विभूति और बिहार केसरी की पारस्परिकता	: प्रो. अरूण कुमार	03
भाषा की जीवन शक्ति और चुनौतियाँ	: प्रो. कलानाथ मिश्र	07
Vedic Mathematics	: Prof. Ratna Amrit	18
Applications of Graph Theory in Cloud Computing	: Prof. Shambhu Kr. Mishra	22
Shanti Swarup Bhatnagar : Father of Research Laboratories	: Prof. Anil Kumar Singh	26
NEP 2020 Implementation in Bihar's Higher Education : A Dynamic Overview	: Prof. (Dr.) Rekha Kumari	27
Political Parties : A Perspective	: Prof. Binod Kumar Jha	33
Synthetic Plastics	: Pro. Sushil Kr. Singh	40
Whispers of the Water	: Prof. S P Singh	48
A revelation of Swami Vivekanand Vedentic Humanism	: Dr. Tanya Mukharjee	52
Flow of Color	: Dr. Shabana Karim	57
The educational vision and societal contributions of Bihar Governor ARIF MOHAMMED KHAN	: Dr. Sanjay Kumar	61
रामचरितमानस में शक्ति का समावेश	: डॉ. संजय कुमार सिंह	65
परिन्दे : स्मृतियों की धुंध से मुक्ति की दास्तान	: डॉ. विद्या भूषण	70
पर्यटन : ज्ञानक संग उद्योग विशेष रोजगारक अवसर अनन्त-अशेष	: डॉ. वन्दना कुमारी	78
Problems & Prospects of Scientific Research in Bihar Today	: Dr. Amrita Chakraborty	83
Water Resources, Food Security & Climate Change Nexus Challenges and Solutions for a Sustainable Future.	: Dr. Bhawana Nigam	87
Nagar Van Yojana A Beacon of hope for urban biodiversity in Bihar	: Dr. Gaurav Sikka Dr. Prerna Bharti	100
सांस्कृतिक वैशिष्ट्य से समादृत लोकभूमि : नागालैंड	: डॉ. कुमार वरूण	108

अनुग्रह ज्योति

सेवा से व्यापार तक शिक्षा और स्वास्थ्य का बदलता चेहरा	: डॉ. विकास कुमार	112
The Position of Women in Indian Society after Independence	: Kausar Tasneem	115
भारत रत्न कर्पूरी ठाकुर : जननायक की कहानी	: डॉ. संजीत लाल	118
'कछुआ धरम' और नवजागरण कालीन चेतना	: डॉ. सरिता सिन्हा	123
भारतीय ज्ञान, कला एवं संस्कृति (नृत्यकला के विशेष संदर्भ में)	: डॉ. अर्चना चौधरी	127
बैजू बाबू	: डॉ. विनीता सिंह	129
साहित्य, समाज और पर्यावरण	: डॉ. नवीन कुमार	130
आपदा प्रबंधन में खाद्य प्रबंधन पर एक समग्र अध्ययन	: डॉ. कविता राज	133
श्रृंगार के रससिद्ध कवि सूरदास	: डॉ. संजय कुमार	141
Population and development with reference to Indian and Bihar	: Dr. Mrinalini	143
Solar Cells : Powering India's Space Dreams	: Dr. Prashant Bhaskar	148
भारतीय संस्कृति में प्रकृति पूजा	: डॉ. मधु मंजरी	151
दर्शन और आज की राजनीति	: डॉ. कुमकुम रानी	154
Debt, Informal credit & labour bondage : A study among landless rural households in Bihar	: Vandana Kumari	156
A new & forward-looking vision for India's Higher education system	: Dr. Lav Kumar	159
सार्थक जीवन की खोज	: डॉ. दीपक कुमार	167
पीपल	: डॉ. मंजु कुमारी	169
नारी-विमर्श : हिन्दी की प्रमुख समकालीन कवयित्री	: डॉ. अनामिका शिल्पी	170
सीबीसीएस पद्धति और बिहार में विश्वविद्यालय के सामने चुनौतियाँ	: डॉ. कुन्दन कुमार सिंह	180

BIHAR VIBHUTI

A STATESMAN BEYOND HIS ERA

Prof. (Dr.) Lakshmi Narayan Singh

(The author is Retired officiating VC & Pro Vice Chancellor of J.P. University, Saran, Bihar)

The great poet Shri Ramdhari Singh 'Dinkar' immortalized a touching incident; Anugrah Babu, noticing a shivering visitor at his residence located near Gandhi Maidan ,Patna , gifted his own pashmina shawl to him, enduring the chill himself. Such acts of compassion underscored his deep empathy, endearing him to the masses.

What you leave behind is not what is engraved in stone monuments, but what is woven into the lives of others ". This timeless adage resonates profoundly with the legacy of Dr. Anugrah Narayan Sinha ji , fondly revered as Bihar Vibhuti ; a paragon of humanity, a towering nationalist, and an institution in his own right. His life, a tapestry of selfless service, exemplary leadership, and unwavering commitment to India's freedom, continues to inspire generations.

Dr. Anugrah Narayan Sinha's indomitable spirit in the struggle for India's independence is etched in the heart of every nation loving patriot. As the first Deputy Chief Minister cum Finance Minister of independent Bihar, he served with distinction until his final breath. A gentleman of unparalleled grace and an administrator of exceptional efficiency, his mere presence commanded reverence. His political journey, spanning five decades, was adorned with achievements that shaped modern Bihar and earned him the affectionate title Bihar Vibhuti. As we commemorate his 138th birth anniversary, it is our solemn duty to pay tribute to this architect of Bihar's progress and a stalwart of national freedom movement.

His pivotal role in Mahatma Gandhi's historic Champaran Satyagraha, alongside Dr. Rajendra Prasad, marked a defining chapter in the evolution of Gandhian philosophy in the country, cementing his immortality in the annals of history. Handpicked to assist the Father of the Nation, Anugrah Babu stood shoulder-to-shoulder with his peer nationalist luminaries like Rajendra Prasad and Brajkishore Prasad, earning Gandhi's praise in his autobiography for his extraordinary nationalist zeal. The renowned Paul H. Appleby report stands as a testament to his transformative contributions, hailing Bihar under his stewardship as the best-governed state in India.

Anugrah Babu's life brims with inspiring anecdotes that illuminate his character.

As an illustrious professor at Bihar Vidyapeeth, a nationalist institution guided by Gandhian ideals, he mentored luminaries like Jaya Prakash Narayan, leaving an indelible imprint on the young JP's ideals. In 1922, he sucessfully organised the annual Congress session in his home district Gaya Ji with such finesse that it remains a benchmark for organizational excellence in unified India . His integrity shone when, upon receiving an envelope from the Maharaja of Darbhanga containing six thousand rupees ; a princely amount those days , instead of the pledged five thousand for the said session , he promptly returned it , a reflection of his unblemished ethics and unimpeachable integrity .

The great poet Shri Ramdhari Singh 'Dinkar' immortalized a touching incident; Anugrah Babu, noticing a shivering visitor at his residence located near Gandhi Maidan ,Patna , gifted his own pashmina shawl to him, enduring the chill himself. Such acts of compassion underscored his deep empathy, endearing him to the masses. Despite repeated invitations from Prime Minister Jawaharlal Nehru and Home Minister Sardar Vallabhbhai Patel to assume a central role in national politics, Anugrah babu remained devoted to Bihar, an indispensable part of its administration.

Tragically, his life was cut short weeks after being sworn in for his third term as Deputy Chief Minister cum Finance Minister. In his final days, luminaries including President Rajendra Prasad, Pandit Nehru, Lal Bahadur Shastri, Jagjivan Ram, Govind Ballabh Pant, Shri Babu, and Jaya Prakash Narayan gathered at his bedside, a poignant testament to his stature. Though Bihar Vibhuti is no longer with us, his legacy endures, cherished by millions as a beacon of democracy, nationalism, and humanity.

'बिहार विभूति' और 'बिहार केसरी' की पारस्परिकता

अरूण कुमार सिंह
(प्रोफेसर मनोविज्ञान)
प्रभारी प्रधानाचार्य
ए.एन.कॉलेज, पटना

परस्पर सहयोग, विश्वास एवं अटूट आस्था पर टिकी श्रीबाबू एवं अनुग्रहबाबू की मित्रता को कालांतर में खंडित करने के अनेक जाने-अनजाने प्रयास किये गये, किन्तु बहुमुखी प्रतिभा के धनी इस युगल जोड़ी ने अपने को हमेशा इससे दूर रखा और राजनीति के भंवर में मित्रता का ऐसा बेमिसाल उदाहरण पेश किया जिसे आज के युवाओं, शिक्षाविदों, नौकरशाहों, राजनीतिज्ञों एवं जनमानस को जानना नितान्त आवश्यक है।

आधुनिक बिहार के निर्माता के रूप में श्रीबाबू (बिहार केसरी) एवं अनुग्रह बाबू (बिहार विभूति) का स्थान अद्वितीय है। बिहार की अस्मिता की पहचान तथा हिन्दुस्तान की आजादी को समर्पित दोनों महामानव के व्यक्तित्व शीलगुण (Personality trait) एक दूसरे से पृथक होते हुए भी मानसिक स्तर (Mental Level) पर बिल्कुल एक था। दृढ़ प्रतिज्ञ, पुस्तक प्रेमी, दीन-दलित, अल्पसंख्यकों के हितैषी, जन-जन में लोकप्रिय दोनों व्यक्तियों में जो वैयक्तिक भिन्नता (Individual Difference) थी, यह वह कि जहां बिहार विभूति संकोची, अल्पभाषी एंव संगठन के कार्यो में लिप्त रहते थे, वहीं बिहार केसरी ओजस्वी वक्ता, जनमानस में आजादी का बिगुल फूकने वाले, तेज-तर्रार, उदीयमान प्रदीप्त स्वरूप थे। किन्तु दोनो का लक्ष्य एक ही था, स्वराज एवं बिहार का विकास। आजन्म दोनों इसी भावना से अनुप्रेरित होकर राज्य एवं राष्ट्र की सेवा करते-करते अपने नश्वर शरीर को विदेह की भाँति परित्याग कर गये।

परस्पर सहयोग, विश्वास एवं अटूट आस्था पर टिकी दोनों महापुरूषों की मित्रता को कालांतर में खंडित करने के अनेक जाने-अनजाने प्रयास किये गये। किन्तु, बहुमुखी प्रतिभा के धनी इस युगल जोड़ी ने अपने को हमेशा इससे दूर रखा और राजनीति के भंवर में मित्रता का ऐसा बेमिसाल उदाहरण पेश किया जिसे आज के युवाओं, शिक्षाविदों, नौकरशाहों, राजनीतिज्ञों एवं जनमानस को जानना नितान्त आवश्यक है। उसी को ध्यान में रखकर बिहार विभूति द्वारा समय-समय पर बिहार केसरी के सम्बन्ध में लिखे गये विचारों को मैं उद्यृत करने का प्रयास कर रहा हूँ, जिसके विश्लेषण से सहज जाना जा सकता है कि बिहार केशरी के प्रति उनके अन्तर्मन में कितना सम्मान एवं अगाध विश्वास था।

अपनी पुस्तक 'मेरे संस्मरण' में 1916-17 के समय के संदर्भ में उन्होंने लिखा है कि टी0एन0 जे0 कॉलेज (नया नाम टी0एन0बी0 कॉलेज), भागलपुर में प्रोफेसरी के दौरान गंगाजी में बड़े जोर से बाढ़ आई, लोगों की खेती बर्बाद हो गयी। इसी सिलसिले में हमलोग छात्रों की टोली के साथ मुंगेर गये। मुंगेर में मैं अपने पुराने दोस्त (श्रीबाबू) से मिल सकूंगा, इस बात से मैं बहुत खुश हुआ था। जब मैं उनसे मिला, उन्होंने मेरा हार्दिक स्वागत किया और हंसते हुए कहा कि मैं पेड़ेगॉग (घुमक्कड़) हूँ। उत्तर में मैंने कहा कि आप भी तो डेमेगॉग (व्याख्यानों के जरिये लोगों को भ्रमित करने वाले) है। अनेक वर्षो के बाद दो साथियों का यह बड़ा ही सुखमय मिलन था।

1923 के बाद एक चर्चा में उन्होंने लिखा है कि "मुंगेर में शाह जुबैर और श्री कृष्ण सिंह की जोड़ी ऐसी थी

जिसकी तुलना किसी दूसरी जोड़ी से नहीं की जा सकती थी। दोनों प्रभावशाली एवं परस्पर मित्र थे। वहां जितने काम हुये या होते थे, दोनों की रजामंदी और सहमति से। श्रीबाबू को अपनी वाग्मिता के जोर पर 'बिहार केसरी' का पद प्राप्त था। जिले के कोने-कोने में उनके सिंहनाद की गूंज पहुंच चुकी थी और जहां कही भी किसी तरह का मतभेद होता, उनके पहुँचने के साथ ही दूर हो जाता था। शाह जुवैर साहब को चेयरमैन बनाकर श्रीबाबू ने अपनी महानता का परिचय दिया और इसका मुसलमानों के दिल पर भी जबरदस्त असर हुआ।''

सर गणेश दत्त के कोपभाजन के परिणामस्वरूप जब बिहार विभूति को गया जिला बोर्ड के चेयरमैन के पद से अपदस्थ होना पड़ा, जिससे उनके राजनीतिक जीवन में एक दाग सा लग गया। ऐसी विकट परिस्थिति में वे श्रीबाबू के सहयोग एवं सहायता को कभी भुला नहीं सके। जब बिहार कौंसिल में गया जिला बोर्ड का प्रश्न उपस्थापित किया गया, तब बीमारी की हालत में भी कौंसल आकर श्रीबाबू ने जिस योग्यता, निर्भयता और निष्पक्ष भावना से अनुग्रह बाबू के पक्ष में पुख्ता प्रमाण के साथ भाषण किया, वह बिहार के राजनीतिक इतिहास के सुनहले पृष्ठों पर सदा अंकित रहेगा। ''मेरे संस्मरण'' के दसवें अध्याय में उन्होंने लिखा है ''मैंने अपने मन में निश्चय कर लिया कि श्रीबाबू के मुकाबले मैं इस पद (प्रधानमंत्री/मुख्यमंत्री) के लिए इच्छुक नहीं हो सकता। मुझे व्याख्यान देने का अभ्यास भी नहीं था, इस कारण भी मेरा विचार हुआ कि मैं इस पद के योग्य नहीं हूँ। श्रीबाबू का सौहार्दपूर्ण ऋण भी मेरे ऊपर कम नहीं था। अपना विचार मैंने राजेन्द्र बाबू से भी कहा।

पुनः आजादी पूर्व कांग्रेसी मंत्रिमंडल के गठन के पश्चात् अपने संस्मरणों को उजागर करते हुये अनुग्रह बाबू ने लिखा है कि ''हमारे प्रांत में प्रथम कांग्रेसी मंत्रिमंडल का प्रारंभिक काल परस्पर प्रेम, सौहार्द तथा विश्वास के साथ बीता। श्रीबाबू और मैंने विशेष रूप से कांग्रेस कमिटियों के आदेशों को मान्यता देते हुए किसानों की दिन-प्रतिदिन की माँगों पर विचार किया तथा उनकी समस्याओं को सुलझाने की कोशिश करते हुए अपना समय बिताया।'' उल्लेखनीय है कि तत्कालीन मंत्रिमंडल में अनुग्रह बाबू सहित कुल चार मंत्री थे जिनमें श्रीबाबू प्रधानमंत्री पद पर आरूढ़ थे। अनुग्रह बाबू का श्रीबाबू के संदर्भ में लिखे हुए वाक्या को अगर मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से देखा जाए तो स्वतः स्पष्ट होता है कि इनका तथा श्रीबाबू का क्रियात्मक दृष्टिकोण करीब-करीब एक समान था।

एक अन्य प्रसंग में उन्होंने मंत्रिमंडल में अपने एवं श्रीबाबू की कार्यशैली को समीक्षा के दौरान स्पष्ट रूप से लिखा है कि प्रधानमंत्री (श्रीबाबू) का मेरे ऊपर अटूट विश्वास था। कोई भी जरूरी काम ऐसा नहीं हुआ जिसमें मेरी सलाह न भी गयी हो। उन दिनों बहुत से ऐसे नाजुक सवाल या गंभीर समस्याएँ उपस्थित हो जाती थी कि उन्हें सुलझाने में हम दोनों को आपस में मिलकर ही सारी शक्ति लगानी पड़ती थी। पारस्परिक विश्वास की आधारशिला पर गुथियों को सुलझाने की आवश्यकता के कारण मेरी बुलाहट प्रायः प्रत्येक दिन उनके यहाँ होती रहती थी। हमलोग इस समय एक दूसरे से काफी फासले पर रहते थे फिर भी आवश्यकता पड़ने पर या तो मैं ही उनके यहाँ चला जाता था या कभी-कभी वे स्वयं भी मेरे यहाँ आ जाने का कष्ट कर लेते थे। दोनों ओर से कोई हिचकिचाहट नहीं रहती थी। महात्मा बुद्ध की उक्ति है कि विश्वास से बड़ा कोई सम्बन्ध नहीं को साक्षी मानकर निःसन्देह कहा जा सकता है कि अनुग्रह बाबू तथा श्रीबाबू का आपसी संबंध 'अटूट विश्वास एवं परस्पर सहयोग' पर आधारित था जिसे किसी अन्य चश्मे से देखना क्षुद्रता के अतिरिक्त कुछ नहीं माना जा सकता है।

एक समय श्रीबाबू एंव अनुग्रह बाबू राजनीतिक बंदी के रूप में कैद थे। श्रीबाबू को अत्यधिक बुखार आ गया। हालत अच्छी नहीं थी। उनकी सेवा में दो राजनीतिक बंदी अंग्रेजी हुकूमत की ओर से मिले हुए थे। एक सरदार हरिहर सिंह तथा दूसरे श्यामा प्रसाद सिंह। एक रात अनुग्रह बाबू श्रीबाबू के पास उदास बैठे हुए थे। जब

मच्छरदानी लगाने की बारी आयी तो चुपचाप दोनों सेवको को अलग किया गया तथा अनुग्रह बाबू ने स्वयं उनका बिछावन ठीक कर मच्छरदानी लगायी। मैंने कहीं पढ़ा है कि इस दौरान उनकी आँखों से अविरल आँसू बह रहे थे। यह मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी घटना अनायास नहीं हो सकती। मानवीय प्रेम तथा मित्रता की गहराई को स्वच्छता की धारणा में ही देखा और परखा जा सकता है। इन्हीं के शब्दों में बिहार में प्रलयंकारी भूकम्प आया जिसने मुंगेर और बिहार के दूसरे अनेक शहरों को विनष्ट कर दिया। श्रीबाबू जेल से रिहा ही हुए थे कि सारी शक्ति के साथ पुर्ननिमाण के कार्यो में जुट गये। उन्होंने तबतक आराम की सांस न ली, जबतक उजड़ा बिहार फिर से बस नहीं गया।

बिहार केसरी के हीरक जयंती के शुभ अवसर पर बिहार विभूति द्वारा उनके प्रति दिये गये उद्‌गार के कुछ अंशों की चर्चा मात्र से बहुत सारी भ्रातियां स्वतः विलोपित हो जाती है। 1921 में नागपुर कांग्रेस अधिवेशन के प्रस्तावनानुसार सभी प्रांतो में प्रांतीय कांग्रेस कमिटियों का संगठन किया गया। उसी वर्ष बिहार कांग्रेस कमिटी का जन्म हुआ। श्रीबाबू बराबर प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी की बैठकों में भाग लेते थे, जिसके परिणामस्वरूप हमलोगों का सम्पर्क और गाढ़ा होता चला गया। प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी के सदस्यों के बीच पूर्ण सहयोग की भावना थी और मुझे हर कार्यक्रम में श्रीबाबू की सहायता का विश्वास रहता था। देश के लिए अपने महान बलिदान, अटूट साहस और राष्ट्रीयता के प्रति अद्‌भूत भक्ति के कारण श्रीबाबू जनता के सबसे प्यारे नेता हो गये। बिहार के राजनैतिक जीवन में श्रीबाबू का सबसे आगे आना निश्चित था। बिहार के प्रमुख राजनीति में उनका स्थान निराला है। 1921 के बाद बिहार का इतिहास श्रीबाबू के जीवन का इतिहास है। 1921 के बाद बिहार में एक भी ऐसे काम का नाम बताना कठिन है जिसमें प्रमुख रूप से उनका हाथ नहीं रहा था। श्रीबाबू उन बिरल लोगों में है, जिन्होंने बिहार को उन्नति की इस सीढ़ी पर पहुंचाया है।

यह उल्लेखनीय है कि अनुग्रह बाबू का श्रीबाबू से मित्रता कराने वाले अनुग्रह बाबू के परम मित्र शंभूबाबू थे। शंभूबाबू तो असमय दुनिया से विदा हो गये किन्तु उन्होंने राज्य को दो चमकते नक्षत्रों को एक जगह लाकर बिहार एवं राष्ट्र का कितना भला किया यह बताने की आवश्यकता नहीं है।

बिहार विभूति के उपरोक्त विचारों से यह सत्य निर्विवाद प्रतीत होता है कि बिहार केसरी के प्रति उनके मन में अत्यंत ही आदर एवं सम्मान का भाव अन्त तक रहा है। इस क्रम में बिहार केसरी का बिहार विभूति के प्रति दिये गये एक दो व्याख्यानों की चर्चा करना समीचीन जान पड़ता है। बिहार केसरी के शब्दों में 'यदि प्रांत के सौर जगत का केन्द्र राजेन्द्र बाबू है, तो उस पर सौर मंडल का सबसे निकट का और उज्जवल नक्षत्र अनुग्रह बाबू को ही कह सकते हैं। बिहार में अनुग्रह बाबू का जो स्थान है, उसके विषय में स्पष्ट शब्दों में कह सकता हूँ कि यदि उन्हें पद से हटा दिया जाय, तो मैं शासन नहीं चला सकता।''

बिहार विभूति के निधन के पश्चात् बिहार विधान सभा की आहुत बैठक में बिहार केसरी का वक्तव्य ''आज हमारे 50 वर्षो का यह साथी हमारे बगल से चला गया और आज मैं अकेलापन महसूस कर रहा हूँ। 50 वर्षो में उनके साथ कितने सपने देखे, कितने मंसूबे बांधे, कितनी विकट परिस्थितियों का सामना किया। उनसे कितनी प्रेरणाएं मिली। आज संकट के समय उनकी हमदर्दी, मदद से हम वंचित है आज हमारी विधानसभा कमजोर, हमारा गवर्नमेंट कमजोर और हमारा सार्वजनिक जीवन कमजोर है।''

1937 में अनुग्रहबाबू ने ही भारतीय उपनिवेश के दौरान स्वशासन में बिहार के प्रधानमंत्री पद पर श्रीबाबू के नाम का ही प्रस्ताव दिया था। यह उन दोनों के आपसी सूझ एंव सौहार्दपूर्ण संबंधों का स्पष्ट प्रमाण है। 1938 में

राजनैतिक बंदियों की रिहाई के प्रश्न पर जब तत्कालीन गवर्नर से मतभेद हुआ तो तत्क्षण श्रीबाबू, अनुग्रहबाबू समेत मंत्रिमंडल के सभी सदस्यों ने पद से इस्तीफा देकर देशवासियों का मान बढ़ाया था।

मेरी जानकारी में ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है, जिसमें दोनों महामानव में किसी भी बिन्दु पर सीधी तकरार या मतभिन्नता देखी गयी हो। दोनों का व्यक्तित्व दो वटवृक्ष के समान था, जिसके इर्द-गिर्द कई शाखाएँ पुष्पपित एंव पल्लवित हो चुकी थी। वे निहित स्वार्थवश आपस में टकराव करते रहते थे। जिसमें कुछ लोगों में यह धारणा बनने लगी थी कि दोनों में आपसी मतभेद है। 'मेरे संस्करण' के दूसरे अध्याय को अगर बारीकी से देखा जाय तो अनुग्रह बाबू ने स्पष्ट रूप से इसकी चर्चा भी की है। मानव प्रकृति के अनुरूप, कभी-कभी उन्हें भी श्रीबाबू के शीर्षस्थ पद को चुनौती देने की इच्छा हुयी तथा लोकतांत्रिक दायरे में रहकर उन्होंने चुनौती दी भी। किन्तु संगठन में टूट न हो तथा मित्रता में कमी न आए, इस उद्देश्य से बराबर अपने को खुला संघर्ष से परहेज किया। राजनीति में जहाँ बापू, नेहरू तथा राजेन्द्र बाबू पर भी टीका-टिप्पणी होते देख गया तो तो कुछेक बातें इन दोनों पर भी उठना कोई आश्चर्यजनक नहीं माना जाना चाहिए।

श्रीबाबू 1946, 1947, 1952 एवं 1957 से निधन तक बिहार के मुख्यमंत्री की गदी पर आसीन रहे। कहा जाता है कि राज्य की बागडोर की अधिकांश जिम्मेवारी अनुग्रह बाबू के जिम्मे रही। यह भी एक मिथक है कि मुख्यमंत्री पद हेतु, मनोनीत किये जाने के पश्चात् श्रीबाबू का नाम लिख कर कागज अनुग्रह बाबू को सौंप देते ताकि अन्य नाम की अनुशंसा बिहार विभूति ही करें। अनुग्रह बाबू ने भी कभी जीवन में इनकी इस उदारता का बेजा इस्तेमाल नहीं किया। दोनों की पारस्परिकता इतनी धनिष्ट थी कि समाज को इस भ्रांति में जीने की जरूरत नहीं है कि वे एक दूसरे के प्रतिद्वन्दी थे। अपितु सच्चाई ठीक इसके विपरीत यह है वे जीवनपर्यन्त एक दूसरे के पूरक रहे। दोनों सहयोगियों में प्रतिद्वन्द्विता, पूर्ण सहयोग एवं सद्भाव का अद्भुत सम्मिश्रण था। इसका मुख्य कारण दोनों के अर्न्तमन में प्रांत का विकास एवं लोक-सेवा की प्रबल आकांक्षा थी जिसने दो विरोधी गुणों (प्रतिद्वन्दिता एवं सहयोग) के सामजस्य को आजीवन बनाये रखा। संभवतः हिन्दुस्तान के इतिहास में ऐसा बेहतरीन उदाहरण शायद ही अन्य प्रतिभाओं में एक साथ देखा गया हो। जीवन के अंत तक ये जोड़ी राज्य के विकास के दो जुएँ बने रहे, जिनके बल पर बिहार राष्ट्र के चार में एक सर्वश्रेष्ठ प्रांत के रूप में उनलोगों के कार्यकाल तक परिगणित रहा।

बाबूसाहब की 129वीं जयंती एवं महाविद्यालय की 'हीरक जयंती' के सुअवसर पर इन महापुरूषों के जीवन को पढ़ने मात्र के कुछ नहीं होगा। बुद्ध ने कहा है कि "आप चाहे जितनी भी किताबें पढ़ लें, कितने भी अच्छे शब्द सुन ले उनका कोई फायदा नहीं। जबतक कि आप उनको अपने जीवन में नही अपनाये।" जीवन की कठिन परिस्थितियों से लड़कर उनलोगों ने जो लोकतंत्र का पाठ सिखाया, प्रान्त को आगे बढ़ाया। हमें आज उसपर दो कदम चलने का प्रण आज करना होगा। राज्य की खोई हुई गरिमा को पुनस्थापित कर राष्ट्र के उत्थान हेतु समर्पित होना होगा, तभी 2047 एवं भारत को विकसित राष्ट्र की श्रेणी में हम ला सकें।

जय हिन्द! जय भारत

भाषा की जीवन शक्ति और चुनौतियाँ

प्रो. कलानाथ मिश्र
अध्यक्ष, स्नातकोत्तर
हिन्दी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

भाषा में एक विशेष सुगंध होता है जो हमें भीतर तक प्रभावित करता है। शब्द और अर्थ की सीमा से ऊपर उठकर विशेष विचार और भाव लक्षित करता है। वह साक्षात अथवा प्रकारांतर से मनुष्य की संस्कृति के अनुरूप उसके मनोभावों को अभिव्यक्त कर सकता है।

भाषा की जीवंतता और चुनौतियां' से तात्पर्य है कि कोई भाषा कितनी जीवंत है, वह अपने परिवेशगत विचारों, भावों, संस्कृति और समाज को कितनी दक्षता के साथ शब्दों में संजोकर संप्रेषित करने की क्षमता रखती है।

उस भाषा में कितनी जीवन शक्ति है, उसमें जीवन की कितनी ऊर्जा है? उस भाषा का स्वास्थ्य कैसा है? अथवा क्या विश्व की बहुत सारी भाषाओं की तरह उसकी भी अकाल मृत्यु होने जा रही है?

भाषा में एक विशेष सुगंध होता है जो हमें भीतर तक प्रभावित करता है। शब्द और अर्थ की सीमा से ऊपर उठकर विशेष विचार और भाव लक्षित करता है। वह साक्षात अथवा प्रकारांतर से मनुष्य की संस्कृति के अनुरूप उसकी मनोभावों को अभिव्यक्त कर सकता है। जहाँ पर्दा का शब्द है वहाँ वह उस तरह के शब्दों के साथ समुचित चित्र उपस्थित करता है और जहाँ भावुकता का प्रश्न है वहाँ वह कोमलकांत पदावलियों शब्दों से उन भावनाओं को स्वरूप प्रदान करता है। अनेक स्थलों पर परिवेशगत जागरूकता के अनुरूप शब्द का प्रयोग किया जाता है। जैसे एक स्थूल काय मोटे शरीर के लड़के को आते देख सहज ही कोई कहता है कि देखो "हाथी आ रहा है" तो यहाँ साक्षात हाथी का स्थूल अर्थ न लेकर स्थूल काय व्यक्ति का अर्थ ग्रहण किया जाता है। स्थूल कद- काय के व्यक्ति की तुलना हाथी से की जा सकती है। वहीं दूसरी ओर किसी सुंदर लड़की को आते देख कोई यदि कहता है कि "चांद निकल आया है" वहां दिन में चांद निकल आने का आशय न लेकर लोग इसका अर्थ उस लड़की से लगाते हैं। यह भाषा की परिवेशगत जागरूकता है।

जहाँ तक जीवंतता की बात है तो यह है किसी भाषा में उसके जीवंतहोने की गुणवत्ता या स्थिति अथवा सजीवता। भाषा की जीवंतता से तात्पर्य है कि उस भाषा की गुणवत्ता और जीवंत बने रहने की क्षमता।

Christine Johnson के अनुसार -

"I speak my favourite language
because that's who I am-
We teach our children our favourite language,
because we want them to know
who they are[1]"

Christine Johnson,
Tohono O'odham elder,
American Indian Language Development Institute, June 2002)

1. (Christine Johnson, Tohono O'odham elder, American Indian Language Development Institute, June 2002)

हर भाषा अपनी परिवेशगत आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम है। हमारी चिंतन प्रक्रिया जहाँ से आरम्भ होती है, वहीं से भाषा अपना काम शुरू कर देती है। भाषा है तो शब्द का होना अनिवार्य है। हमारी चिंतन प्रक्रिया मौलिक भाषा से ही जन्म लेती है, आकार पाती है। फिर हम उसे चाहे जिस भाषा में रूपान्तरित कर अभिव्यक्त करें। किन्तु रूपान्तरण के क्रम में चिंतन की मौलिकता को बचाए रखना कठिन होता है। अतः हम अपने मिट्टी पानी की भाषा में जब अपनी बातों को रखते है तो वह अधिक प्रभावकारी होता है।

मानव ने सृष्टि में व्याप्त ध्वनियों को अपने अहर्निश प्रयास, अभ्यास तथा प्रतिभा से शब्द संकेतों में परिवर्तित कर ऐसी शिक्त अर्जित की जिसके बल पर वह किसी वस्तु को ही नहीं अपितु अशरीरी भाव और बोध को भी रूपायित कर लिया। भाषा में अद्‌भुत शक्ति समाहित है। यह देश और समाज में जादुई शक्ति की तरह कार्य करता है। 'रघुवंश' के आरम्भ में महाकवि कालिदास ने लिखा है-

वागार्थविव सम्पृक्तौ, वागार्थ प्रतिपत्तये

जगतः पितरौवंदे पार्वती परमेश्वरौ।[2] **रघुवंश,**

अर्थात् शब्द और अर्थ उसी प्रकार से पृथक नहीं किये जा सकते हैं जिस प्रकार जगत के पिता शिव और माता पार्वती एक दूसरे के सदैव पूरक रहे हैं। प्रख्यात भाषा-शब्द शास्त्री डॉ. रघुवीर ने अपने प्रसिद्ध 'कॉम्प्रिहेन्सिव इंग्लिश-हिन्दी डिक्सनरी' की भूमिका में लिखा है- (Words and thought are inseparably connected)[3]

मनुष्य के मानस, मस्तिष्क में नित नए विचारों का जन्म समुद्र की उर्मिल तरंगों की भाँति होता रहता है। मौलिक विचारों का जन्म परिवेशगत गुणों से संपृक्त होते हैं। नवीन विचारों की अभिव्यक्ति हेतु नए शब्दों की आवश्यकता पड़ती है और यदि शब्द उसी परिवेश के हों जिस परिवेश में विचारों का जन्म होता है तो अभिव्यक्ति में मौलिकता बची रहती है और विचारों में ऐसी जादुई शक्ति उत्पन्न हो जाती है जो हमारे सम्पूर्ण संस्कार, सभ्यता, संस्कृति को समृद्धि प्रदान करने में सक्षम है। विचार और शब्द, शब्द और अर्थ के इस अन्योन्याश्रय संबंध पर विचार करने से हमें हमारे चिंतन, उसकी अभिव्यक्ति के माध्यम के साथ ही हमारे परिवेश, हमारी संस्कृति के बीच की एक अंतर्सम्बंध का पता चलता है।

प्रत्येक भाषा अपने ज्ञान और भाव की समृद्धि के कारण ग्रहण करने योग्य है परन्तु अपनी समग्र बौद्धिक तथा रागात्मक सत्ता के साथ जीना अपनी सांस्कृतिक भाषा के संदर्भ में ही सत्य है। हमारे विशाल देश की रूपात्मक विविधता उसकी सांस्कृतिक एकता उस देश की भाषा के साथ ही अग्रसारित होती है। इसीलिए कहा जाता है कि यदि किसी देश के नागरिकों के स्वाभिमान को मारना हो तो उसकी संस्कृति को मार दीजिए, यदि उस देश की संस्कृति को मारना हो तो उसकी चिंतन पद्धति को मार दीजिए और जब उस देश की चिंतन को शिथिल करना हो तो उसकी भाषा को मार दीजिए और यदि उस भाषा को मारना हो तो उसकी लिपि को मार दीजिए। तात्पर्य यह कि यदि किसी देश की सम्प्रभुता, स्वाभिमान, स्वतंत्रा को अक्षुण्ण रखना है तो उस देश की मिट्टी पानी की भाषा, उस देश के संस्कृति की भाषा, उस देश की आत्मा में रची बसी भाषा को खाद पानी डालकर पुष्ट रखना ही होगा।

कोरोना काल में मैंने एक शोध किया था। इस संदर्भ में उसका उल्लेख करना समीचीन होगा। भाषा संप्रेशन में विभिन्न मुद्राओं, चेहरे की अभिव्यक्ति, अनेक प्रकार के इशारों और आँखों की गति के महत्व हमें पता चलता है। मनुष्य अनजाने ही संवाद के क्रम में इस तरह के अनेक संकेत भेजता भी है और समझता भी है।

---

2. रघुवंश, कालिदास
3. कॉम्प्रिहेन्सिव इंग्लिश-हिन्दी डिक्सनरी[3]

विश्व में लगभग 6000 भाषाएँ बोली जाती हैं, लेकिन इनमें से कई भाषाएँ मृतप्राय हो गई हैं या विलीन हो रही हैं–। यूनेस्को के अनुसार, हर साल लगभग 10 भाषाएँ विलुप्त हो जाती हूँ।

खलील जिब्रान 6 जनवरी, 1883 दृ 10 अप्रेल, 1931) एक लेबनानी-अमेरिकी कलाकार, कवि तथा न्यूयॉर्क पेन लीग के लेखक थे। उनकी पंक्ति उद्धृत करना चाहूँगा -

Fear
It is said that before entering the sea
a river trembles with fear-
She looks back at the path she has traveled, from the peaks of the mountains,
the long winding road crossing forests and villages-
And in front of her,
she sees an ocean so vast] that to enter
there seems nothing more than to disappear forever-
But there is no other way- The river can not go back-
Nobody can go back-
To go back is impossible in eÛistence-
The river needs to take the risk
of entering the ocean.

वर्ष 2020 कई मायनों में अलग रहा। वर्ष के आरंभ में ही कोरोना महामारी ने मनुष्य को अक्रांत कर दिया। समस्त जीवन व्यापार जैसे उसकी गिरफ्त में आ गया। व्यक्ति ने व्यक्ति से दूरियाँ बना ली। दो गज की दूरी ने सामाजिक दूरियों का रूप धारण कर लिया। मनुष्य के मुँह पर मुखावरण (मास्क) लग गया। इसके साथ ही अभिव्यक्ति की अनेक भाव भंगिमाएँ उस मास्क में दबकर विलीन हो गये। हम जब सहज होकर मिलते हैं, तो हमारी कायभाषा (बाडी लैग्वेज) बहुत कुछ कहती है। संबंधों के निर्वहन में संवाद की और संवाद में भाव-भंगिमाओं की अहम भूमिका होती है। एक-एक स्पर्श का, एक-एक मुद्राओं का विशेश संवाद होता है। मनुष्य सामाजिक जीव है। अतः समाज से जुड़े रहना आवष्यक है। ऐसी स्थिति में हमें भाषा संप्रेषण में भाव-भंगिमाओं के महत्व को जानना भी जरूरी है। यह भी जानना जरूरी है कि समुचित भाव भंगिमाओं के अभाव में संपूर्ण संवाद कैसे किया जाय? भाव-भंगिमा विहीन अधूरे सवांद को पूर्ण करने में साहित्यिक संवाद की भूमिका अहम हो जाती है।

काय-भाषा किसी के रंग-ढंग, तौर-तरीके और उसकी मनःस्थिति के बारे में संकेत देती है। यथा हाथ हिलाना, उंगली से इशारा करना, छूना और नजर नीचे करके देखना ये सभी अमौखिक संचार के रूप हैं।

मनुष्यों की आकस्मिक रूप से एकत्र भीड़ मानव समूह की संज्ञा पा सकती है, परन्तु राष्ट्र की गरिमा पाने के लिए भूमि-खण्ड विषेश की ही नहीं एक संस्कृतिक विरासत और प्रबुद्ध मानव समाज की आवष्यकता होती है जो अपनी भाषा के बिना सम्भव नहीं है। 'राष्ट्र की बुनियाद, राष्ट्र की भाषा है। नदी, पहाड़ और समुद्र राष्ट्र नहीं बनाते। भाषा ही वह बंधन है, जो चिरकाल तक राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधे रहता है, और उसका शीराजा बिखरने नहीं देता।[4]

यही कारण है कि अंग्रेजी हुकूमत ने हमारे भीतर गुलामी मानसिकता भरने के लिए सबसे पहले हमारी शिक्षा पद्धति और हमारी भाषा पर प्रहार किया था। इस संदर्भ में 2 फरवरी 1835 को ब्रिटिष संसद में लार्ड मेकॉले के भाषण के इस अंष को हम उधृत करना चाहेंगे।-'"I have travelled across the length and breadth of

4. प्रेमचंद, कुलविचार

India and I have not seen one person who is a beggar, who is a thief- Such high moral values, people of such caliber, that I do not think we would ever conquer this country, unless we break the very backbone of this nation, which is her spiritual and cultural heritage, and therefore I propose that we replace her old and ancient education system, her culture for if the Indians think that all that is foreign and English is good and greater than their own, they will lose their selfesteem, their native culture and they will become what we want them, a truly dominated nation.[5]

लार्ड मैकाले का मानना था कि जब तक संस्कृति और भाषा के स्तर पर भारतवर्ष को गुलाम नहीं बनाया जाएगा, इस देश को हमेशा के लिए या पूरी तरह, गुलाम बनाना संभव नहीं होगा। लार्ड मैकाले की सोच थी कि हिंदुस्तानियों को अँग्रेजी भाषा के माध्यम से ही सही और व्यापक अर्थों में गुलाम बनाया जा सकता है।

उस समय बेल्जियम में फ्रांसीसी भाषा-भाषियों का वर्चस्व था। फ्लेमिश बोलना गँवारपन या पिछड़ेपन या जंगलीपन का लक्षण माना जाता था। फ्रांसीसी बेल्जियम के अभिजात-सत्ताधारी वर्ग की भाषा थी और इसी कारण सारे बेल्जियम की राजभाषा बना दी गई थी, लेकिन अधिकांश सामान्य जनता फ्लेमिश बोलती थी। इस स्थिति में थोपी गई भाषा के खिलाफ और अपनी मातृभाषा को सम्मान दिलाने के लिए सारे प्रदेश में जोरदार आंदोलन शुरु हुए, जिसका केंद्र लूवेन विश्वविद्यालय बना। उस समय कामिल बुलके न केवल इस आंदोलन में भाग लेने लगे, बल्कि वे इसके नेता के रूप में भी उभरकर सामने आए। आंदोलन में भाग लेने के लिए वे अपनी कक्षाओं तक को छोड़ने लगे। जब अनिवार्य विषय की कक्षा में अध्यापक फ्रांसीसी में व्याख्यान देने लगते, तब कामिल अपने सहपाठियों के साथ मिलकर जोर-जोर से फ्लेमिश गीत गाना शुरु कर देते। यह उनके प्रतिरोध का एक तरीका था। भाषा के प्रति जागरूकता अपने राष्ट्र और सांस्कृतिक विरासत के प्रति जागरूकता है।

हमें यहाँ यह समझना चाहिए कि हमारी चिंतन प्रक्रिया मौलिक भाषा से ही जन्म लेती है, आकार पाती है। फिर हम उसे चाहे जिस भाषा में रूपान्तरित कर अभिव्यक्त करें। किन्तु रूपान्तरण के क्रम में चिंतन की मौलिकता को बचाए रखना कठिन होता है। अतः हम अपने मिट्टी पानी की भाषा में जब अपनी बातों को रखते है तो वह अधिक प्रभावकारी होता है।

अपनी इस महायात्रा के मार्ग में हिन्दी को जो कुछ भी श्रेयस्कर और विशिष्ट मिला, हिन्दी ने ग्रहण करने में कभी संकोच नहीं किया। अंग्रेजी के अतिरिक्त हमने 'डच','पुर्तगाली', फ्रेंच, अरबी, फारसी, पश्तो आदि अनेक भाषाओं से शब्द ग्रहण कर शक्ति अर्जित की है। यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि हम 'डच' नहीं जानते 'पुर्तगाली' नहीं जानते, फ्रेंच नहीं जानते पर उसके शब्दों का बखूबी, फर्राटे से प्रयोग करते हैं। क्योंकि हम उसका व्यवहार करते चले आए हैं। और हमारी भाषा ने उसे पचा लिया है।

एक आकर्षक उदाहरण देना चाहूँगा। एक अनुच्छेद उद्धृत करता हूँ -"एक जुलाई को सुबह जब मैं अपने मित्र के मकान में हवन करने बैठा उस वक्त तेज बारिश हो रही थी किसी ने बावर्ची को टेलीफोन से सूचित किया कि स्काउट के कुछ शरारती बच्चे कमीज उतारकर रिक्शे के ऊपर बिना कारतूस की बंदूक लेकर मटरगश्ती कर रहे हैं, बाल्टी से टमाटर निकालकर रास्ते में फेंक रहे हैं और लोग चाय-तंबाकू का आनंद लेते हुये गुमटी से ये नजारा देख रहे हैं।"

- मित्र - रूसी
- टेलीफोन - यूनानी
- जुलाई - रोमन शब्द
- स्काउट - डच

5. A slice of British life on display, https://www.thehindu.com/features/friday-review/history-and-culture/A-slice-of-British-life-on-display/article16877049.ece

- सुबह, मकान - अरबी
- हवन - संस्कृत
- बारिश - फारसी
- बावर्ची, बंदूक - तर्किश
- मटरगश्ती - पश्तो
- बाल्टी - पुर्चुकी
- टमाटर - मैक्सिकन
- नजारा, शरारती एवं वक्त - उर्दू
- रास्ता, बच्चे - पर्जियन
- कमीज - पुर्तगाली
- रिक्शा - जापानी
- कारतूस - फ्रांसीसी
- तंबाकू - ब्राजील
- आनंद,गुमटी - हिन्दी
- चाय - चीनी

इस छोटे से अनुच्छेद में 19 विभिन्न भाषाओं के शब्द समाहित हैं। यह उदाहरण है कि भाषा किस प्रकार जीवन ऊर्जा ग्रहण करती है।

जिस प्रकार विभिन्न नदियों के मिलने से गंगा के ऊपर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ठीक उसी प्रकार विभिन्न भाषाओं के हिन्दी में मिलने से उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता बल्कि उसकी खूबसूरती में बढ़ोतरी होती है।

किसी अन्य भाषा के शब्दों को लेना हानिकारक नहीं है। वह तो भाषा की प्रकृति है। इस प्रवाह को यदि अवरुद्ध कर दिया जाय तो भाषा कुण्ठित हो जाएगी। परन्तु ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि उनकी संख्या इतनी न हो कि मिल्टन के शब्दों में, वे स्थानीय भाषा के अधीन रहकर काम करने के स्थान पर उसी को अधिकारच्युत करने का यत्न करने लगें। हिन्दी ने उदारता पूर्वक सभी स्रोतों से शब्द ग्रहण कर अपनी सामासिक शक्ति अर्जित की। शब्द भाषा की सबसे महत्वपूर्ण कड़ी है। शब्द अर्थवान होते हैं एवं पद तथा वाक्य में अर्थ देने वाले होते हैं। शब्द की परिभाषा देते हुए महर्षि पातंजलि ने कहा है- शब्द कर्ण से उपलब्ध, बुद्धि से ग्राह्य तथा प्रयोग से स्फुटित होने वाली आकाशवाणी ध्वनि है।

शब्द में अर्थतत्व निहित रहता है। 'प्रत्येक शब्द में अर्थ का कोई चित्रात्मक रूप या संकेत निहित रहता है। इस संकेत की प्रक्रिया मानसिक या बौद्धिक होती है। किसी वस्तु को देखकर उसकी चित्रात्मक रचना मानस-पटल पर अंकित होती है। और इस तरह शब्द और अर्थ में पारस्परिक संबंध स्थापित होता है। यह व्यक्ति, परिवेश, भौगोलिक स्थिति आदि पर निर्भर करता है। हर स्थिति में शब्द का कोई निश्चित अर्थ नहीं होता। शब्द के अर्थ का निर्धारण अनेक आधारों पर आश्रित है। यथा वक्ता, श्रोता, परिवेश, काल, बोलने की शैली, लहजा। वक्ता कैसे बोल रहा है? (काकु और चेष्टा), बोलने का प्रसंग आदि। उदाहरणार्थ एक दो वाक्यों को देखें - मैंने आपसे कहा था न।' 'बोलिए न चुप क्यों हैं?' आदि। आम तौर पर 'न' का अर्थ नहीं के अर्थ में हम ग्रहण करते हैं पर यहाँ 'न' का अर्थ निषेध नहीं है। इसीलिए संस्कृत में सर्वे सर्वार्थवाचकाः कहा गया है। अर्थात् सभी शब्द सभी अर्थों के वाचक होते हैं।

कहने वाले का तात्पर्य क्या है यह जानकर और उसके अनुसार हम अर्थ ग्रहण करते हैं। इस दृष्टि से विचारों के अभिव्यक्ति के लिए स्थानीय भाषा के शब्द अधिक उपयुक्त सिद्ध होते हैं क्योंकि उन शब्दों में हमारा परिवेश का गंध सन्निहित है। भारतीय चिंतन में पाणणी और पातंजलि काल की अवधरणा भी यही है। आज संसार के भाषाविद मानते हैं कि भाषा अध्ययन के क्षेत्र में पहला काम भारत में हुआ। ईसा से पाँच सदी पहले, यानी अब से ढाई हजार साल पहले पाणिनी ने अष्टाध्यायी में 3,959 नियम बना कर बड़ा काम किया।

भारत के अलावे विश्व के अनेक राष्ट्रों में हिन्दी अत्यधिक लोकप्रिय है। विश्व के अनेक राष्ट्रों के

विश्वविद्यालयों में आज हिन्दी की पढ़ाई हो रही है।

जिस प्रकार आवश्यकतानुसार भाषा में परिवर्तन होता है उसी प्रकार शब्द में भी परिवर्तन होता है और आवश्यकतानुसार नए शब्द स्थान ग्रहरण करते हैं। प्रचलित होते हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है कि 'यद्यपि शब्दों की बहुतायत से भाषा की पुष्टि होती है तथापि कई बातें ऐसी हैं जो उसकी सीमा स्थिर करती है। जिस जलवायु ने हमारे स्वभाव और रूप रंग को रचा उसी ने हमारे शब्दों को भी सृजा। ये शब्द हमारे जीवन के अंग समान हैं, इनमें से हर एक हमारी किसी न किसी मानसिक अवस्था का चित्र है। इनकी ध्वनि में भी हमारे लिए एक आकर्षण विशेष है।[6]

निर्मल वर्मा जी ने कहा है कि 'भाषा मनुष्य की देह का अदृश्य अंग है, जो उसे आत्मदृष्टि देता है। भाषा और आत्मबोध का यह संबंध मनुष्य को समस्त जीव जंतुओं से अलग, एक अद्वितीय श्रेणी में ला खड़ा कर देता है। किसी भी संस्कृति की पहचान महज उसके यथार्थ तक सीमित नहीं रहती, वह अपने स्वप्नों द्वारा भी अपनी विशेषता उजागर करती हैं, इसीलिए उनकी बनावट में भाषा का इतना महत्वपूर्ण योगदान है।'[7]

निर्मल वर्मा के मत में - 'जिसे संस्कृति का सत्य कहते हैं वह कुछ और नहीं, शब्दों में अन्तर्निहित अर्थों की संयोजित व्यवस्था है और जिसे हम यथार्थ कहते हैं वह इन्ही अर्थों की खिड़की से देखा गया वाह्य जगत है।[8]

इस पृष्टभूमि में जब हम विषय के दूसरे भाग पर विचार करते हैं जो है जो है भाषा के सामने संभावित चुनौतियाँ । सबसे बारी चुनौती है भाष के विलुप्त होने की।

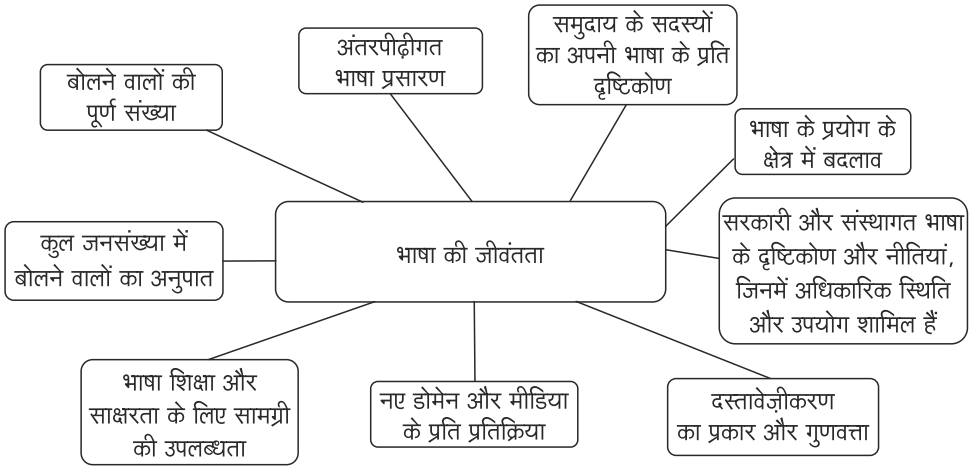

चित्र 1. यूनेस्को भाषा जीवन शक्ति मूल्यांकन (ब्रेनज़िंगर एट अल., 2003 से) पर आधारित एक दृश्य प्रतिनिधित्व।

एक भाषा तब खतरे में होती है जब वह विलुप्त होने की राह पर होती है। यहाँ यह भी जन लेना परम आवश्यक है कि पर्याप्त दस्तावेजीकरण के बिना, विलुप्त हो चुकी भाषा को कभी पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता।

इस संबंध में कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों की ओर आपका ध्यान दिलाना आवश्यक है।

- एक भाषा तब खतरे में होती है जब उसके बोलने वाले उसका इस्तेमाल करना बंद कर देते हैं, इसे कम होते संचार क्षेत्रों में इस्तेमाल करना बंद कर देते हैं, और इसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाना बंद कर देते हैं।

6. रामचन्द्र शुक्ल, भाषा की शक्त । 7. निर्मल वर्मा की साहित्य दृष्टि । 8. निर्मल वर्मा, पत्थर और बहता पानी

इसका मतलब है कि कोई नया वक्ता नहीं है, वयस्क या बच्चे उस भाषा के प्रति उदासीन हो जाते हैं ।

- एक प्रामाणिक आँकड़ा के अनुसार दुनिया के लगभग 97% लोग दुनिया की लगभग 4% भाषाएँ बोलते हैं। और इसके विपरीत, दुनिया की लगभग 96% भाषाएँ दुनिया के लगभग 3% लोगों द्वारा बोली जाती हैं। (बर्नार्ड 1996 : 142)।
- इस प्रकार, दुनिया की अधिकांश भाषाई विविधता बहुत कम लोगों के नेतृत्व में है। यहाँ तक कि कई हजारों बोलने वाली भाषाएँ भी अब बच्चे नहीं सीख पा रहे हैं हमारा अनुमान है कि, दुनिया के अधिकांश क्षेत्रों में, 21वीं सदी के अंत तक लगभग 90% भाषाओं को प्रमुख भाषाओं द्वारा प्रतिस्थापित किया जा सकता है।
- इस प्रकार, विश्व की अधिकांश भाषायी विविधता बहुत ही कम लोगों के नियंत्रण में है। यहां तक कि हजारों बोलने वाली भाषाएं भी अब बच्चों द्वारा सीखी नहीं जा रही हैं, विश्व की 06 हजार से अधिक भाषाओं में से कम से कम 50% के बोलने वाले कम होते जा रहे हैं।
- भाषा का संकट सैन्य, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक कारण।
- शैक्षिक अधीनता जैसी बाहरी ताकतों का परिणाम हो सकता है,
- यह आंतरिक ताकतों के कारण हो सकता है, जैसे कि किसी समुदाय का अपनी भाषा के प्रति नकारात्मक रवैया।

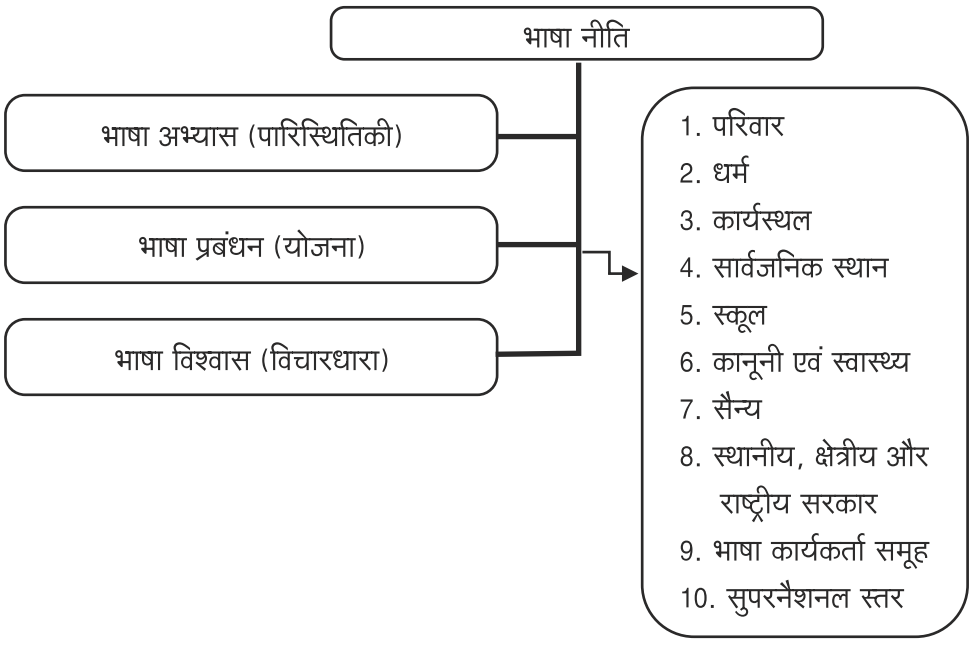

भाषा नीति और प्रबंधन दृष्टिकोणों को अंतर्संबंध (स्पोलस्की 2004, 2009 पर आधारित)

9. Document submitted to the International Expert Meeting on UNESCO Programme Safeguarding of Endangered Languages Paris, 10–12 March 2003
10. https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AE%E0%A5%83%E0%A4%A4_%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B7%E0%A4%BE

- आंतरिक दबावों का स्रोत अक्सर बाहरी होता है, और दोनों ही भाषाई और सांस्कृतिक परंपराओं के अंतर-पीढ़ीगत संचरण को रोकते हैं।
- कई स्वदेशी लोग, अपनी वंचित सामाजिक स्थिति को अपनी संस्कृति से जोड़ते हुए, यह मानने लगे हैं कि उनकी भाषाएँ प्रयोग करने लायक नहीं है।
- भाषा के कारण भेदभाव पर काबू पाने के इए अपनी आजीविका सुरक्षित करने के लिए और सामाजिक गतिशीलता बढ़ाने के लिए अथवा वैश्विक बाजार के प्रभाव में अपने को बिना किसी भेद भाव के आत्मसात करने की उम्मीद में अपनी भाषाओं और संस्कृतियों को त्याग देते हैं।
- सबसे महत्वपूर्ण यह है कि प्रत्येक भाषा के विलुप्त होने से अद्वितीय सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और पारिस्थितिक ज्ञान का अपूरणीय नुकसान होता है।

हमे यह जान लेना चाहिए कि प्रत्येक भाषा दुनिया के मानवीय अनुभव की एक अनूठी अभिव्यक्ति है। वह किसी से कमतर नहीं है। वह अपने परिवेशगत आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम है। अतः यह समझना आवश्यक हो जाता है कि किसी एक भाषा का ज्ञान भविष्य के मूलभूत प्रश्नों के उत्तर देने की कुंजी हो सकता है। किन्तु हर बार जब कोई भाषा खत्म होती है, तो हमारे पास मानव भाषा की संरचना और कार्य, मानव प्रागैतिहास और दुनिया के विविध पारिस्थितिकी तंत्रों की पद्धति (patern) को समझने के लिए सबूत भी समाप्त होते जाते हैं।

सबसे बढ़कर यह कि इन भाषाओं के बोलने वाले अपनी भाषा के खत्म होने को अपनी मूल जातीय और सांस्कृतिक पहचान के खत्म होने के रूप में अनुभव करते हैं। (बर्नार्ड 1992, हेल 1998)।[9]

अपनी पहचान नष्ट होने की पीड़ा को महसूस करना हमें भीतर तक आन्दोलित करता है। वह मनुष्य और समाज दोनों को प्रभावित करता है। जिस भाषा के कोई बोलने वाले या लिखने वाले व्यक्ति न हो उसे विलुप्त भाषा मान लिया जाता है। इस तरह की भाषाओं को मृत भाषा भी कहा जाता है।

यहाँ मैं उदाहरण देता हूँ -

अमेरिकी भाषाविद् सारा ग्रे.थॉमसन और टेरेंस कौफमैन ने 1991 में भाषा परिवर्तन पर अध्ययन किया था, जिसमें उन्होंने कहा कि भाषा के विलुप्ति के तीन मुख्य कारण है।

- पहला और आम कारण, किसी भाषा के बोलने वालों द्वारा अचानक अपने भाषा को छोड़ कर दूसरे प्रमुख भाषा को सीखना।
- दूसरा कारण, कई पीढ़ियों द्वारा धीरे धीरे भाषा की मौत होना।
- तीसरा और सबसे दुर्लभ कारण, किसी भाषा के व्याकरण और शब्द लगभग या पूरी तरह से बदल जायें, अर्थात किसी प्रमुख भाषा से व्याकरण और शब्दों को अत्यधिक उधार लेने के साथ साथ उस भाषा के कई मातृभाषी उस भाषा को अनावश्यक शब्दों और व्याकरण के नियमों के उधार लेने से बचाने का प्रयास करते हैं। इस कारण उस भाषा को बोलने वाले, उस प्रमुख भाषा को बोलना शुरू कर देते हैं और उनकी मातृभाषा को छोड़ देते हैं।[10]

यूनेस्को के अनुसार सन् 2100 तक दुनिया की लगभग 6000 भाषाएं लुप्त हो जाएंगी। उसके वर्गीकरण के अनुसार 10000 से कम लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा को 'मृतप्राय' और 1000 से कम बोली जाने वाली भाषा को 'मृतक भाषा' (डैड लैंग्वेज) माना जाता है। इस आकलन से भारत की अनेक भाषाएं लुप्तप्राय हैं, उन्हें मृतप्राय कहा जा रहा है। हिमाचल की बघाटी बोली-भाषा को मृतप्राय की श्रेणी में रखा जा रहा है।[11]

11. https://www.divyahimachal.com/2021/02/is-baghati-bid-dead/

- लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया के अनुसार ग्रियर्सन (1895-96) ने बघाटी को प्रमुख बोली मानकर शिमला से नीचे की ठकुराइयों बाघली, कुठाड़ी, महलोग और कुनिहारी को इसकी उपबोलियां माना था। बघाटी 36 वर्गमील (1901 के गजेटियर के अनुसार) में फैली रियासत थी, जिसमें जनश्रुतियों के अनुसार 22 घाट थे।
- नियमों की कठोरता किसी भी भाषा को मृतप्राय करने लगती है। यहाँ कुछ उदाहरण हैं :

उत्तरी भारत

1. अंडमानी भाषाएँ (अंडमान और निकोबार द्वीप समूह) : अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में बोली जाने वाली भाषाएँ।
2. सेंटिनेली भाषा (अंडमान और निकोबार द्वीप समूह) : अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में बोली जाने वाली भाषा।
3. थारू भाषा (उत्तर प्रदेश और नेपाल) : उत्तर प्रदेश और नेपाल में बोली जाने वाली भाषा।
4. बोडो भाषा (असम) : असम में बोली जाने वाली भाषा.

पूर्वी भारत

1. संताली भाषा (झारखंड, पश्चिम बंगाल और ओडिशा) : झारखंड, पश्चिम बंगाल और ओडिशा में बोली जाने वाली भाषा।
2. मुंडारी भाषा (झारखंड और पश्चिम बंगाल) : झारखंड और पश्चिम बंगाल में बोली जाने वाली भाषा।
3. हो भाषा (झारखंड, पश्चिम बंगाल और ओडिशा) : झारखंड, पश्चिम बंगाल और ओडिशा में बोली जाने वाली भाषा।
4. कुरुख भाषा (झारखंड, पश्चिम बंगाल और ओडिशा) : झारखंड, पश्चिम बंगाल और ओडिशा में बोली जाने वाली भाषा.

दक्षिणी भारत

1. तोड़ा भाषा (तमिलनाडु) : तमिलनाडु में बोली जाने वाली भाषा।
2. कोटा भाषा (तमिलनाडु) : तमिलनाडु में बोली जाने वाली भाषा।
3. इरुला भाषा (तमिलनाडु और केरल) : तमिलनाडु और केरल में बोली जाने वाली भाषा।
4. कुरुम्बा भाषा (तमिलनाडु और केरल) : तमिलनाडु और केरल में बोली जाने वाली भाषा.

पश्चिमी भारत

1. पारसी भाषा (गुजरात और महाराष्ट्र) : गुजरात और महाराष्ट्र में बोली जाने वाली भाषा।
2. कच्छी भाषा (गुजरात) : गुजरात में बोली जाने वाली भाषा।
3. भीली भाषा (गुजरात, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश) : गुजरात, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में बोली जाने वाली भाषा।
4. गोंडी भाषा (मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़) : मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ में बोली जाने वाली भाषा।

यह सूची भारत की विलुप्त होने वाली भाषाओं की एक छोटी सी झलक है। विलुप्त होने वाली भाषाओं की संख्या बहुत अधिक है, और यह एक गंभीर समस्या है जिसे हल करने के लिए हमें तत्काल कदम उठाने होंगे।

वैश्विक स्तर पर यदि देखें

विश्व में कई भाषाएँ विलुप्त होने के कगार पर हैं। यूनेस्को के अनुसार, लगभग 43% भाषाएँ विलुप्त होने के खतरे में हैं। यहाँ कुछ उदाहरण हैं :

एशिया

1. 'अंडमानी भाषाएँ (भारत)' : अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में बोली जाने वाली भाषाएँ।
2. 'जेराई भाषा (वियतनाम)' : वियतनाम के मध्य उच्चभूमि में बोली जाने वाली भाषा।
3. 'अयमार भाषा (नेपाल)' : नेपाल के पश्चिमी भाग में बोली जाने वाली भाषा।
4. 'कोरियाई भाषा की बोलियाँ (उत्तर कोरिया और दक्षिण कोरिया)' : कोरियाई भाषा की कई बोलियाँ विलुप्त होने के खतरे में हैं.

अफ्रीका

1. 'कूंग भाषा (नामीबिया और बोत्सवाना)' : नामीबिया और बोत्सवाना में बोली जाने वाली भाषा।
2. 'सांडावे भाषा (तंजानिया)' : तंजानिया में बोली जाने वाली भाषा।
3. 'हाद्ज़ा भाषा (तंजानिया)' : तंजानिया में बोली जाने वाली भाषा।
4. 'बुशमैन भाषाएँ (नामीबिया, बोत्सवाना और दक्षिण अफ्रीका)' : नामीबिया, बोत्सवाना और दक्षिण अफ्रीका में बोली जाने वाली भाषाएँ.

यूरोप

1. 'बास्क भाषा (स्पेन और फ्रांस)' : स्पेन और फ्रांस में बोली जाने वाली भाषा।
2. 'कॉर्निश भाषा (इंग्लैंड)' : इंग्लैंड में बोली जाने वाली भाषा।
3. 'मैनक्स भाषा (आइल ऑफ मैन)' : आइल ऑफ मैन में बोली जाने वाली भाषा।
4. 'स्कॉट्स गेलिक भाषा (स्कॉटलैंड)' : स्कॉटलैंड में बोली जाने वाली भाषा।

उत्तरी अमेरिका

1. 'नावाजो भाषा (संयुक्त राज्य अमेरिका)' : संयुक्त राज्य अमेरिका में बोली जाने वाली भाषा।
2. 'चेरोकी भाषा (संयुक्त राज्य अमेरिका)' : संयुक्त राज्य अमेरिका में बोली जाने वाली भाषा।
3. 'इनुक्टिटुट भाषा (कनाडा)' : कनाडा में बोली जाने वाली भाषा।
4. 'हवाई भाषा (संयुक्त राज्य अमेरिका)' : संयुक्त राज्य अमेरिका में बोली जाने वाली भाषा।

यह सूची विश्व की विलुप्त होने वाली भाषाओं की एक छोटी सी झलक है। विलुप्त होने वाली भाषाओं की संख्या बहुत अधिक है, और यह एक गंभीर समस्या है जिसे हल करने के लिए हमें तत्काल कदम उठाने होंगे।

इस प्रकट भाषाओं के विलुप्त होने के कई कारण हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख कारण निम्न प्रकार हैं :

- **आर्थिक और सांस्कृतिक वैश्वीकरण :** वैश्वीकरण के कारण, कई छोटी भाषाएँ बड़ी भाषाओं के सामने अस्तित्व की लड़ाई हार जाती हैं।
- **शिक्षा प्रणाली और मीडिया :** शिक्षा प्रणाली और मीडिया में बड़ी भाषाओं का प्रयोग अधिक होता है, जिससे छोटी भाषाएँ पीछे रह जाती हैं।
- **उपनिवेशवाद :** उपनिवेशवाद और लूटपाट के कारण, कई भाषाएँ विलुप्त हो गई हैं।

इस संदर्भ में मैं भवानी प्रसाद मिश्र की कविता की एक महत्वपूर्ण और लोकप्रिय पंक्ति उद्धृत करते हुए इस आलेख को निष्कर्ष तक ले जाना चाहूँगा -

कलम अपनी साध
और मन की बात बिलकुल ठीक कह एकाध
यह कि तेरी-भर न हो तो कह
और बहते बने सादे ढंग से तो बह
जिस तरह हम बोलते हैं, उस तरह तू लिख
और इसके बाद भी हमसे बड़ा तू दिख।

यदि भाषा में प्रवाह है तो समझ लीजिए भाषा जीवित है। क्योंकि भाषा बहते हुए जल की तरह है। जैसे सरिता कल -कल ध्वनि करते हुए बहती रहती है। रास्ते में जो कुछ भी उसे ग्राह्म मिलता है ग्रहण करती हुई चलती है। वही प्रकृति भाषा का भी है। यदि भाषा का प्रवाह रुक गया तो उसकी भी वही गति होती है जो रुके हुए पानी का होता है। उसमें गंध आ जाता है, वह सड़ जाता है। और धीरे-धीरे विलीन हो जाता है।

यावेन शब्दान वयमालपामो
यावेन चार्थान वयमुल्लिखामः
तैरेव विन्यासविषेषभङ्ग्यै
सम्मोहयंते कवयो जगत्री।।

"जो शब्द हम प्रतिदिन बोलते है, जिन अर्थों का हम उल्लेख करते है उन्ही शब्दों और अर्थो का विशिष्ट भावभंगी से विन्यास करके कबि जगत् को मोह लेते हैं।"

VEDIC MATHEMATICS

Prof. Ratna Amrit
HoD, Dept. of History
A.N. College, Patna

The mathematical discoveries and contributions of the Vedic period led to the growth and development of mathematics and had a lasting impact on Indian mathematics and beyond, influencing the development of mathematics in middle-east, Europe and other parts of Asia.

VEDIC people evinced special interest in two particular branches of mathematics, viz. geometry *(sulva)* and astronomy *(jyotisa)*. Sacrifice *(yajna)* was their prime religious avocation. Each sacrifice had to be performed on an altar of prescribed size and shape. They were very strict regarding this and thought that even a slight irregularity in the form and size of the altar would nullify the object of the whole ritual and might even lead to an adverse effect. So the greatest care was taken to have the right shape and size of the sacrificial altar. Thus originated problems of geometry and consequently the science of geometry. The study of astronomy began and developed chiefly out of the necessity for fixing the proper time for the sacrifice. This origin of the sciences as an aid to religion is not at all unnatural, for it is generally found that the interest of a people in a particular branch of knowledge, in all times, has been aroused and guided by specific reasons. In the case of the Vedic people that specific reason was religious. In the course of time, however, those sciences outgrew their original purposes and came to be developed for their own sake.

The *Chandogya Upanishad* mentions among other sciences the science of numbers *(rasi)*. In the *Mundaka Upanishad* knowledge is classified as superior *(para)* and inferior *(apara)*. In the second category is included the study of astronomy *(jyotisa)*. In the Mahabharata we come across a reference to the science of stellar motion *(nakshatragati)*. The term *"ganita"*, meaning the science of calculation, also occurs copiously in Vedic literature. The *Vedanga Jyotiṣha* gives it the highest place of honour amongst all the sciences which form the Vedanga. Thus it was said: 'As are the crests on the heads of peacocks, as are the gems on the hoods of snakes, so is the ganita at the top of the sciences known as the Vedanga." At that remote period ganita included astronomy, arithmetic and algebra, but not geometry. Geometry then belonged to a different group of sciences known as *kalpa.*

Available sources of Vedic mathematics are very poor. Almost all the works on the subject have perished. At present we find only a very short treatise on Vedic astronomy in three recensions, namely, the *Arca Jyotiṣa, Yājuṣa Jyotisa* and *Atharva Jyotisa.* There are six small treatises on Vedic geometry belonging to the six schools of the Veda. Thus, for an insight into Vedic mathematics we have to depend more on secondary sources such as the literary works.

Astronomy

There is considerable material on astronomy in the Vedic Samhitas. But everything is shrouded in such mystic expressions and allegorical legends that it has now become extremely difficult to discern their proper significance. Hence it is not strange that modern scholars differ widely in evaluating the astronomical achievements of the early Vedic people. Much progress seems, however, to have been made in the Brahmana period when astronomy came to be regarded as a separate science called naksatra-vidya (the science of stars). An astronomer was called a *naksatra-darśa* (star-observer) or *ganaka* (calculator).

According to *the Rg-Veda,* the universe comprises of *prthivi* (earth), *antariksa* (sky, literally meaning the region below the stars'), and *div* or *dyaus* (heaven). The distance of the heaven from the earth has been stated differently in various works. The Rg-Veda gives it as ten times the extent of the earth, the *Atharva-Veda* as a thousand days' journey for the sun-bird, the *Aitareya Brahmana* as a thousand days' journey for a horse, and the *Pancavimsa Brahmana* as the distance equivalent to a thousand cows, one standing on the other, and again as a thousand leagues, besides the two preceding estimates. All these are evidently figurative expressions indicating that the extent of the universe is infinite.

There is speculation in the *Rg-Veda* about the extent of the earth. It appears from passages therein that the earth was considered to be spherical in shape and suspended freely in the air. The *Satapatha Brahmaṇa* describes it expressly as *parimandala* (globe or sphere). There is evidence in the Rg-Veda of the knowledge of the axial rotation and annual revolution of the earth. It was known that these motions are caused by the sun.

According to the *Rg-Veda,* there is only one sun, which is the maker of the day and night, twilight, month, and year. It is the cause of the seasons. It has seven rays, which are clearly the seven colours of the sun's rays. The sun is the cause of winds, says the Aitareya Brahmana. It states further: "The sun never sets or rises. When people think the sun is setting, it is not so; for it only changes about after reaching the end of the day, making night below and day to what is on the other side. Then when people think it rises in the morning, it only shifts itself about after reaching the end of the night, and makes day below and night to what is on the other side. In fact it never does set at all.' This theory occurs probably in the *Rg-Veda* also. The sun holds the earth and other heavenly bodies in their respective places by its mysterious power.

In the *Rig-Veda,* Varuṇa is stated to have constructed a broad path for the sun called the path of the rta. This evidently refers to the zodiacal belt. Ludwig thinks that the *Rg-Veda* mentions the inclinations of the ecliptic with the equator and the axis of the earth. The apparent annual course of the sun is divided into two halves, the *uttarayana* when the sun goes northwards and the *daksinayana* when it goes southwards.)

The *Rg-Veda* says that the moon shines by the borrowed light of the sun. The phases of the moon and their relation to the sun were fully understood. Five planets seem to have been known. The planets *Sukra* or Vena (Venus) and *Manthin* are

mentioned by name.

It appears from a passage in the *Taittiriya Brahmaṇa* that Vedic astronomers ascertained the motion of the sun by observing with the naked eye the nearest visible stars rising and setting with the sun from day to day. Observations of several solar eclipses are mentioned in the *Rg-Veda*, a passage of which states that Atri observed a total eclipse of the sun caused by its being covered by Svarbhanu, the darkening demon There is also mention of lunar eclipses In the Vedic Samhitas the seasons in a year are generally stated to be five in number, namely, *Vasanta* (spring), *Grisma* (summer), *Varsa* (rains), *Sarat* (autumn), and *Hemanta-Sisira* (winter). There is clear evidence in the Samhitas and Brahmaṇas of the knowledge of the precession of the equinox.

Geometry

Sulva (geometry) was used in Vedic times to solve propositions about the construction of various rectilinear figures; combination, transformation, and application of areas; mensuration of areas and volumes; squaring of the circle and vice versa. One theorem which was of great importance to them on account of its various applications is the theorem of the square of the diagonal. It has been enunciated by *Baudhayana* in his *Sulvasutra* thus : The diagonal of a rectangle produces both (areas) which its length and breadth produce separately. That is, the square described on the diagonal of a rectangle has an area equal to the sum of the areas of the squares described on its two sides. This theorem has been given in almost identical terms in other Vedic texts like the *Apastamba Sulvasutra* and *Katyayana Sulvasutra.* The corresponding theorem for the square has been given by *Baudhayana* separately, though it is in fact a particular case of the former: "The diagonal of a square produces an area twice as much. That is to say, the area of the square described on the diagonal of a square is double its area.

The theorem of the square of the diagonal is now generally credited to Pythagoras, though some doubt exists in the matter. No really trustworthy evidence exists that it was actually discovered by him.

Geometrical Algebra

Vedic geometry contains the seeds of Hindu geometrical algebra, whose developed form and influence we find as late as in the *Bijaganit*a of *Bhaskara* II. It has a solution of the complete quadratic equation: $ax^2+bx=c$.

Arithmetic

Sources of information on Vedic arithmetic being very meagre, it is difficult to define the topics for discussion and their scope of treatment. One problem that appears to have attracted the attention and interest of Vedic Hindus was to divide 1,000 into 3 equal parts.

But a passage in the *Satapatha Brahmaṇa* seems clearly to belie all such speculations, saying: 'When *Indra* and *Visnu* divided a thousand into three parts, one remained in excess, and that they caused to be reproduced into three parts. Hence even now if any one attempts to divide a thousand by three, one remains over. In any case it

was a mathematical exercise.

From the time of the Vedas the Hindus adopted the decimal scale of numeration. They coined separate names for the notational places corresponding to 1, 10, 10^2, 10^3, 10^4, 10^5, etc., and any number, however big, used to be expressed in terms of them. But in expressing a number greater than 10^3 *(sahasra)* it was more usual to follow a centesimal scale.

The whole vocabulary of the number-names of the Vedic Hindus consisted mainly of thirty fundamental terms which can be divided into the following three groups:

(i) eka, doi, tri, catur, panca, sat, sapta, asta, and nava;

(ii) dala, vimsati, trimsat, catvarimlat, pancalat, sasti, suptati, afiti, and navati;

(iii) sata, sahasra, ayuta, niyuta, prayuta, koti, arbuda, nyarbuda, samudra, madhya, anta, and parardha.

In (i) each term stands for a number which is greater by unity than the number denoted by the term preceding it; in (ii) each term stands for a number greater by 10 than the preceding term; and in (iii) each term is numerically 10 times as great as the preceding term.

To conclude, the mathematical discoveries and contributions of the Vedic period led to the growth and development of mathematics and had a lasting impact on Indian mathematics and beyond, influencing the development of mathematics in middle-east, Europe and other parts of Asia.

References

1. B. Datta, "The Scope and Development of the Hindu Gapita, The Indian Historical Quarterly, Vol. V (Calcutta, 1929), pp. 479-512
2. Tarakeswar Bhattacharya's article in Bharatavarja, Vol. VII, Pt. I (1326 B.S.), pp. 729ff.;
3. Ekendranath Ghosh 'Studies on Rig-Vedic Deities-Astronomical and Meteorological, Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. XXVIII (1932), p. 11
4. Ekendranath Ghosh Was the Equation of Time Known to the Vedic Sages?", Indian Historical Quarterly, Vol. V (1929), pp. 136-37.
5. A. A. Macdonell and A. B. Keith, Vedic Index of Names and Subjects, Vol. II (London, 1912), p. 468.
6. B. G. Tilak, The Orion or Researches into the Antiquity of the Vedas (Poona, 1972), pp. 22-26.
7. Dhirendranath Mookerjee, 'Notes on Indian Astronomy', Journal of the Department of Letters, Vol. V (Calcutta University, 1921), pp. 277-302

APPLICATIONS OF GRAPH THEORY IN CLOUD COMPUTING

Prof. Shambhu Kr. Mishra
P.G. Department of Mathematics
A.N. College, Patna

Graph theory can be used to analyze user preferences and build recommender systems for cloud services, suggesting relevant applications or resources based on user behavior and history.

Graph theory plays a crucial role in various aspects of cloud computing, articularly in network modelling, resource provisioning, and security. It helps in nderstanding complex network structures, optimizing resource allocation, and identifying potential vulnerabilities. Graph theory is applied in cloud computing as

Resource Provisioning and Management:

Cloud data centers, with their interconnected systems, can be represented as graphs, where nodes represent servers, VMs, or other resources, and edges represent communication links or dependencies.

Graph theory provides algorithms for finding optimal placements of resources, ensuring efficient resource utilization and minimizing conflicts. Graph coloring and other graph algorithms can be used to schedule tasks and balance the load across multiple servers or VMs, preventing overload and ensuring efficient execution.

Network Analysis and Routing:

Graph theory helps in modeling and analyzing the topology of cloud networks, allowing for the identification of bottlenecks, optimizing data transmission paths, and ensuring reliable communication. Algorithms like Dijkstra's or A* can be used to find the shortest paths for data transmission within the cloud network, minimizing latency and optimizing data transfer speeds. It can be used to analyze network security by identifying potential attack vectors, visualizing network topologies, and detecting malicious activity.

Cloud Security:

Graph theory helps in modeling and optimizing access control policies, ensuring secure and efficient management of permissions and preventing unauthorized access. By representing network assets, users, and potential threats as nodes and edges in a graph, security analysts can model and analyze potential attack paths and vulnerabilities.

Graph theory can be used to analyze user preferences and build recommender systems for cloud services, suggesting relevant applications or resources based on user behavior and history. Graph databases, which are based on graph theory, are increasingly used for storing and querying complex data in the cloud, such as social networks, knowledge graphs, and interconnected data sources.

In essence, graph theory provides a powerful and versatile framework for analyzing and optimizing complex systems in cloud computing, enabling efficient resource management, secure networks, and intelligent applications.

SHANTI SWARUP BHATNAGAR
Father of Research Laboratories

Prof. Anil Kumar Singh
P.G. Dept. of Chemistry
A.N. College, Patna

A man who brought into existence the Council of Scientific and Industrial Research that has today grown to become one of the largest networks of scientific laboratories around the world.

Scientists are very much interested in inventions, and they are very pleased when their inventions find Direct utility in the service of mankind. Tale of a towering personality who moulded his own destiny and transcended his Circumstances. A Scientist who was a poet at heart, a wonderful husband and father, the guru who led from the front a dreamer of dreams, an indefatigable worker, and a Karmyogi par excellence. An architect of newly independent India's dream of gaining a firm footing in the arena of science and technology. A man who brought into existence the Council of Scientific and Industrial Research that has today grown to become one of the largest networks of scientific laboratories around the world.

Sir Shanti Swarup Bhatnagar
OBE, FNI, FASC, FRS, FRIC, Fint

BORN : 21 February 1894 Bhera, Punjab Province, British India (Now in Punjab, Pakistan)

Sir Shanti Swarup Bhatnagar (21 February 1894 - 1 January 1955) was an Indian colloid chemist, academic and scientific administrator, the first director-general of the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR), Bhatnagar is revered as the Father of Research Laboratories in India. He was also the first Chairman of the University Grants Commission (UGC)

Family Background : Dr Bhatnagar was a bright student from a Hindu Kayastha family. His father Parmeshwari Sahay Bhatnagar died when he was only eight months old. He spent his childhood in his maternal grandparents' home. His maternal grandfather was an engineer who helped him develop a liking for science and engineering.

Education: Elementary education from Dayanand Anglo Vedic High school, Sikandrabad (Bulandshahr) . In 1911, he joined the newly established Dayal Singh College, Lahore (Which was later moved to New Delhi, India, after independence),

where he became an active member of the Saraswati Stage Society and earned a good reputation as an actor. He wrote an Urdu one-act play called Karamati (Wonder Worker), the English translation of which earned him the Saraswati Stage Society prize and medal for the best play of the year in 1912. He passed the Intermediate Examination of the Punjab University in 1913 in first class and joined he Forman Christian College, where obtained a B.Sc in Physics in 1916 and M.Sc in Chemistry in 1919.

Research: He joined the University College, London under chemistry professor Frederick G. Donnan. He earned his Doctorate in Science in 1921. During his research work, he was awarded a scholarship by the Dayal Singh Trust and supported by the British Department of Scientific and Industrial Research with a fellowship of £ 250 a year.

Teaching Career : Shanti Swarup Bhatnagar was a University professor for nineteen years from 1921 until 1940. In 1921, he joined the newly established Banaras Hindu University (BHU) as a professor of chemistry, where he remained for three years. He wrote the Kulgeet or the University anthem. Justice N.H Bhagwati, the then Vice-Chanceller of BHU said: "Many of you perhaps do not know that besides being an eminent scientist, Professor Bhatnagar was a Hindi poet of repute and that during his stay in Banaras, he composed the 'Kulgeet' of the university. Professor Bhatnagar is remembered with reverence in this University and will continue to be so until this University exists.' He then moved to Lahore as a professor of Physical Chemistry and Director of the University Chemical Laboratories of the University of the Punjab. This portion of his career was the most active period of his life in original scientific work. His research interests included emulsions, colloids, and industrial chemistry, but his fundamental contribution was in the field of magneto-chemistry, the use of magnetism for the study of chemical reactions.

In 1928 he and K.N Mathur jointly developed the Bhatnagar-Mathur magnetic interference Balance, which was one of the most sensitive instruments at the time for measuring magnetic properties. It was exhibited at the Royal Society Soiree in 1931 and it was marketed by Messer Adam Hilger and Co. London. First at the Banaras Hindu University and then at the Punjab University, he had a reputation as a teacher. It was as a teacher that he was the happiest. His research contribution in the areas of magneto chemistry and physical chemistry of emulsion was widely recognised.

Professional Career : He developed the process for converting the peelings of sugarcane (bagasse) into food-cake for Cattle. This was done for Sir Ganga Ram, the Grand Old Man of Punjab. He also solved industrial problems for Delhi Cloth & General Mills, J.K Mills Ltd of Kanpur, Ganesh Flour Mills Ltd. Of Kanpur, Ganesh Flour Mills Ltd. Of Layallapur, Tata Oil Mills Ltd. Of Bombay, and Steel Brothers and Co. Ltd of India. Shanti Swarup Bhatnagar improved the procedure for drilling crude oil using colloidal chemistry. This was done for Allock Oil Company at Rawalpindi (Representative of

Messers Steel Brothers and Co, London). M/S Steel Brothers was so pleased that they offered Bhatnagar a sum of Rs 1,50,000/- for research work on any subject related to petroleum. The fund was placed through the university and the university established the Department of Petroleum Research under the guidance of Shanti Swarup Bhatnagar. Investigations carried out under this collaborative scheme included characterisation of waxes, increasing the flame height of Kerosene and utilisation of waste products of the vegetable oil and mineral oil industries.

Meghnad Saha wrote to Shanti Swarup Bhatnagar in 1934 saying, "you have hereby raised the status of the university teachers in the estimation of the public, not to speak of the benefit conferred on your Alama Mater"

Establishment of CSIR:

By the effort of Arcot Ramaswamy Mudaliar, the Board of Scientific and Industrial Research (BSIR) was formed on 1 April 1940 for a period of two years. Shanti Swarup Bhatnagar as a leading scientist of the time, was appointed as the director, and Mudaliar become the chairman. The BSIR had an annual budget of Rs. 5 lakhs, which was placed under the Department of Commerce. Shanti Swarup Bhatnagar persuaded the government to set up an Industrial Research Utilisation Committee (IRUC) in early 1941 for further investment into industrial research.

Mudaliar also won the demand for an establishment of Industrial Research Fund and that it should have an annual grant of Rs 1 million for a period of five years at the Central Assembly in Delhi at its session on 14 November 1941. These finally led to the constitution of the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR) as an autonomous body, which came into operation on 28 September 1942.

NEP 2020 IMPLEMENTATION IN BIHAR'S HIGHER EDUCATION
A DYNAMIC OVERVIEW

Prof. Dr. Rekha Kumari
Former Director Higher Education, Bihar
Professor of Zoology,
A.N. College

The Directorate of Higher Education, in collaboration with other bodies, is striving to overcome these hurdles and create a robust, inclusive, and future-ready higher education system in Bihar, aligning with the vision of NEP 2020 and placing a strong emphasis on practical, career-oriented learning through apprenticeships.

This abstract Dynamically outlines the ongoing integration of the National Education Policy (NEP) 2020 within Bihar's higher education ecosystem, specifically focusing on its operationalization within colleges and universities in Patna, Bihar, India. The analysis dissects the key mechanisms driving this transformation, including the restructuring of academic programs towards multidisciplinary frameworks, the deployment of the Academic Bank of Credit (ABC) as a credit accumulation and transfer mechanism, and the systemic shift towards a four-year undergraduate degree structure. Furthermore, it examines the institutional mechanisms being employed to foster research and innovation, alongside the procedural incorporation of vocational education pathways. Specific operational examples, such as curriculum redesign protocols within state universities, the strategic adaptation models adopted by the Central University of South Bihar (CUSB) and Patna Women's College, and the regulatory mechanisms enacted by the Directorate of Higher Education, Bihar Government are highlighted. The abstract also acknowledges the inherent mechanistic challenges in large-scale policy implementation, such as the calibration of curriculum frameworks, the upskilling mechanisms for faculty adaptation, infrastructural capacity building protocols, and the need for synchronized inter-institutional workflows. Ultimately, this dynamic overview aims to provide a clear understanding of the processes and operational dynamics involved in the ongoing implementation of NEP 2020 within Bihar's higher education sector, emphasizing the functional aspects of this systemic change.

Introduction:

Bihar has a long and rich history in higher education, dating back to ancient times with

renowned centers of learning like Nalanda and Vikramshila Universities. While the state's higher education system has faced challenges in recent years, there are ongoing efforts to improve its quality and accessibility. Overview of Higher Education in Bihar

Types of Institutions: Bihar's higher education landscape includes:

1. **State Universities:** These are established and funded by the state government. Examples include Patna University, Magadh University, and Babasaheb Bhimrao Ambedkar Bihar University. There are approximately 17 state universities.
2. **Central Universities:** These are established and funded by the central government and often have a national focus. Bihar has four central universities, including the Central University of South Bihar, Mahatma Gandhi Central University, Dr. Rajendra Prasad Central Agriculture University, and Nalanda University.
3. **Private Universities:** These are established and managed by private organizations. Amity University Patna and Gopal Narayan Singh University are examples.
4. **Deemed Universities:** These are institutions that have been granted the status of a university by the University Grants Commission (UGC). Nava Nalanda Mahavihara is a deemed university. The implementation of the National Education Policy (NEP) 2020 in Bihar's higher education sector is a dynamic and ongoing process, aiming to transform the educational landscape in the state. The Directorate of Higher Education, under the Education Department of Bihar, plays a pivotal role in spearheading this ambitious reform, with a recent significant emphasis on integrating apprenticeship opportunities.

Key Aspects of NEP 2020 Implementation in Bihar Higher Education:

1. **Multidisciplinary Education and Flexibility :** NEP 2020 advocates for a holistic and multidisciplinary approach, breaking down rigid disciplinary boundaries. Bihar is gradually moving towards this by:

- **Introduction of varied courses :** Recently, Bihar has introduced French and German language courses in 15 government colleges, with plans to expand this to all government colleges. This promotes multilingualism and offers students diverse skill sets, aligning with the NEP's emphasis on interdisciplinary learning and skill development.
- **Academic Bank of Credits (ABC) :** Efforts are underway to implement the ABC system, which allows students to earn and transfer academic credits, providing greater flexibility in their educational pathways. The Bihar Education Department has sought compliance reports from private universities on the implementation of ABC-NAD and Samarth Portal.
- **Focus on Skill Development and Apprenticeships :** The integration of skill development programs, including vocational education and internships, is a key

focus. This aims to enhance the employability of graduates, with a strong push for apprenticeships. This is evident in the recent workshop, where Prof. (Dr.) Rekha Kumari stressed the need for incorporating internships and training opportunities into academic curricula. She also highlighted Bihar's landmark pledge to register all its graduates on the National Apprenticeship Training Scheme (NATS) portal.

2. **Institutional Restructuring and Governance:**

- **Consolidation of HEIs :** The NEP envisions consolidating higher education institutions into larger, multidisciplinary entities. This is a long-term goal for Bihar, aimed at improving infrastructure and quality.
- **Bihar State Higher Education Council (BSHEC) :** The BSHEC plays a crucial role in planning, monitoring, and promoting reforms in the state's higher education system, aligning with RUSA (Rashtriya Uchchatar Shiksha Abhiyan) objectives and supporting NEP implementation. The BSHEC was a co-organizer of the recent workshop on apprenticeship training.

3. **Quality Enhancement and Research:**

- **Research and Development Cells :** Institutions like Laxmi Narain Dubey College, Motihari, have established Research & Development cells to promote quality research and foster innovation, in line with NEP 2020.
- **Teacher Training :** The policy emphasizes faculty readiness for pedagogical transformation. Initiatives like interdisciplinary refresher courses are being organized, for instance, at the Central University of South Bihar (CUSB), to equip teachers with new teaching methodologies.
- **Digital Initiatives :** The push for digital resources, online courses (like SWAYAM, UGC MOOCs), e-PG Pathshala, and digital libraries is crucial for enhancing access and quality.

4. **Student-Centric Approach:**

- **Awareness and Guidance :** Central University of South Bihar's NEP Cell has organized meetings and workshops to make students aware of the policy's structure, features, and career opportunities it presents.
- **Holistic Development :** The NEP focuses on holistic development, encompassing not just academic learning but also life skills, emotional well-being, and critical thinking.
- **Apprenticeship Opportunities for Students :** A recent workshop emphasized the pivotal role of students, representing all 272 constituent colleges of Bihar, in the apprenticeship initiative. Shri Baidyanath Yadav stated the program aims to benefit students "not just during one year of apprenticeship training but throughout their future careers". Apprenticeship Training and Placement Officers (ATPOs) are

actively finalizing schedules for Career Guidance Programs in their respective institutions, to be held in February 2025, to support enrolled students. By June 2025, final-year students are expected to be well-prepared to join NATS.

Role of the Directorate of Higher Education, Bihar:

The Directorate of Higher Education, as part of the Bihar Education Department, is the primary governmental body responsible for the strategic planning, regulation, and oversight of higher education institutions in the state. Its key roles in NEP 2020 implementation, particularly highlighted by the recent apprenticeship focus, include:

1. **Policy Formulation and Dissemination :** Translating the broad guidelines of NEP 2020 into actionable policies and circulars specific to Bihar's higher education context. Prof. (Dr.) Rekha Kumari, Director, Directorate of Higher Education, stressed the duty to ensure every course includes hands-on training opportunities.

2. **Coordination and Collaboration :** Working closely with universities, colleges, and other stakeholders (like the Bihar State Higher Education Council and the Board of Practical Training, Eastern Region) to ensure a synchronized approach to implementation, as demonstrated by the collaborative workshop.

3. **Infrastructure Development :** Facilitating and securing funds for upgrading and expanding physical and digital infrastructure in higher education institutions, which is a major challenge.

4. **Faculty Development Programs :** Initiating and supporting training programs for faculty members to adapt to the new pedagogical approaches and interdisciplinary curriculum envisioned by NEP 2020, including encouraging the integration of practical training.

5. **Monitoring and Evaluation :** Establishing mechanisms to regularly monitor the progress of NEP implementation, collect compliance reports from institutions (as seen with private universities), and identify areas requiring further intervention, especially regarding apprenticeship registrations on the NATS portal.

6. **Addressing Challenges :** Actively working to mitigate the challenges faced during implementation, such as resource constraints, resistance to change, bureaucratic hurdles, and ensuring quality and affordability. This includes addressing the past issue where many general degree students in Bihar did not significantly benefit from the 2014 amendment to the Apprenticeship Act.

7. **Promoting Digitalization :** Encouraging and facilitating the adoption of digital platforms and resources for teaching, learning, and administration, including the NATS portal for student registration and tracking.

8. **Ensuring Equitable Access :** Supporting initiatives to focus on students from rural and underprivileged areas to ensure equitable access to opportunities, including

apprenticeships.

Apprenticeship Work and its Integration :

The recent workshop at Patna Women's College served as a crucial step in formalizing and scaling up apprenticeship opportunities in Bihar's higher education.

- **NATS Portal Registration :** A significant outcome is the pledge to register all Bihar graduates on the NATS portal. Mr. Aditya Bhardwaz, OSD to the Director, explained the process of registering students on the NATS portal and tracking their progress.
- **Stipend and Eligibility :** The Government of India provides a minimum stipend of 9,000 for general degree graduates, with 50% directly transferred to students' bank accounts under the DBT scheme. Eligibility for apprenticeships extends broadly; any organization with over four employees qualifies as an establishment, and those with over 30 staff members are typically eligible to engage apprentices. Establishments can hire 2.5% to 15% of their total workforce as apprentices. Notably, even Sanskrit graduates are eligible for apprenticeships in translation agencies.
- **Career Guidance and Future Readiness :** Career Guidance Programs are scheduled for February 2025 in both online and offline formats to support enrolled students. The goal is that by June 2025, graduating students will be well-prepared to join NATS.

Challenges and the Dynamic Overview:

While significant strides are being made, the implementation of NEP 2020 in Bihar's higher education, particularly with the renewed focus on apprenticeships, is not without its challenges:

- **Infrastructure Deficiencies :** Many state universities and colleges in Bihar suffer from a lack of adequate physical infrastructure (classrooms, laboratories, libraries) and technological resources.
- **Faculty Readiness and Development :** A major hurdle is ensuring that faculty members are adequately trained and willing to adopt new teaching methodologies that emphasize critical thinking, interdisciplinary learning, and project-based work, alongside facilitating apprenticeship integration.
- **Financial Constraints :** Limited public finance allocations for education pose a challenge to implementing the policy's ambitious reforms, which often require significant investment, including support for apprenticeship programs.
- **Administrative Bottlenecks :** Bureaucratic processes can sometimes hinder prompt decision-making and policy execution, such as ensuring timely registration on the NATS portal across all colleges.
- **Resistance to Change :** Overcoming traditional mindsets and resistance to new

academic structures and pedagogical approaches, including the increased emphasis on practical training, can be difficult.

- **Industry Engagement :** A crucial aspect will be ensuring sufficient engagement from industries and establishments across Bihar to provide meaningful apprenticeship opportunities for the large number of graduates.

Conclusion:

Despite these challenges, Bihar's approach is dynamic. The state education department is actively seeking accountability reports, introducing new courses, and organizing awareness programs, like the recent workshop, to drive the implementation. The Directorate of Higher Education, in collaboration with other bodies, is striving to overcome these hurdles and create a robust, inclusive, and future-ready higher education system in Bihar, aligning with the vision of NEP 2020 and placing a strong emphasis on practical, career-oriented learning through apprenticeships.

POLITICAL PARTIES : A PERSPECTIVE

Prof. Binod Kumar Jha
Assistant Professor
Dept. of Pol. Sciecne
A.N. College, Patna

The progress that has been made in the study of political parties and party system has been attained despite continued inability to resolve a number of key conceptual problems.

The Phenomenon of political parties is a relatively recent development on the stage of world political history. It is only in the wake of the technological innovations ushered in by the Industrial revolution that vast societal changes had taken place in the short space of a little over two centuries with momentous consequences for political power and political organization. Startling breakthroughs in the mode of production and the resultant phenomenal changes in social relations and in the levels of cultural attainment have brought about a new type of political community into existence. Consequently, as ever larger sections of the population have became involved in the production process and the social interaction related thereto, they have became increasingly aware of the stake they have demanded a larger say in socio – economic affairs than they ever did before. Greater political awareness and participation are, the but logical corollaries to the major developments that have taken place in socio – economic spheres.

The rise of Industrial capitalism which marks the advent of rising bourgeoisie and consequently the demise of old feudal order heralded the advent of the modern political parties. It was the rising bourgeoisie that posed the principle challenge to the existing order, in order to reduce control over their trade, the latter were forced either to surrender power to the former or to share it with them, and thus the scope of political activity was considerably widened. It was among the bourgeoisie that modern political parties made their appearance. Increasing industrialization and urbanization produced on the one hand the large laboring classes, and on the other led to a further diversification within the ranks of the bourgeoisie and to the rise of the middle – classes. These new classes had to be accommodated in the decision – making processes of the political economy. As new industrial commercial, technical, service and labor interests emerged on the political scene, new groups and parties arose to articulate their demands and champion their causes. And the more complex society became, the greater was the need felt for organizing these groups on a systematic basis. Further

while political activity became wider spread and better organized, it led to the gradual extension of the franchise, with its politics became more participative, ever been before. Parties competed with one another in championing the claims of diverse segment of the electorate and on gaining the maximum number of sympathizer and supporters to push through their programme various „mixes of parties professing democratic socialism or social – economic democracy arose among the petty bourgeoisie and the middle classes with the declared objective of combining democratic freedom with social justice irrespective of their societies like India, where the process of class formation has not been completed and is much more complicated due to over bearing legacy of the colonial period and the forces of neo-colonial world forces, the capitalist character of these societies is getting more and more ostensible. As George Novack observed the alienation of democracy from capitalism in the political consciousness of colonial people is demonstrated in the paradoxical fact that now a day almost all the capitalistic nature of their economy and goal, paste the honorific label of socialism upon their professed democracy. This was true of the guided democracy of Indonesia s late President Sukarno, the popular democracy of Naseer and not the least the Crises torn government of the bourgeoisie Congress party of India which deceptively proclaims itself to be as much socialist as democratic.

Further following Duverger, we can distinguish between those parties which rose from within the ruling elites and those which rose from outside the ruling elite La Palombara and Weiner observe that latter type of parties are more recent phenomena, they are invariably associated with an expanded suffrage strongly articulated ideologies, and in most of the developing societies nationalistic and anti – colonial movements, and finally involve same challenge to the ruling group.

As modern societies became more atomized and more pluralist, and as older value-system, loyalty patterns and social structure crumbled, new forces, ideologies and forms of organization emerged to take their place. Prominent among these new forces, ideologies and organizational forms were those represented by the political parties which competed fiercely for men's loyalties, while promising to usher in a new order in place of the old order or as in the case of the bourgeoisie conservative parties – to give the old order a new lease of life. These parties had to reckon with the fact that while the forces of modernity resolved many of the traditional forms of cleavage in society, they also brought in their wake new forms of cleavages that required new methods of reconciliation and managements. They had to face up to these manifold challenges in order to gain as wide a following as they possibly could through a sufficiently representative cross-section of the national community. In fine, the aggregation of interests must go hand in hand with their articulation. Parties that have failed to widen "themselves" have ended as sectional or regional parties with a restricted support base.

Such parties cannot by themselves aspire to capture state power and must rely on some form of coalition with another party or parties. A survey of the modern International political scene will reveal that political parties have come to stay. Though political thinkers at the caliber of Rousseau expressed grave reservations about the usefulness of political parties, no modern state whatever the political system under which it operates has functioned without them. Whether one considers a single party system such as has existed under communism or fascism or one of the more recent brands of Third – World nationalism : or a dominant one party system such as is illustrated by the Indian party-system dominated by the ruling congress party : or a bi-party system as that is obtaining in U.K. or the U.S., or yet a multi-party system such as prevails in some of the West European Countries, one is confronted with the fact that political power requires to be legitimized through the consent and judgment of the people on a semblance of it and this role is sought to be played by political parties, whether in competition with one another or in concert with one another or to the exclusion of the other. "Party less democracy" expressed on the grassroots showing of power by people on the basis of consensus and in the spirit of co-operation, may be a laudable good to strive for and in India, some of the noblest spirits like Gandhi has advocated such a political system. But the immediate feasibility of such a system is not quite evident and political parties seem for the present to be the most convenient vehicles of mobilization of popular support in a vast and highly differentiated society.

Various scholars have attempted a definition of the political party bringing out several distinctive features of its nature and functions. A discussion of all of them is trivial here, so we wish to define the term in following terms. "A pol. party is an identifiable group of members of a national society who organize themselves on a stable bases with the purpose of acquiring, retaining and exercising power within that society in order to secure what they perceive to be thegoals of that society and who endeavor to mobilize to that end the support of as large a section of that same society as possible"

The definition just given is specific enough to apply to the political party alone as distinguishable from every other form of group or organization within society. It is at the same time broad enough in its scope to fit any type of political party. The definition holds good, moreover, whatever the nature of the politics or party system under considerations, as it includes functions that every political party necessarily must perform In the light of the above definition of the political party, it is possible to discuss its principal functions in a society. However, before turning to party's function, it is necessary to consider certain basic functions that society as a whole must perform. The political party, if it aims at the exercise of power over whole of society, needs to keep its own functions in harmony with the functions of society as a whole. Even if it is a minority party it cannot afford to function in so narrow and sectarian a manner as to

jeopardize the interest of society as a whole.

Every society must perform the vital-task of "pattern – maintenance" in as much as it is concerned with maintaining the pattern of society as a whole, while giving value to each of its components. Political parties cannot afford to work cross-purpose with the social function of pattern-maintenance. It is a dynamic concept, and admits of changes – even revolutionary changes, however even a revolutionary society needs to maintain the fabric of its existence and thus must perform this function.

The second task is that of goal attainment. In every society there are needs to be fulfilled and problems to be solved. No political party worked explicitly to downplay any of the basic goals of societies, although they may differ in their emphasis.

The last one is of environmental adjustment. While each national society is a vital social system by itself, it constitutes part of a world-wide system with which it inter-acts. So, there is always a process of mutual give and take they perform by their articulation of foreign-policy, which they seek to relate to domestic policy.

By the foregoing discussion it is now clear that any political party is faced with the task of mobilizing society or at least some sections of it for the above discussed functions. For this it has to make itself conversant with the needs of various sections of the people and identify itself as much as may be with their aspirations. This task may be called "interest articulation".

It is evident however, that whole articulating the interests of one section of society, a political party may offend the interests of another. It has therefore to dovetail the interests in so far as these are compatible of various sections of society. This means that it has to aggregate or to relate organically cross-sectional interests by shifting the essential from the peripheral and the universal from the particular. Further it must be ordered according to priority so that wider societal interests are not subordinated to narrow sectional ones. This function is called "interest aggregating".

While articulating and aggregating interests, the political party cannot afford to be merely passive in accepting demands of various sections of society, it has to have a perspective of its own, so that it may give an orientation to those demands, it must make initiative in molding political opinions and attitudes in the direction, it considers desirable. Socialization to politics or political socialization is that important function whereby a political party educates society politically by inculcating in its norms and values that will enable it to strive for the optional pattern of power – relationships or relations.

While considering the functions of political parties it must be born in mind that they are the product of various socio-economic forces operating in a society, nourished by a particular class, so its ideology, way of functioning, attitudes, organization are influenced by the class to whom it represents – and the class's position in social relation

of production, and further the socio- economic and political milieu in which they operate.

Political party-types have been distinguished on the basis of a variety of criteria. Some have classified parties into interest based and ideology based. It is open to debate whether such a classification does justice to real nature of political parties. On the basis of empirical experience,

we can safely maintain that interest and ideology cannot be divorced from each other though in certain instances, emphasis could be laid on one over the other.

Another classification is made on the basis of their membership, is a particular party mass- based or cadre-based? it is the former, if membership is open to any and every individual with a commitment to the ideology, it is the latter if the party restricts its membership to a few carefully selected persons. The communist parties are examples of cadre based while Indian National Congress – a mass based. A further basis is their style of operating, which can be patent or latent. If it is "patent" the decision-making process in the party will take the form of an open forum, if it is latent the decision-making process within the party will tend to be restricted to elite groups. Further we could consider the territorial and functional structuring of political parties as another criterion for classifying them, under this classification; parties could be viewed as unitary or federal. Another basis is the scope of party activities thus there are parties of limited and unlimited scope. But that is not a significant categorization as the so called "unlimited scope" parties do leave many areas of life outside the scope of their activities, while on the other hand the "limited scope" parties make inroads into many significant areas of private life.

In fact there is no such thing as a pure party-type or party-model. Parties are usually amalgams of several trends so much so that they cannot be neatly pigeon-holed according to our academic predilections. The Indian national congress is a typical case of a political party that displays an amalgam of diverse party traits. While holding to a certain ideology, the party is based on identifiable interests, while being federal in form it has a unitary power structure, while being patent in style it has its latent operational process as well. Thus, we should beware of facile general ration of the basis of party stereo-types.

The party system is at best a by-product of the social system. The nature of the cleavages or contradictions in a given society and the general level of its economic development largely influence the type of party system that will prevail in that society. Social differentiation in terms of class is the reflection of the pattern of relationship based on control over the economic resources of a society; this control has spin-off benefits on other "non-economic" field well.

Thus, other factors being equal the economic factor is most crucial determinant of

the power- pattern in society. One can thus take class as to be the single most crucial valuable in social- composition. Contradiction or cleavages in terms of the non-class contradictions are accentuated and where class contradictions are not so acute, the other non-class contradictions remain in equilibrium. Further as a society moves further along with road from traditionalism to modernity, economic factors in social organization became more manifest and take increasingly over other non-economic factors, e.g. language, caste etc. Although it should be not construed to mean that non-economic factors are insignificant, but what we mean to say that they tend to be increasingly subordinated to economic considerations.

While social composition in terms of economically determined class as also of other non-class variables is important in explaining the nature of the party system in a given society, the general level of its economic development is equally important in co-explaining it.

Whether a society has a greater degree of homogeneity or of heterogeneity is of great importance for the party system as it evolves in that society. Like-wise whether that society is economically more developed or relatively under-developed has consequence for the party system. The degree of homogeneity/heterogeneity related to the degree of development/under development will give rise to varying party-systems and party configurations. It would be convenient to consider the type of party-system that would most likely arise in each of the following situations. First, a relatively homogeneous society with a low general level of economic development. Second a relatively homogenous society with a higher general level heterogeneity and with a low general level of economic development. In this category we may put the case of India, and finally, a society with a greater degree of heterogeneity but with a higher general level of economic development.

Since the discussion of all possible types of societies and their party-system is not desired, so a very brief discussion is being undertaken.

First in a homogeneous-under developed society social cleavages would be less pronounced, social homogeneity would probably be reflected in political homogeneity, the degree of under

function. Thus, a single –party system, strongly ideological with well-trained cadres and its organizational structure would be centralized. As political pluralism has its roots in social pluralism, such a party would seek to curb the latter to the maximum extent possible. And since the politically most significant variable in determining social pluralism is class, the party would attempt either class abolition as a communist or radical Socialist party would do, or class-reductionism in the form of a corporate state as a fascist party would do.

Turning over attention to a society that is relatively homogenous-developed here

the pattern maintenance would be to the fore. Societal problems would be articulated in pragmatic rather than in ideological terms and the political approach would be instrumental and experimental. Such a society would support a pluralist party system of the liberal sort. Ideology would not be entirely absent but would take a variety of flexible formulations. Since the party system could allow a fair measure of political pluralism, parties would not be averse to the policy of class collaboration in society.

In a heterogeneous-developed society, much the same party system as characterized a homogenous developed society, would prevail. In this society class – contradictions are not so acute, so non-economic contradictions are de-emphasized and maintained in some sort of equilibrium. Such a society would support a pluralist party system of the liberal variety.

Finally, in a heterogeneous under developed society (in this category we may put the case of India), both pattern maintenance and goal attainment clamor for attention, the former because of the existing social contradictions and the latter because of the low level of economic development, which could aggravate the exiting contradictions, especially the class contradictions while pattern maintenance would call for pluralism in the political sphere in response to pluralism in the social sphere, the urgency of goal attainment would call for a single party system that would gear society to the task of rapid economic development.

The progress that has been made in the study of political parties and party system has been attained despite continued inability to resolve a number of key conceptual problems. Most prominent among these are- how to define a party, how to classify parties, and party system, how to conceptualizes the environment or context, and impact of a party and the interaction between it and environment. The surprising development in this regard is that, despite all these difficulties, researchers are engaged in making an empirical study of party politics with the aim of refining the discipline.

Synthetic Plastics

Sushil Kr. Singh
Professor
Dept. of Botony
A.N. College, Patna

The easiest and the least problematic solution is reusable and refillable packaging and buying unpackaged and it requires nothing more than a shift in our habits and behavior. *Stop choking the Earth. Kindly say **NO** to plastics.*

"Of all the waste we generate, plastic bags are perhaps the greatest symbol of our throwaway society. They are used, then forgotten, and they leave a terrible legacy." : Zac Goldsmith

Etymologically the word 'plastic' has its origin in the Greek 'Plastikos' which means capable of being moulded or shaped. According to the International Union of Pure and Applied Chemistry "plastic is a polymeric material that may contain other substances to improve performance and or reduce costs". Plastics may be either 'synthetic' or 'biobased'. Chemically synthetic plastics are high molecular weight polymers of organic monomers mostly derived from natural gas and crude oil. On the other hand, biobased plastics come from renewable products such as starch, other carbohydrates, vegetable oils etc.

How are synthetic plastics made?

- Crude oil or natural gas is broken down into monomers like ethylene or propylene through heat and pressure in the refining process.
- Monomers undergo either polymerization or condensation in the presence of heat, pressure and proper catalyst.
- The resulting polymers are processed into various forms. The processing involves melting, cooling, extruding and cutting into the desired shapes.
- Various additives are added to improve and enhance their properties. Additives like plasticizer make the plastic more flexible whereas additives like fillers and stabilizers make the plastic heavy and durable.

How are plastics classified?

The term 'plastics' include a wide variety of objects which can primarily be classified on the basis of three criteria.

A. Behaviour to heat: How a particular type of plastics physically reacts to heat and whether it can be further molded into a desired shape, it is classified into **thermoplastic** or **thermoset** plastic.Their characteristics are as follows:

Characteristics	Thermoplastics	Thermosets
Response to heat	Soften when heated and harden when cooled - can be molded with heat	Harden permanently when heated - Cannot be remelted or reshaped.
Recyclability	Usually, they are recyclable	Not recyclable
Melting point	Lower compared to melting point of thermosets	Comparatively higher
Tensile strength	Lower compared to tensile strength of thermosets	Higher compared to tensile strength of thermoplastics
Molecular structure	Have linear or branched chains with secondary bonds allowing for movement and reshaping	Have cross-linked, three-dimensional structures with strong primary bonds making them rigid.
Processing	Are processed using methods like injection molding, blow moulding and extrusion	Are processed using reaction injection molding and compression molding.
Examples	Polyethylene, polypropylene, nylon etc.	Polyester, silicone, epoxy etc.

B. Chemical structure : Depending upon the nature of monomers, plastics are classified into homopolymers-same monomeric units running across the polymeric chain. Ex: polyethylene (PE), Polystyrene (PS), Polyvinylchloride (PVC) and polypropylene (PP) and heteropolymers- more than one type of monomeric unit runs across the polymeric chain. Ex: ABS (acrylonitrile butadiene styrene),

C. Resin Identification Code (RIC) : The USA Society of the Plastic Industry developed RIC in 1988 to provide a consistent way to identify and sort post-consumer plastic for recycling. The classification of plastics based on the Resin Identification Code (RIC) uses a system of numbers (1-7) to categorize different types of plastics resins. One can find these codes usually within a triangle of arrows. The RIC is recognized as the worldwide standard plastic classification.

1. PET : Plastics belonging to group number-1 are made out of polyethylene terephthalate or PET. It occupies the number one spot due to its very widespread utility.

It is extensively used for food and drink packaging purpose due to its strong ability to prevent oxygen getting in and spoiling the product inside.

PET bottles are the most widely recycled plastic in the world.

2. HDPE (High Density Polyethylene) : Plastics belonging to group number 2 is a thermoplastic polymer made out of ethylene. It is used for shampoo bottles, lids, detergent bottles, grocery bags, pipes for water and other fluid transport, tanks for storage, toys etc. It is one of the easiest plastics to recycle.

3. PVC (Polyvinyl chloride) : The monomer of PVC is vinyl chloride or chloroethene. It is the third most widely produced synthetic plastic. Its two basic forms are available-rigid and flexible. In rigid form it is used in the construction industry for door and window profiles and pipes. It becomes softer and more flexible after mixing with other substances. Its flexible forms are used for wiring, electrical cable insulation and flooring. Despite its many advantages PVC should be avoided wherever it is possible because it is still hardly recyclable.

4. LDPE (Low Density Polyethylene) : It is homopolymer which is made out of ethylene. It has the simplest structure of all the plastics. It is most commonly used for manufacturing various containers, dispensing and squeeze bottles, molded laboratory equipments, many caps and closures. Its very common use is in plastic bags. It has laminating applications and as a coating for paper milk cartons.

5. PP (Polypropylene or Polypropene) : It is thermoplastic polymer which is manufactured via chain growth polymerization from the monomer propylene. PP is the second most widely produced plastic commodity. It is used in manufacturing battery cases, bottle caps, medical components, toys, crates, bowls, buckets, jug kettles, sports clothing, fibers for carpets, house waves, furniture, luggage.

6. PS (Polystyrene) : PS is a thermoplastic which is made of styrene. It can be solid or foamed. It is used for producing disposable plastic cutlery, caps and dinnerware, plastic model assembly kits, it is used for packaging meat, dairy products and for protecting packaging. Polystyrene foam is used for insulation in buildings It is found in housings for refrigerators, microwaves, car panels, housing of computers, TVs and other electronic devices. It is also used in the production of medical devices and various laboratory wares.

Environmentally it is among the worst type of plastics because it is non-biodegradable, and it is very harmful for birds or aquatic animals.

7. Other plastic : If plastic cannot be identified in the six types 1 to 6 then it will be included in group number 7. PC (polycarbonates) is the best-known plastic of this group.

Polycarbonate are used for manufacturing lenses for sunglasses, sports and safety goggles. They are also found on mobile phones and CDs.

Global Plastic Production

According to a report titled Global Plastic Production 1950-2023 published by Statista Research Department in Feb 2025, the worldwide production of plastics was staggering- 413.8 million metric tons in 2023, whereas it was approximately 2 million metric tons only in 1950.

Global plastic production has been increasing so rapidly that it has been projected to be double in 2050.

There is an interesting correlation between global population production and plastic production. In 2023 the global population increased by 0.88 percent while the plastic production increased at the rate of 3.35 percent.

Global Plastic Production by region

China accounted for 33 percent of global plastic materials production in 2023. The rest of Asia accounted for 19 percent. The 17 percent of plastic material production occurs in North America. Europe contributes 12% to the global plastic production.

So far as plastic material production in India is concerned it is just 5 percent of the global plastic production.

Why India is the World largest Plastic Polluter?

The study published in Nature has reported that India is the world largest plastic polluter. According to the study, India is responsible for around one fifth of global plastic emission of around 9.3 million metric tons (MT) per year whereas the study places China fourth. At number 2 and 3 are Nigeria and Indonesia, respectively.

Main reasons for India being the world largest plastic polluter are as follows:

- India has a large and increasing population which is becoming more affluent. It means more and more waste, but our country has not been able to keep pace with providing waste management service. Waste management infrastructure is inadequate.
- Waste collection Data show discrepancy because the official statistics don't include rural areas.
- Open burning of waste and
- Waste recycled by the informal sector.

Plastic pollution

According to Brittanica, plastic pollution refers to accumulation in the environment of synthetic plastic products to the point that they create problems for wildlife and their habitats as well as for human populations. Nobody would have thought at the time of invention of Bakelite in 1907 that by the end of 20th century plastics would be found in

practically every environmental niche. Synthetic plastics persist in environment because they are largely non-biodegradable. Plastics have a low recovery rate and they are relatively inefficient to reuse or recycled. Recycling plastics does not really address plastics pollution, because such plastics are properly disposed of whereas plastic pollution comes from improper disposal.

Recently plastic waste has gained more attention compared to other types of wastes due to its detrimental impacts on the environment and humans. Plastic wastes have become a global problem as most plastic wastes do not undergo biodegradation.

At present, the transformation of plastics from useful objects to bothersome 'waste' has become a trending topic. Plastic consumption has increased approximately 180 times from 1950 to 2018, and it continues to increase exponentially. There are three main reasons for continuous but sharp increase in generation of plastic waste in the world.

(i) Replacement of traditional materials by plastic,

(ii) population growth and

(iii) easy access to consumer society- Most people migrated to developed areas from the countryside which led to sharp increase in the urban population. This population is known as easy access to consumer society.

The plastic wastes exist in nature in different particle sizes which are referred as macro (725mm), meso (5-25mm), large micro (1-5mm), small micro (20 mm-1mm) and nano (1-1000 nm) plastics.

Impacts of plastic wastes

(I) Accumulation of plastics in natural habitats like oceans, rivers, forests and urban areas causes destruction of habitats for various species.

(ii) Since decomposition of plastics is extremely poor, plastic wastes disrupt nutrient cycle leading to altered biogeochemical cycles.

(iii) Microplastics enter water and soil affecting the entire ecosystem.

(iv) Impacts on wildlife are equally alarming. Many animals mistake plastic debris for food leading to ingestion. It causes internal injuries, blockages in the digestive system, malnutrition, restricted movement and even death.

(v) Toxicity is another effect of plastics.

Impacts on human health

(i) Human beings can inadvertently ingest microplastics through contaminated food and water sources which cause inflammation, organ damage, and the accumulation of toxins in the body.

(ii) Human beings are exposed to chemicals used in the production of plastics such

as bisphenol A(BPA) and phthalates. Such chemicals leach out of plastic into the environment and there are reports that they interfere with hormone regulation and they cause reproductive problems, development abnormalities and certain cancers.

(iii) Burning of plastics, not an uncommon phenomenon produces a number of air pollutants which cause respiratory problems and other health issues

Impacts on marine environment

Plastic wastes have physical impact on marine life due to ingestion by marine animals. On entanglement and packaging materials pose a risk of causing injuries, impaired movement, suffocation and may cause loss of life in those habitats. It also disrupts the food web. It has very adverse effect on biodiversity also.

Plastics pollution transports invasive species bringing about rafting effect.

Solving the problem

Economically it is prohibitive to remove plastics from the environment due to very large amount of plastic wastes. But the problem of plastic waste has to be addressed. Some of the solutions are as follows:

(i) To prevent improper disposal of plastic

(ii) To limit the use of certain plastic items,

(iii) Fines for littering or imposing fees or outright bands on formed food contains and plastics bags.

(iv) Taking beverage bottles to recycling centres

(v) Extended producer responsibility (EPR) for proper disposal of plastic wastes.

(vi) Awareness of serious consequences of plastic pollution

(vii) Increasing use of biodegradable plastics and a 'zero waste' philosophy must be embraced by Governments and the public promoting responsible behavior is essential.

Alternative to synthetic plastics

Sustainable alternatives to plastics are the need of the hour for mitigating impacts of plastic pollution. However, there are a number of alternatives to plastics. These alternatives are broadly classified into following categories which are as follows:

A. Natural fibres

B. Recyclable materials

C. Compostable alternatives and

D. Other alternatives

A. Natural fibres:

A.I. **Jute**: A durable and biodegradable plant fibers which is used for producing bags,

ropes and other products.

A.II. **Hemp**: It is some of strong and biodegradable plant fibre used in textiles, packaging and some other uses.

A.III. **Bamboo**: It is used for manufacturing a variety of products.

A.IV. **Cotton**: it is another plant product which is easily biodegradable.

B. Recyclable materials:

B.I. **Glass, tin and foil**: Glass, tin and foil are better alternatives. But resource extraction for tin and foil and high carbon emission from transporting glass are areas of concern. Resource extraction causes 80% of biodiversity loss and according to a UN study half the world's emissions are caused by the extraction of raw material. In principle these materials are recyclable, but reality is different and very unfortunately all food tins are lined with plastics.

B.II. **Paper and Cardboard**: Both paper and cardboard are recyclable material used for packaging and various other applications, but their production requires more energy and are heavier to transport compared to plastics of similar thickness. One would have to use a paper bag 4 times before its carbon footprint equates to that of plastics.

B.III. **Steel**: Stainless steel is tough and easy to clean. It is an excellent option for food and beverage storage, and it can be used to replace single use cups, kitchen storage lunch boxes.

C. Compostable options:

C.I Bioplastics (PLA-Polylactic Acid and PHA- PolyhydroxyAlkanoates)

Bioplastics are made from renewable resources like corn starch and sugar. Some of them are non-biodegradable and while others are partially biodegradable. All bioplastics are not biodegradable, Like most of organic compounds their decomposition yields methane gas, which is one of the Greenhouse gases. Bio-PET is recyclable.

C.II. Bagasse: Bagasse is a byproduct of sugarcane processing which can be used for packaging and other applications.

C.III. **Mushroom packaging**: It is novel material made from mycelium, the network of hyphae (thread like structures) of mushrooms.

D. **Other Alternatives**:

D.I. **Beeswax wrap**: A reusable alternative to plastic wrap for food storage.

D.II. **Wood**: It can replace plastics in household items like kitchen utensils, cleaning brushes.

D.III. **Platinum silicone**: It is made of sand and food grade platinum silicone is flexible

and very durable.

D.IV: **Pottery and other ceramics: P**ottery and other fired ceramics offer a stable, waterproof alternative that's good for food storage and tableware.

But replacement of plastics with another material would neither solve the problem nor reduce the burden on the environment. The easiest and the least problematic solution is reusable and refillable packaging and buying unpackaged and it requires nothing more than a shift in our habits and behavior. *Stop choking the Earth. Kindly say **NO** to plastics.*

"Of all the waste we generate, plastic bags are perhaps the greatest symbol of our throwaway society. They are used, then forgotten, and they leave a terrible legacy."

: Zac Goldsmith

WHISPERS OF THE WATER

Prof. S P Singh
Head, Dept of Chemistry
A.N. College, Patna

Global warming or global dimming may impact climate patterns, but they do not change the total quantity of water on Earth. The amount of water (H_2O) remains constant, continuously cycling through its natural forms solid, liquid, and vapor. Yet, what is steadily vanishing is access to clean, drinkable water. This decline threatens not just human health but the balance of entire ecosystems. Let us respond while the whispers of water are heard.

Water the lifeblood of Earth, the silent architect of civilizations, the cradle of life itself — flows not just through landscapes but also through our consciousness. In its gentle murmurs and thunderous roars, it carries stories, warnings, and wisdom.

The phrase "Whispers of the Water" is not mere metaphor; it reflects the subtle but urgent messages that water conveys to humanity — if only we are willing to listen.

Here is a beautiful and heartfelt song, "नदिया चले चले रे धारा..." whose lyrics deeply express the continuity and constant change of life. This song by *Indeevar (Film : Safar)* symbolizes a profound philosophy of life — never stop, keep flowing.

1. The Ancient Voice of Nature

Since time immemorial, humans have found deep meaning in the sound and presence of water. Rivers, lakes, and oceans are not only physical entities but also spiritual and cultural symbols. Indigenous communities across the globe revere water as sacred — a living being with rights and a voice. The Ganges in India is worshipped as a mother goddess; the Nile gave life to the pharaohs' empire; the Amazon cradles the lungs of the planet.

These waters whispered wisdom to the ancients. They learned to respect the rhythms of nature — sowing with the rains, harvesting with the floods, and praying to the streams. The natural world was not seen as a resource to be exploited, but as a partner in survival. These whispers guided sustainable coexistence.

The *Rigveda* beautifully acknowledges the life-giving essence of water in the hymn: *"O Waters, you are the source of all that is nourishing; grant us strength."* This ancient invocation reflects the deep reverence Vedic society held for water — not

merely as a physical resource, but as a sacred, sustaining force. It highlights how water was seen as a provider of health, vitality, and spiritual purity — a gift to be honored, protected, and wisely used.

The soft, evocative melody "नदीया किनारे, मेरा गाँव रे..." *(Film:* Abhimaan, *Lyrics: Majrooh Sultanpuri, Singer: Lata Mangeshkar)* portrays the river as an eternal, serene observer of human emotions—love, longing, sorrow, and silence. Flowing quietly through time, the river emerges as the ancient voice of nature, bearing witness to life without judgment.

2. The Language of Water

Water speaks in many dialects — the rhythmic lapping of waves, the trickle of a mountain spring, the thunder of a waterfall, the stillness of a pond at dawn. It speaks in silence too — in the quiet absence of rain, in the parched cracks of a dry riverbed, or the eerie stillness before a flood. These are not mere sounds or sights; they are messages, reminders of the delicate balance that sustains life.

When rainclouds fail to gather, water is whispering of climate shifts. When rivers run black with industrial waste, it is protesting human negligence. When glaciers recede silently in the high Himalayas, they are not merely melting — they are warning. Every drought and every deluge carries meaning beyond meteorology.

Through the timeless lines "बिन पाानी सब सून, पानी गये न ऊबरे, मोती, मानुष, चून" the 15th-century mystic poet *Kabir Das* highlights both the spiritual and practical indispensability of water, reminding us that from pearls to people, nothing can exist without it.

3. The Crisis We've Ignored

Sadly, the modern world has grown deaf to the whispers of water. In our pursuit of development and consumption, we have silenced the soft voices of nature with noise, pollution, and exploitation. Rivers are dammed without thought for ecosystems. Groundwater is sucked dry to feed thirsty megacities and monocultures. Oceans choke with plastic. Forests — which regulate the water cycle — are cut down for short-term profit. Despite these disruptions, neither global warming nor global dimming alters the total quantity of water on Earth. Water (H_2O) remains constant, endlessly cycling through its various forms — solid, liquid, and vapor. Yet, despite this constancy, the amount of clean, drinkable (potable) water is diminishing worldwide, posing a growing challenge to human and ecological survival.

The consequences are clear. Water scarcity now affects over 2 billion people. Desertification threatens to engulf once-fertile lands. Conflict over water resources looms — not just between nations but within communities. The water is still whispering, but the tone is more urgent. What was once a song is becoming a cry.

The Lyrics of *Santosh Anand* sung by *Mukesh (Film: Shor)* "पानी रे पानी तेरा रंग कैसा ...."

is deeply metaphorical and spiritually reflective. It questions the purity and adaptability of water -how it takes the form, color, and taste of its surroundings. In doing so, it raises profound concerns:

- Water pollution and the loss of clean drinking water / potable water.
- The fragility of nature and how human actions corrupt purity
- Moral and spiritual decay symbolized through environmental degradation

The song has become a symbol of environmental awareness.

4. Listening to the Whispers : A Call to Action

Despite the darkness, there is hope — and it flows from the same source. Across the world, people are beginning to listen again.

In Rajasthan, ancient stepwells and rainwater harvesting systems are being revived. In Peru, traditional Andean practices are helping to restore mountain wetlands. In Africa, women-led initiatives are bringing water to dry lands through community wells. In urban areas, rooftop rainwater harvesting and wastewater recycling are becoming popular solutions. Science, policy, and traditional knowledge are converging — responding to the whispers before they become shouts.

Educational campaigns are teaching children to value every drop. Legal innovations like granting rivers personhood status — as seen with New Zealand's Whanganui River and India's Ganges and Yamuna — recognize that water has rights too.

Penned by *Prasoon Joshi* and brought to life by *A. R. Rahman* and *Antara Nandy*, the lines "सोचो तो, क्यों है आज सहमा-सहमा पानी..." serve as a stirring call to action for water conservation. The song highlights water not just as a resource, but as a sacred and national legacy. It echoes themes of collective responsibility, environmental consciousness, and the quiet grief of water that once flowed without fear.

5. The Spiritual and Emotional Reservoir

Water does not merely sustain the body; it nourishes the soul. The sight of rainfall after a long drought, the sound of a babbling brook, the vastness of a still lake — these experiences evoke a quiet awe. Poets have captured it for centuries, artists have painted it, and spiritual seekers have meditated by it.

To reconnect with water is to reconnect with ourselves. We are, after all, made mostly of it. In every heartbeat and breath, in every tear and drop of sweat, water moves within us — whispering of our origin, our vulnerability, and our interdependence with the natural world.

The Hindi song "नदिया से दरिया से..." from the film *Kati Patang* (*Lyricist: Anand Bakshi, Singer: Kishore Kumar & Lata Mangeshkar)* talks about rivers and streams, which symbolize the flow of emotions and spiritual cleansing. The merging of the river into

the ocean reflects the union of the individual soul with the divine, a deep spiritual journey. Rivers in Indian culture are sacred, often seen as carriers of life and spiritual purification.

6. Conclusion: May We Learn to Listen

"Whispers of the Water" is not just a poetic phrase; it is a call to consciousness. In the subtle signs of drought, in the quiet return of a revived river, in the sacredness of a shared well — the water speaks. The question is: are we willing to listen, to learn, and to change? If Yes, Save Water.

If we do, water will continue to nourish, to heal, and to inspire. But if we do not, its silence may one day be irreversible. The essence of the theme can be captured in the following forms;

"The water speaks softly; do you hear its plea?
Rivers dry, wells weep — a sacred legacy.
Will you learn and change, before it's too late?
Save water today, protect our fate."

Let us act while the whispers can still be heard and at last let me quote a line ''बूँद-बूँद को तरसेगा कल? अगर आज ना जागे हम...''

A REVELATION OF SWAMI VIVEKANANDA'S VEDANTIC HUMANISM.

Dr. Tanya Mukharjee
(Retired Head)
Dept. of Philosophy
A.N. College, Patna

The human race has survived hitherto owing to ignorance and incompetence; but given knowledge and competence combined with folly, there can be no certainty of survival. Knowledge is power, but it is power of evil as much as for good.

Before embarking upon the main theme of this article it will be not only interesting but also rewarding to comprehend the formative influences on Vivekananda's life that made him the unique meeting point of the Orient and the Occident, of the ancient and the modern.

These influences were four: **first,** his assimilation of the rich spiritual elements of Indian culture in his early life under the tutelage of his mother and from his own studies; **second,** his assimilation of the energy and spirit of Western culture through his formal modern education in school and college as a youth; **third,** his silent spiritual training under his Guru, Sri Ramakrishna Paramhansa, whom Romain Rolland presents to his Western readers, in around 1926 as *"the consummation of two thousand years of the spiritual life of three hundred million people. Although he has been dead forty years, his soul animates Modern India."* And **fourth,** his intimate acquaintance, through his extensive travels across the length and breadth of his vast country as a parivrajaka or wandering monk, just prior to his historic journey to the West, with the living, pulsating India of peoples and their problems, as much economic, as social, political and spiritual.

This fourth formative influence contributed substantially to the shaping of Vivekananda's humanism. Sri Ramakrishna had foretold that when Narendra (the pre-monastic name of Vivekanada) would come into intimate contact with human suffering, his energy of pride and arrogance would melt into the energy of human compassion. In fact, Sri Ramakrishna's training of young Narendra in a universal humanism based on the profound Vedantic vision of the divine spark in man, and as the messenger of strength and fearlessness and hope to all humanity, constitutes an inspiring and impressive episode in modern human history.

The Vivekananda who emerged out of these fourfold influences, and who burst upon the modern world with his Vedantic lion-roar proclaiming the innate divinity of

man and the glory of the human spirit at the Chicago World Parliament of Religions in 1893, was a unique personality, not only from the point of view of the history of religion, but also of the history of man and his development. Referring to him as **"Napoleonic in the Spiritual Realm",** Romain Rolland describes the universal sweep of his vision in these words:

"In the two words, equilibrium and synthesis, Vivekananda's constructive genius may be summed up. He embraced all the paths of the spirit: the four yogas in their entirety, renunciation and service, art and science, religion and action, from the most spiritual to the most practical. Each of the ways he taught had its own limits, but he himself had been through them all, and embraced them all. As in a quadriga, he held the reins of all four ways of truth, and travelled towards Unity along them all simultaneously. He was the personification of the harmony of all human energy."

After his four years of strenuous spiritual and cultural work in the West, where he gave a spiritual orientation to Western humanism and raised it above racial and sectarian limitations, Swami Vivekananda returned to India in 1894 and gave to his people his stirring Vedantic message to awake them from their centuries-long sleep and build up their country on humanist lines. In East or West, he was always the awakener of souls. The central theme of his inspiring speeches was man _____ his growth, development, and fulfilment. The core of his lectures and widespread activities was the awakening of the Indian humanity and strengthening it to meet the modern challenges, and utilise the vast opportunities of the modern age to evolve a truly humanist social order. Eulogising these efforts of Vivekananda, Pandit Jawaharlal Nehru observed:

"Rooted in the past and full of pride in India's heritage, Vivekananda was yet modern in his approach to life's problems, and was a kind of bridge between the past of India and her present."

The intensity of Vivekananda's humanistic impulse is particularly revealed in the course of the following letter written to Miss Mary Hale of Chicago on 9 July 1897:

"I have lost all wish for my salvation. I never wanted earthly enjoyment. I must see my machine in strong working order, and then knowing sure that I have put in a lever for the good of humanity, in India at least, which no power can drive back, I will sleep without caring what will be next; and may I be born again and again, and suffer thousands of miseries so that I may worship the only God that exists, the only God I believe in, the sum total of all souls ... and, above all, my God the wicked, my God the miserable, my God the poor of all races, of all species, is the special object of my worship."

It is significant to observe that in this context, Swamiji had coined the famous phrase **Daridra-Narayan** (the beggar-god), an expression that transpierced thousands

of souls and consequently endeared him to the hearts of the masses.

The humanism expounded by Vivekananda is intensely human and universal but it is also something more than human; for it derives its strength and sanction from the ever-present and inalienable divine spark in all men and women. And that constitutes its uniqueness.

Man's strength and knowledge can be either destructive or constructive: they can give him and his fellow human beings life and love, joy and peace, or death and hatred, sorrow and unfulfilment. Which of these two a man will choose will primarily depend on the spiritual development, the consciousness level, that he has attained, and only secondarily on his economic and social environment. **If the human consciousness functions at the sensate level, and at the level of the ego presiding over man's organic system, man can scatter only tension and peacelessness around him,** but if it functions from the deeper level of his divine dimension, or from layers close to it, he will become, naturally and spontaneously, a focus of love and peace and fearlessness around him.

A humanism that is strengthened and sustained by the ignition of the divine spark in man is far different from the current humanism of the West, including its Scientific humanism. There is a universality and dynamism in the former, and its energies are entirely positive and never negative.

That is the strength and range and relevance of Vivekananda's Vedantic humanism. He accepts the human situation, man as we find him in society. He also accepts the need for the manipulation of his socio-political conditions upto a point, to ensure his growth and development. But he will insist that man must develop and grow further, that he must evolve and steadily unfold also the higher divine possibilities hidden within him. This is echoed in modern biology in the concept of **Psycho-social evolution,** of evolution rising from the organic level to the ethical and moral levels.

If man's inside is tense and tumultous, it means that he has not overcome fear; it means further that he cannot be a guarantee for the peace and fearlessness of the rest of the world.

Just on the eve of the Second World War, an English intellectual, Dr. Josiah Oldfield, in the course of a speech on 'War and Internationalism', apparently referring to the Treaty of Versailles, said:

"More wars are caused by bad-tempered people seeking to discuss peace measures than by good-tempered people seeking to discuss war measures!"

The UNESCO Preamble embodies this very sentiment:

"Since wars begin in the minds of men, it is in the minds of men that the defences of peace must be constructed."

Beasts of prey cannot ensure peace and fearlessness in the forest-world around

them, in spite of long discussions and solemn decisions in their peace conferences! What is needed for the establishment of world peace and the functioning of a universal and dynamic humanism is the overcoming of the beastliness in man, through his education being carried beyond the intellectual to the spiritual dimensions of his being. This is what Vivekanada calls true religion, which he defines as "the manifestation of the divinity already in man."

The Atman, the one divine and immortal Self in all, is the only rational sanction, says Vivekananda, for all ethical and moral life and action, for all humanistic impulses and behaviour. When man manifests the Atman in his life and behaviour even a little, he becomes fearless and at peace with himself and at peace with the world, for he then realises his spiritual oneness with all.

The Upanishads, therefore describe the Atman at all peace-Shanto' yam atma. All the tensions of man's physical life, all the complexes of his mental dimensions, become gently resolved in this higher dimension of the human personality. This is humanism with the deepest spiritual import and, therefore, with the widest social relevance, most stable and steady and, therefore, beyond the reach of the pressures, narrow and violent, of all political, racial, and religious prejudices, frenzies and passions.

Humanism cannot co exist with any predatory attitude or behaviour; it cannot co-exist also with any intolerant attitude and behaviour. This has been amply illustrated by the spread of Buddhism throughout Asia in a uniformly peaceful manner. Indians, of all nations of the world, have never been a conquering race. Every word has been spoken with a blessing behind it, and peace before it.

Emphasising this sweet fruit of India's (Vedantic) humanism, Vivekananda distinctively expatiates:

"Gifts of political knowledge can be made with the blast of trumpets and the march of cohorts. Gifts of secular knowledge and social knowledge can be made with fire and sword. But spiritual knowledge can be given only in silence, like the dew that falls unseen and unheard, yet bringing into bloom masses of roses. This has been the gift of India to the world again and again."

Vivekananda sends out his clarion call to man every where to arise and awake from his hypnotism of weakness, to realise his universal spiritual nature, and the projecting, out of that fullness and richness within, that universal humanistic impulse into the outside world. That is the awakening which the people of the world will have to experience in this modern age, if they are to achieve international peace and a crime-free social order.

It will not be out of context to recall Bertrand Russell's forewarning to modern man at this juncture:

"We are in the middle of a race between human skills as to means and human folly

as to ends. Given sufficient folly as to ends, every increase in the skill required to achieve them is to the bad. The human race has survived hitherto owing to ignorance and incompetence; but given knowledge and competence combined with folly, there can be no certainty of survival. Knowledge is power, but it is power of evil as much as for good. It follows that, unless men increase in wisdom as much as in knowledge, increase of knowledge will be increase of sorrow."

Thus, the need of the hour is for humanity to become the bearers of a luminous philosophy of humanism, at once rational, universal, practical, and dynamic. That would be a true ode and tribute to Vivekananda's expounding of Vedantic humanism.

REFERENCES:

1. Swami Vivekananda, The Complete Works of Swami Vivekananda, Vols. I-IX, Advaita Ashram, Calcutta, 1959.
2. Bertrand Russell, Impact of Science on Society, George Allen & Unwin, London, 1979.
3. Romain Rolland, Life of Vivekananada, Quoted in Swami Vivekananda Centenary Memorial Volume, Calcutta, 1963.
4. Romain Rolland, Life of Ramakrishna, Quoted in Swami Vivekananda Centenary Memorial Volume, Calcutta, 1963.
5. Leo Tolstoy, The Kingdom of God is Within You, Progress Publishers, Moscow, U.S.S.R., 1984.
6. Swami Turiyananda, Life of Swami Vivekananda, by his Eastern and Western Disciples, Fourth Edition, July 1989.
7. Jawaharlal Nehru, The Discovery of India, Signet Press, Calcutta, 1946.

FLOW OF COLOR

Dr. Shabana Karim
HOD, P.G. Dept. of Botany
A.N. College, Patna

Colors are an integral part of human beings, both externally and internally. Our eyes, hair, and moles may be black or brown; our skin and other features display a wide range of shades — lips are pink, nails are white. Internally, our bodies also exhibit various colors: the red hue of blood, the green color of bile.

Color is a beautiful feeling in our lives. When we are happy, the colors of joy are like the beautiful drops of rain. When we are sad, the dull and faded colors seem to disappear with our tears.

What is color? Where does it come from? Why did it come into our lives? What purpose does it serve? Many different questions arise. Some of them are answered, yet many remain a mystery.

Each season boasts its own chromatic charm. In winter, there is the golden warmth of sunlight and the white color of snow-capped mountains. In spring, unique colors bloom in the form of beautiful flowers all around — red roses, violet dahlias, orange marigolds, white daisies. In the rainy season, the lush green of fields and empty lands spreads and flows like a river.

Colors are a gift from nature. Wherever you look, there are colors everywhere — violet, indigo, blue, green, yellow, orange, and red — collectively known as VIBGYOR, which appears in the form of a rainbow after the rain.

What is white color? It is the combination of the seven colors of the rainbow, visible after the scattering of light.

The vibrant green hue of paddy fields sways gently in the breeze, creating a mesmerizing, wave-like effect. The golden wheat fields are a sight to behold, as if the land is adorned with a golden glow. This wave of golden light is called *Sumbul* in Arabic literature. The farmer's joy knows no bounds, and his home is filled with the waves of happiness brought by *Sumbul*.

In our food, fruits like pomegranates are red, mangoes are green and yellow, oranges are orange, grapes are green and purple, litchis are white, strawberries are pink, wheat is golden, rice is white, and lentils are yellow. Vegetables, too, come in multiple colors. It seems like food itself would not be the same without colors.

The beautiful colors of our homes, workplaces, gardens, and furniture all have an impact on our mood. The colors of our surroundings significantly influence our productivity. Even the pink-colored 2000-rupee note used to bring a smile to our faces. This highlights the importance of color psychology in our daily lives, affecting our

emotions.

The vibrant colors of a peacock's plumage, the serene beauty of white pigeons and herons soaring in the blue sky, the sky's cerulean hue, the ocean's deep blues, and the Earth's golden tones — all of these mesmerize us. The soothing sound of waterfalls with their mesmerizing flow invigorates the senses.

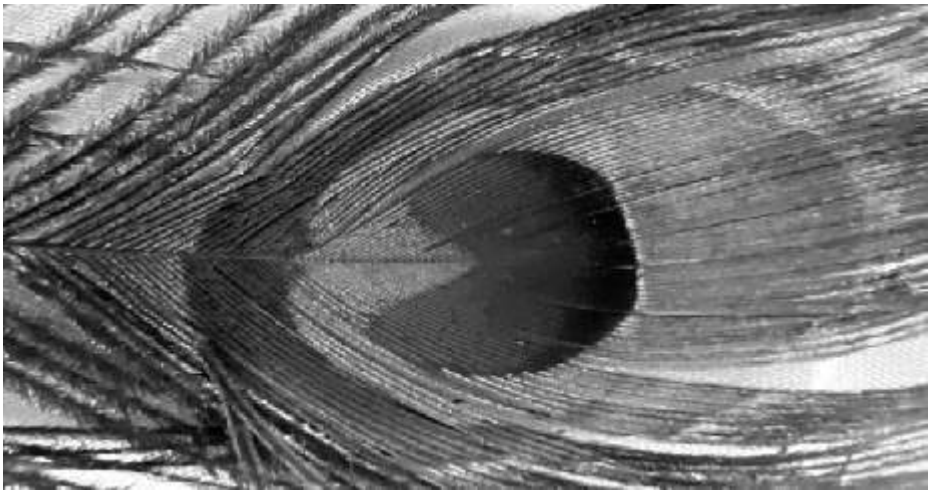

But what is the science behind nature's lush green landscapes? The answer lies in pigments — chlorophyll for green; carotene, carotenoids, and xanthophylls for yellow and orange; and anthocyanins, phycoerythrin, and lycopene for red. It is sunlight that brings these pigments to life, highlighting their importance in the natural world.

Salt, minerals, and gemstones display a wide range of colors. Gold has a vibrant yellow, silver a lustrous white, and diamonds have a brilliant sparkle that refracts light into seven colors. The brilliance and value of these stones have a significant impact on people, highlighting not only their aesthetic and economic worth but also their emotional and psychological effects.

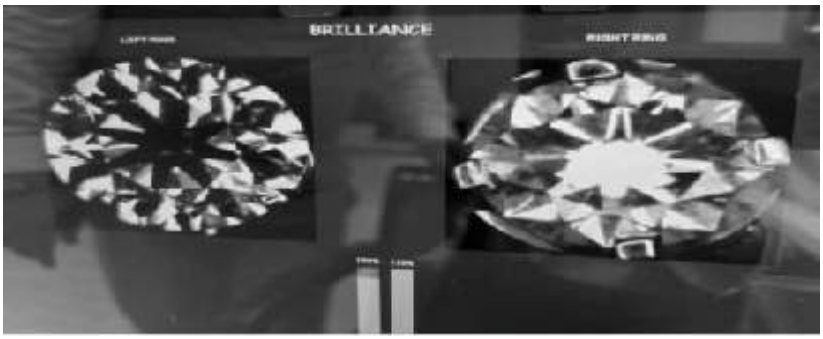

Colors dance through life's celebrations — the color of a bride's attire at a wedding ceremony, and the colors of clothes inspired by nature on different occasions.

Animals display a variety of colors: lions with their golden coats, leopards and deer with their distinctive spots, elephants with their dark grey skin, golden cobras, black kraits, green snakes, and sheep and goats with their white coats fish with their lustrous scales . This highlights the diversity of colors found in the animal kingdom.

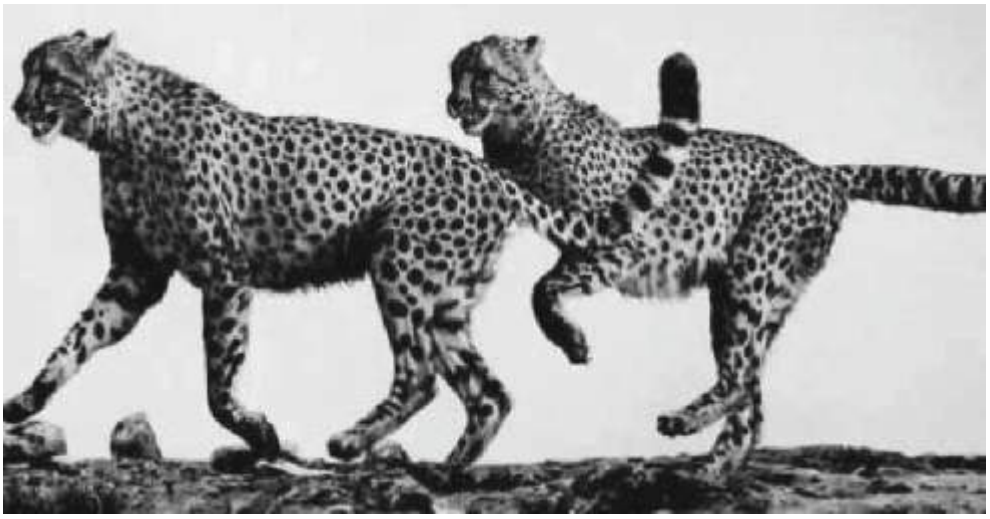

Colors are an integral part of human beings, both externally and internally. Our eyes, hair, and moles may be black or brown; our skin and other features display a wide range of shades — lips are pink, nails are white. Internally, our bodies also exhibit various colors: the red hue of blood, the green color of bile. These colors play a vital role in regulating our bodily functions, including metabolism, physiology, and heart rate.

The flow of colors is omnipresent — in our blood, heartbeat, and every other aspect of our being. It is a remarkable phenomenon that colors are intricately linked to our emotions, joys, and overall well-being.

Keywords

Color, Hue, Vibrant, Chromatic charm, Color psychology, Mood, Emotions, Joy, Sadness,

Well-being, Paddy fields, Golden wheat, Snow-capped mountains, Lush green, Spring flowers, Rainbow, VIBGYOR, Waterfalls, Cerulean sky, Ocean blues, Earth's tones, Pigments, Chlorophyll, Carotene, Carotenoids, Xanthophylls, Anthocyanins, Lycopene, Phycoerythrin, Scattering of light, Sunlight, Fruits, Vegetables, Pomegranate, Mango, Orange, Grapes, Lychee, Strawberry, Wheat, Rice, Lentils, Farmer, Sumbul, Home, Furniture, Gardens, Peacock plumage, Gemstones, Gold, Silver, Diamond, Sparkle, Lions, Leopards, Deer, Elephants, Cobra, Krait, Snakes, Sheep, Goats, Peacocks, Pigeons, Herons, Eyes, Hair, Moles, Skin, Lips, Nails, Blood, Bile, Heart rate, Metabolism, Physiology, Wedding, Bride's attire, Celebrations, Clothing, 2000 rupee note, Art, Arabic literature.

References

Color in Nature
Authors: Justin Marshall, Thomas Cronin, Sönke Johnsen, Ron Douglas, Anya Hurlbert, Jane Boddy, Fabio Cortesi
A beautifully illustrated guide to color in the natural world, examining how creatures perceive color and its role in animal behavior, reproduction, and communication.

Color and Light in Nature
Authors: David K. Lynch & William Livingston
This book provides clear explanations of naturally occurring optical phenomena, such as rainbows and mirages, supported by photographs and figures.

Color in Nature: A Visual and Scientific Exploration
Author: Penelope A. Farrant
An encyclopedic work that delves into the physical and atmospheric occurrences of color in nature, from plant and animal life to optical phenomena.

The Educational Vision and Societal Contributions of Bihar Governor ARIF MOHAMMED KHAN

Dr. Sanjay Kumar
Associate Professor
Dept. of Political Science
A.N. College, Patna

Arif Mohammed Khan's time as Governor of Bihar shows how moral leadership, educational innovation, and governance reform can all work together dynamically. His commitment to justice, equality, and intellectual growth throughout his life is evident in how he approaches higher education in the state.

Shri Arif Mohammed Khan, Governor of Bihar, is a distinguished statesman, seasoned politician, social reformer, and public intellectual who has left a profound imprint on Indian public life over the last four decades. He is a well-known politician, social reformer, and public intellectual who has greatly impacted Indian public life over the last 40 years. Khan was born on November 18, 1951, in Bulandshahr, Uttar Pradesh. His academic journey began at Aligarh Muslim University (AMU), where he earned a B.A. (Hons) degree He later did LLB from Lucknow University. His early involvement in student politics, when he was General Secretary (1971–72) and then President (1972–73) of the AMU Students' Union, shows that he was committed to public service, intellectual debate, and democratic values. These events set the stage for a lifetime of policy, governance, and reform involvement.

Khan's political career took off when he was only 26 years old and was elected to the Legislative Assembly (MLA). He kept moving up and became a four-time Member of Parliament (MP) in the Lok Sabha, representing areas like Kanpur and Bahraich in Uttar Pradesh. During his time in politics, Khan held several important ministerial positions in the Union Government, such as Information and Broadcasting, Energy, and Civil Aviation under Prime Minister V. P. Singh. However, it was his principled resignation from the Indian National Congress in 1986, when he protested the government's change of heart on the Shah Bano judgment, that made him famous across the country. Khan publicly backed the Supreme Court's decision in favour of Shah Bano, a divorced Muslim woman who wanted alimony, and spoke out against laws that would have overturned it. He took a brave stand for gender justice and secularism. His resignation was a turning point in Indian politics, showing his strong support for women's rights and constitutional morality (The Hindu, 2016; Indian Express, 2021).

Arif Mohammed Khan has become known as a political leader and a public intellectual over the years. His opposition to instant triple talaq, his writings on Islam

and modernity (including the well-known book "Text and Context: Quran and Contemporary Challenges"), and his many public speeches show a unique mix of religious knowledge and constitutionalism. Khan has always been a reformist voice in India's Muslim community. He has called for modern interpretations of Islamic texts and has pushed for gender equality and religious harmony. His work has brought together ethics, governance, and thought leadership in a way that still affects public discourse in India.

Khan has always been a strong and vocal supporter of social justice, secular government, and giving people the tools they need to get an education. His strong support for Parliament's decision to make instant triple talaq illegal in 2019 earned him much respect from people of all political stripes. He has often said that gender justice in Muslim personal law is necessary for absolute constitutional equality and has pushed for reformist interpretations that are in line with the values of modern democracy. As Governor of Kerala from 2019 to early 2025, he put this philosophy front and center by taking strong stands on university appointments and calling for openness in schools. During his time in office, he worked to make universities run more smoothly, ensure that Vice-Chancellors were chosen based on merit, and support independence in higher education institutions.

Khan took over as Governor of Bihar on January 2, 2025, and once again had the constitutional duty to be the ex-officio Chancellor of the state's public universities. He has since become a leading voice in changing how Bihar thinks about higher education. Governor Khan has brought a new focus on ethics, openness, and holistic learning to Bihar's academic scene. He does this by drawing on his experience as a former Union Minister and legal scholar. He often talks about how education should not only lead to jobs but also to moral, intellectual, and civic freedom.

As Chancellor of Universities of Bihar, Shri Aarif Mold Show Khan has reviewed university policies, important administrative appointments, and pushed for changes to modernize academic structures while still based on Indian civilizational values. His efforts include pushing for timely exams, making degree certifications easier, digitizing university administration, and supporting learning environments focusing on students. Khan has become a transformative figure in Bihar's higher education sector by focusing on systemic changes and education's spiritual essence.

Governor Khan's vision for education goes beyond just grades and test scores to include the moral, ethical, and philosophical foundations of learning. At the 13th ThinkEdu Conclave in January 2025, he spoke eloquently about how Indian education must move away from its colonial past and adopt indigenous ways of knowing, teaching compassionately, and thinking critically based on values. His keynote speech stressed that real education's goal should be to free the mind and spirit and give students technical skills, empathy, civic duty, and a strong sense of national pride (The New Indian Express, 2025).

One of the most obvious examples of this thinking was his outreach during public events, like when he went to Khan Sir's coaching school in Patna during Eid celebrations. The visit, which was widely reported on in both local and national media,

showed how open he was to all types of education and how he thought it could help people get along and move up in society. Governor Khan talked to students from different backgrounds about how important it is for everyone to have equal access to a good education. He also told young people to be agents of change in society. These actions show that he believes education is a way for people to succeed independently and for everyone to move forward and come together (Ministry of Education, 2020).

Governor Khan's visits to schools and colleges throughout Bihar show that he still supports combining cultural heritage with modern curricula. He often says teaching students values like discipline, respect for others, and a desire to learn more is important. His vision for education is fundamentally transformative, aiming to produce job-seekers, ethical citizens, thoughtful leaders, and nation-builders. Governor Khan says that this moral and ethical part of education is necessary for making a fair and just society in a rapidly changing world.

Governor Khan has made several changes to the structure and institutions of Bihar's higher education system as part of his reformist approach. One of his most significant accomplishments as Chancellor was passing new university rules that govern how Vice-Chancellors, Registrars, and Finance Officers are chosen and their duties. These changes are meant to make things more open, encourage responsibility, and ensure that university administration is based on merit and honesty. Under his leadership, making appointments has become more organized, with clear standards and oversight. He has made it harder for politics to get in the way and for the government to be inefficient.

Governor Khan has also talked about how important it is to keep academic calendars and make universities work better on the inside. He has told schools to give tests on time, release results immediately, and make giving and checking degrees faster. The goal of this focus on timely academic sessions and operational efficiency is to restore the credibility of Bihar's university system, which problems with irregularities and slow-moving administration have often plagued. Introducing digital certification and online complaint resolution systems under his watch has been a big step toward modern government.

His focus on student well-being, cultural inclusion, and holistic learning is just as important. Governor Khan has told colleges and universities to make policies that put students first and help them grow academically, emotionally, and morally. He has been to youth summits, university convocations, and educational conferences, where he has gotten feedback from students and teachers that has helped shape state-level education policies. He has fought for equal treatment of boys and girls in schools and has supported outreach programs that aim to get more people from underrepresented and marginalized communities into college. He has put moral education on the same level as science, technology, and the humanities by asking that university syllabi include ethical learning frameworks.

The fact that Governor Khan's plan for changing education fits well with the National Education Policy (NEP) 2020 is a significant part of it. His emphasis on learning across disciplines, giving teachers freedom, building ethical foundations, and getting

involved in the community fits with NEP's fundamental principles. His changes to universities' independence while keeping an eye on regulations are similar to the structural changes suggested in NEP 2020, especially when making higher education more inclusive, fair, and research-based.

Governor Khan has also fully backed programs in Bihar that help people learn new skills and train teachers. He has pushed for using the Choice-Based Credit System (CBCS), outcome-based learning, and online learning platforms in all state institutions. These efforts align with NEP's goal of preparing students for a changing global economy while instilling Indian values. He has also pushed for universities to set up incubation centers and innovation labs to encourage students to become entrepreneurs, do applied research, and solve problems in their communities.

He believes that higher education should be able to meet the needs of both local and global communities. His policies encourage academic freedom, connections between school and work, and civic participation. He gets Bihar's young people ready to find jobs and participate in social change meaningfully. Governor Khan has set an example for other states by focusing on educational models aligning with the NEP.

Governor Khan's proactive steps to make the government more open, hold schools accountable and make sure everyone has access to education align with NEP 2020s three goals of access, equity, and excellence. His education leadership has created a model of governance that shows how state-level adaptation of NEP guidelines can be both sensitive to the needs of the community and in line with national standards.

In conclusion, Arif Mohammed Khan's time as Governor of Bihar shows how moral leadership, educational innovation, and governance reform can all work together dynamically. His commitment to justice, equality, and intellectual growth throughout his life is evident in how he approaches higher education in the state. He is paving the way for a new era of educational excellence in Bihar by skillfully combining traditional Indian values with global academic standards and ensuring institutional policies align with NEP 2020. His vision for change is not only changing the state's schools but also creating a generation of students who are strong leaders with knowledge, character, and purpose.

References:

- Indian Express. (2021). Shah Bano case revisited. https://indianexpress.com
- Ministry of Education, Government of India. (2020). National Education Policy 2020. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0.pdf
- Press Information Bureau. (2025). Governor of Bihar advocates NEP alignment in state universities. https://pib.gov.in
- The Hindu. (2016). Arif Mohammed Khan on Shah Bano case. https:// www.thehindu.com
- The New Indian Express. (2025). ThinkEdu Conclave 2025: Governor Khan's Address. https://www.newindianexpress.com

रामचरितमानस में शक्ति का समावेश

डॉ. संजय कुमार सिंह
हिन्दी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

महाकवि तुलसीदास ने शक्ति के विधायक आयामों को जीवन और जगत की सम्पूर्णता में अभिव्यक्त कर उपयोगितावादी दृष्टिकोण से नैतिक मानदण्डों के अनुरूप विचार किया है। शक्ति के विघटित आयामों को प्रस्तुत कर उससे होने वाले दुष्प्रभावों की ओर संकेत भी दिया है। रावण की सम्पर्ण इहलीलात्मकता का विनाश इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

भारतीय वाङमय के अनुशीलन से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि ईश्वर की अपेक्षा ईश्वर की शक्ति का विशेष महत्त्व है। ईश्वर की इस शक्ति को स्त्री-रूपा कहा गया है। इसे मातृकाशक्ति से भी अभिहित किया जाता है। शक्ति की इसी शाश्वत परिकल्पना के पीछे भारतीय पारिवारिक जीवन में मातृशक्ति और सफलता का विशेष प्रचलन रहा है। 'रामचरितमानस' में कौशल्या आदि रानियों की पारिवारिक व्यवस्था के मध्य इस रूप को देखा जा सकता है। पुरूष और स्त्री जाति के परस्पर आकर्षण का मनोवैज्ञानिक आधार भी यही है। ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर सिन्धु घाटी की सभ्यता में मातृपूजा या देवीपूजा का प्रचलन लोकजीवन की शाश्वत परिकल्पना को उद्घाटित करता है। 'ऋग्वेद' के अदिति-सूक्त में मातृभाव, उषा-सूक्त में कुमारी-भाव, सूर्य देवी-सूक्त में पत्नी-भाव, देवी-सूक्त और वाक्-सूक्तों में शुद्ध शक्तिवाद की व्याख्या है। इन सभी सूक्तों को पारिवारिक जीवन के मध्य सार-तत्व के रूप में 'रामचरितमानस' में व्यक्त किया गया है। वैदिक ऋषियों ने 'मात पृथिवी महियम' कहकर शक्ति के प्रति अपनी अभ्यर्थना निवेदित की है। सीता के साथ राम को संयोजित कर जगज्जनी के रूप में देखने का विधान तुलसी ने अकारण उपस्थित नहीं किया-

''सिया राममय सब जग जानी। करऊं प्रनाम जोरी जुग पानी।''

पृथ्वी देवी और सीता का सम्बन्ध दिखाकर उन्हें विश्वजननी के रूप में उपास्य बताया गया है। सरस्वती, उमा, पार्वती, सती आदि शक्ति की शाश्वत परिकल्पना 'रामचरितमानस' में विवक्षित है। अन्य धार्मिक साहित्यों में इसी शक्ति के शाश्वत परिकल्पित रूप को चण्डिका, काली, दुर्गा आदि के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इन सभी परिकल्पनाओं के अंतर्गत पारिवारिक संघटन में मातृ की शक्ति का महत्वांकन है। पत्नी के रूप में भी इस शक्ति की अपेक्षित विवक्षा है। तुलसीदास जब 'निगमागम सम्मत की बात करते हैं तो उन सम्प्रदायों में विवेचित मातृकाशक्ति के महत्वांकन को सहज ही स्वीकारते हैं। यही शक्ति विभिन्न साधना-पद्धतियों के माध्यम से व्यक्त हुई है। जैन, बौद्ध, शाक्त मत, तंत्र आदि ग्रंथों में इस तत्व की पर्याप्त व्याख्या है। 'अगस्त्यसंहिता' में महाशक्ति के वर्णन क्रम में कहा गया है कि इसका रूप-वर्णन प्राकृतजनों के वश की बात नहीं। स्वयं भगवान ही उसका वर्णन करने में समर्थ है। उन्होंने स्वयं को शक्ति के अधीन बताया हैः-

''चकाराधनं तस्य मन्त्रराजेन भक्तितः।
कदाचिच्छीशिवो रूपं ज्ञातुमिच्छुहरैः परम।।''
दिव्यवर्षशतं वेदतिवधिना विधिवेदिना।
जजाप परमं जाप्य रहसी स्थिरचेतसा।

प्रसन्नोऽभूत तवा देवः श्री रामः करूणाकरः।
मन्त्राराध्येन रूपेण भजनीयः सतां प्रभुः।।

दाम्पत्य-भावना का विकास भी शक्ति के इसी शाश्वत परिकल्पित रूप का औचित्य प्रस्तुत करता है। 'रामचरितमानस' के निदर्शन से जनमानस की भावनाओं को व्यवस्थित करने का अप्रतिम सुयोग स्थापित हुआ है। साधक या भक्त जब शक्ति की उपासना जिस लक्ष्य से करता है उसके अनुरूप देवी की आराधना करता है। सीता की आराधना तब होती है जब अन्य देवियाँ सहायक होकर स्वयमेव उपस्थित होती हैं। ठीक यही स्थिति सरस्वती आदि की आराधना करने के क्रम में विचारणीय है। इस आराधना पद्धति को देखकर मैक्समूलर तथा कतिपय पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय शक्ति तत्व के प्रति 'बहुदेवीवाद' का आरोप लगाया है। डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उनकी भ्रान्तियों को दूर करते हुए लिखा है कि ''भारतवर्ष में शक्ति आराधना लोकजीवन का शाश्वत अभिव्यक्ति है। यहाँ बहुदेवीवाद में एकदेवीवाद की सार्थक अभिव्यक्ति है। मोनिज्म इन पोलिथेज्म की बात नहीं जानने के कारण ऐसी भ्रांतियाँ उत्पन्न होती हैं।''

परिकल्पना को अक्षर ब्रह्म के साथ जोड़कर उपस्थित करने का विधान भारतीय साहित्य की अनुपम विशेषता है। इसमें सर्वव्यापकता का भाव है। 'रामचरितमानस' में इस सर्वव्यापकता के भाव को जगज्जननी सीता के रूप में अभिव्यक्ति मिली है। शाक्त मत में इसे त्रिपुरसुन्दरी भी कहा जाता है। शाक्तमत में यह कामकला की जन्मदात्री मानी जाती है। यह भाव भी लोकजीवन की नैसर्गिक भावनाओं को अभिव्यक्त करती है। 'नाद-बिन्दु' माया तथा अन्य रूपों में इस शक्ति की विभिन्न अवस्थाएँ पाई जाती है। सती मोह का प्रसंग तथा पार्वती के रूप में तपस्या करते हुए पुनः शिव की प्राप्ति में सती मोह का प्रसंग तथा पार्वती के रूप में तपस्या करते हुए पुनः शिव की प्राप्ति में माया रूपी शक्ति को 'रामचरितमानस' में अभिव्यक्ति मिली है इसे प्रेमकला के रूप में परवर्ती साहित्यकारों ने भी किया है। 'काव्य कला तथा अन्य निबंध' में रहस्यवाद के प्रकरण में जयशंकर प्रसाद ने शक्ति का निर्वचन काम कला के रूप मे किया है। उसके अनुसार

'' यह काम प्रेम का प्राचीन वैदिक रूप है।....
काम में जिस व्यापक भावना का समावेश है,
वह इन सब भावों को आवृत्त कर लेता है।
इसी वैदिक काम की, आगम शास्त्रों में, काम-
कला के रूप में उपासना भारत में विकसित हुई।''

काम-कला के इस रूप को नैतिकता और मर्यादा का पुट देकर तुलसी ने दाम्पत्य-भाव पर पर्याप्त प्रकाश डाला है।

गोस्वामी तुलसीदास ने आदिशक्ति की परिकल्पना के लिए शास्त्रसम्मत प्रणाली और परम्परा को तो ग्रहण किया ही, साथ ही उसे लोकजीवन की शक्त्यात्मक अवधारणा के अनुरूप चित्रित करने का प्रयास किया। लोक अभिरूचि के कारण उनकी शक्यात्मक अवधारणा अनेक पौराणिक प्रसंगो का आत्मसात् करती हुई चलती है। इसमें सुन्दरम् के साथ-साथ शिवम् की भी अभिव्यक्ति हुई है। इससे काव्य-रस के साथ-साथ जीवनरस की भी अभिव्यंजना हुई है। कबीर ने अपने को बहुरिया मानकर शक्ति के आदि स्रोत को स्वीकारा।

''पिउ मेरा राम मैं राम की बहुरिया।''

जायसी ने सौन्दर्यात्मक चेतना को विवर्द्धित करने के लिए पद्मिनी की अपार शक्ति को काव्य का विषय बनाया। सगुणवादी कवियों ने राधा और सीता के माध्यम से उसी शाश्वत परिकल्पित रूप को वाणी दी है।

सगुणवादी तुलसी ने आवश्यकतानुसार इस शाश्वत रूप को जीवन के विभिन्न आग्रामों में देखने का प्रयास किया है। वे लौकिक एवम् आध्यात्मिक शक्तियों के विकास में सहायिका रही है। राम के साथ सीता वन-गमन का प्रस्ताव अकारण नहीं हैं। सीता शाश्वत शक्ति के रूप में समादृत होकर पल-पल पति के साथ रहने को इसलिए उत्सुक हैं कि जीवन के प्रत्येक पक्ष में सफलता के चरणों को राम चूम सकें। इसलिए शक्ति के हरण होने पर यदि वे बिलख-बिलख कर, फूट-फूट कर रूदन करते हैं तो आश्चर्य नहीं

"हे खग! मृग! हे मधुकर श्रेणी
तुम देखी सीता मृगनयनी?"

वस्तुतः राम की यह मृगनयनी दाम्पत्य भाव के साथ जीवन की केन्द्रियता भी निवेदित करती है। इस दाम्पत्य भाव को कबीर ने भी वाणी दी हैः-

" हम तुम तुम हम और न कोई।
तुहिं अस पुरुष हमहिं तोर जोई।" तथा....
"एक जनी जना संसार।"

कहीं-कहीं यह अविधा शक्ति माया के बंधन में बँधकर हमें दिग्भ्रमित भी करती है
"माया महाठगिनी हम जानी,
तिरगुन फाँस लिये कर डोले।
बोलै मधुरी बानी।"

तुलसी की सीता को भी मोह होता है...

"जो नृप तनय त ब्रह्म किमि
नरि बिरउँ मति भोरि।
देखि चरित महिमा सुनत
भ्रमित बुद्धि अति मोरि।।"

इसी सीता की लौकिकता जब आध्यात्मिकता के विभिन्न सोपानों को स्पर्श करती है तब शक्तिपात, महामिलन आदि की घटनाएँ अवघटित होती हैं। शक्ति की शाश्वत परिकल्पना के सुविकसित रूप को पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक आदर्शो के अनुरूप जितना गोस्वामी तुलसीदास ने ढालने का प्रयत्न किया उतना किसी अन्य कवियों ने नहीं। पारिवारिक परिवेश के अन्तर्गत माता, भगिनी, पत्नी, पुत्री आदि का निजी एवम् विशिष्टतम स्थान है। कौशल्या, सुमित्रा तथा अन्य चार पुत्रबधुओं के रूप में इनकी पर्याप्त अभिव्यक्ति है। जीवन के केन्द्र में शक्ति को रखकर महाकाव्यात्मक औदात्य के साथ कथा-रूपों का जो अन्यतम विकास तुलसीदास ने किया वह लोकादर्श सिद्ध हुआ। इतना ही नहीं, अत्यन्त वैज्ञानिक तथ्यों से ओतप्रोत होकर तुलसी ने वह भी दिखाने का प्रत्यन किया कि शक्ति के विघटित स्वरूप को ग्रहण करने से क्षरण के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं बचता। रावण का अहंकार शक्ति के निषेघात्मक पक्ष का अन्यतम रूप है। मन्दोदरी के लाख समझाने पर भी जब रावण नहीं मानता तब शक्ति के परिकल्पित रूप को विघटन की ओर प्रसरण करते हुए दिखाया गया है। इस दृष्टि से शाश्वत परिकल्पना के रूप में शक्ति की प्रतिष्ठा करते हुए उसके परिवर्तित विच्छिन्न रूप को दर्शाने का प्रयत्न "रामचरितमानस" में हुआ है।

शक्ति-तत्व की शाश्वत परिकल्पना को मनोवैज्ञानिक, समाजवैज्ञानिक तथा अन्यान्य संदर्भो के रूप में

तुलसीदास ने विचार का विषय बनाया है। शक्ति एक भावदशा है, जो कण-कण, अणु-अणु में व्याप्त है। जड़ से जड़ पदार्थ में सोयी हुई शक्ति निहित है। चेतन-तत्व में इसकी सक्रियता स्पष्ट लक्षित है। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर यह सुप्तावस्था में है। भगवान शिव जब तपस्यारत होते हैं तो अपनी शक्ति को जगाते हैं। इसकी जागृति से स्व-कल्याण संभव है। जीवन के समस्त अभावों का नाश इस शक्ति तत्व के कारण होता है। सीता अशोकवाटिका में विलाप करती हैं परन्तु उसकी शक्ति सम्प्रेषित होकर राम के जीवन में ऊर्जा का संचार करती है। परिवार और समाज के लिए इसकी अपनी उपयोगिता है। वन-गमन के पूर्व राम ने शक्ति को जिस रूप में नियंत्रित रखा वह समाजोपयोगी सिद्ध हुआ। यह शक्ति जब संघ-शक्ति के रूप में क्रियाशील हुई तब समस्त आर्य और अनार्य संस्कृति को एकता के सूत्र में बाँधकर मानवता को विजयिनी बनाने के लिए आततायी रावण का बध किया गया। बलि-वध, सुग्रीव-मैत्री तथा अन्यान्य वानर-भालू, रीछदि से मित्रता स्थापित करना अकारण नहीं है। वह शक्ति का संघीय एकात्मक रूप का प्रदर्शित होना है। पुरुष में शक्ति के इस तत्व की अन्तर्हिति के कारण उसे अर्द्धनारीश्वर की संज्ञा दी गई है। विश्व मानवतावाद का उद्‌य संघीय शक्ति से संभव है। 'रामचरितमानस' में महाकाव्यात्मक प्रणाली के रूप में ढालकर इस शक्ति का सानुपातिक उपयोग किया गया है।

शक्ति की अवहेलना अथवा दुरूपयोग से जीवन और जगत् में विसंगतियों का आगमन होता है। मंथरा की बुद्धि को सरस्वती द्वारा परिवर्तित किया जाना अकारण नहीं है। बुद्धि शक्ति का प्रतीक है। इसके अभाव में विघटन का इतिहास प्रारम्भ होता है। मंथरा को शापित बताने पर भी उसकी बुद्धि पर तरस खाने के लिए लोक चेतना विवश है...

''नामु मंथरा मंदमति चेरी कैकई केरि।
अजस पेटारी ताहि करि गई गिरा मति फेरि।''

इसी संदर्भ में कैकयी का कोप-भवन में जाना भी विचारणीय है। इसके अवहेलक स्वरूप को भारतवर्ष के ऋषि-मुनियों और अनुभवकर्त्ताओं ने सूक्ष्मतापूर्वक पकड़ा और उसके निराकरण के लिए परिस्थितिजन्य मान्यताओं के अनुकूल व्यवहार करने का निर्देश दिया। राम आततायी रावण की शक्ति का प्रत्युत्तर शक्ति से देते हैं। युग की मान्यताओं को स्वरित करते हुए इसका सर्वाधिक सुन्दर रूप निराला की 'राम की शक्ति पूजा' में उद्‌घाटित हुआ है जहाँ एक सौ आठ इन्दीवर की आवश्यकता को दिखाकर शक्तयाराधन की बात कही गई है। तुलसीदास ने नैतिकता का सबल अवलम्ब ग्रहण करते हुए शक्ति की शाश्वत परिकल्पना को पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय दृष्टि से स्वस्थ संस्कृति के निर्माण में सहयोग दिया है। अक्षर अनन्य ब्रहा की इसी आह्वादिका शक्ति के कारण विश्व में समता का भाव उत्पन्न होता है। यही शक्ति जब नृशंस व्यक्तियों के हाथ में चली जाती है तब रावण जैसा प्रकाण्ड विद्वान भी दिग्भ्रमित होकर सीता को चुरोन की योजना बनता है। ऐसे विध्वंसक अहंवाद के नाम पर विश्व-उत्पीड़न को बढ़ावा मिलता है। शक्ति के इस विघटित और संघटित रूप का एकत्र वर्णन-निरूपण 'रामचरितमानस' में हुआ है। शक्ति के इस चक्रिया क्रम को जीवन के वर्तुलाकार सिद्धान्त के रूप में समझा और स्वीकारा जा सकता है। यह संसार विश्वमोहिनी आद्याशक्ति का चरम विकास है। इसकी अवहेलना जीवन का क्रूर पक्ष है।

शक्ति रागात्मिका वृत्ति है। इस रागात्मिका वृत्ति के उत्कर्ष को 'रामचरितमानस' के पुष्पवाटिका प्रसंग में देखा जा सकता है। यहाँ राम और सीता का प्रथम मिलन हृदय से हृदय का मिलन-व्यापार है। दोनों ओर अनुराग पल रहा है। यह ऐसी पुरातन प्रीति है जिसे दूसरा नहीं समझ सकता। तुलसी ने इसकी उत्कृष्ट व्यंजना की है-

''सुमिरि सीय नारद वचन उपजी प्रीति पुनीत।
चकित बिलोकति सकल दिसि जनुसिसु मृगी सभीत।।''

सीता की दशा के साथ-साथ राम की दशा भी अवलोकनीय है। वे अनुज लक्ष्मण से अपने हृदय की बात कहते हैंः-

"कंकन किंकिनि नुपूर धुनि सुनि।
कहत लखन सन रामु हृदयँ गुनि।।
मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्हीं।
मनसा विस्व विजय कहँ कीन्ही।।"

रीतिकालीन कवि की मांसल सौन्दर्य चेतना में शक्ति-तत्व का अभाव होने के कारण ऐसा वर्णन संभव न हुआ। इसमें युगसापेक्षता की अनिवार्यता भी है। तुलसी ने शक्ति की विधायिका वृत्ति को पहचाना। परिणामतः जीवन में समरसता का आगमन हुआ। दोनों ओर हृदय-पक्ष की प्रधानता होने के कारण इसमें सर्वतोभावेन कल्याण की भावना निहित है। लोकजीवन के नैतिक प्राणदण्डों का स्थिरीकरण इसी शाश्वत परिकल्पित रूप से संभव है। इस शाश्वत रहस्य का आभास मात्र जिसे हो शाश्वत परिकल्पित रूप से संभव है। इस शाश्वत रहस्य का आभास मात्र जिसे हो जाता है उसे चमकीले प्रदर्शन अभिभूत नहीं करते। ऐसा व्यक्ति किसी बलवान की इच्छा का क्रीड़ा कन्दुक नहीं बन सकता। विभीषण का अपने भाई रावण को त्याग देना राम में छिपी शक्ति का सम्यक् मूल्यांकन है। उन्होंने अपने जीवन को शुभ प्रत्यय के अनुरूप ढालने का प्रयत्न किया।

इस प्रकार महाकवि तुलसीदास ने शक्ति के विधायक आयामों को जीवन और जगत की सम्पूर्णता में अभिव्यक्त कर उपयोगितावादी दृष्टिकोण से नैतिक मानदण्डों के अनुरूप विचार किया है। शक्ति के विघटित आयामों को प्रस्तुत कर उससे होने वाले दुष्प्रभावों की ओर संकेत भी दिया है। रावण की सम्पूर्ण इहलीलात्मकता का विनाश इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। यह संकेत वस्तुतः इस उद्देश्य से किया गया है कि मानव जाति कभी भी शक्ति का दुरूपयोग नहीं करे। जब तक इस अभिशाप से मानव को मुक्ति नहीं मिलेगी जब तक विश्वमानवता का कल्याण असंभव है। निष्कर्षतः शक्ति सार्वभौम चेतना का प्रर्याय है।

परिन्दे : स्मृतियों की धुंध से मुक्ति की दास्तान

डॉ. विद्या भूषण
स्नातकोत्तर, हिन्दी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

निर्मल वर्मा अतीत की महत्वपूर्ण घटनाओं को समय-प्रवाह के साथ अपने कलाकार-मन में सृजनात्मकता के साथ रचने-पकने देते हैं। उसे परिपक्व अनुभव के साँचे में ढलने देते हैं। इसे प्रक्रिया में उन अनुभवों के भीतर फैली हुई गहन अनुभूतियों और सूक्ष्म संवेदनाओं से पूरित स्मृतियों का एक खूबसूरत कोलाज बन उनके रचनाकार मन को मथने लगता है, जो एक विशेष समय संदर्भ में, एक विशेष मनः स्थिति और परिस्थिति में उनकी रचनाओं में स्वतः पूरी कलात्मकता के साथ शब्दबद्ध होता जाता है।

निर्मल वर्मा हिन्दी कहानी के स्वरूप और उसकी संवेदना में युगांतरकारी परिवर्तन लाने वाले एक विशिष्ट कहानीकार के रूप में जाने जाते हैं। औपनिवेशिक परंपरागत ढाँचे से मुक्ति प्रदान कर वे हिन्दी कहानी का एक नया संसार गढ़ते हैं। पहले से बिलकुल अलहदा कथा-संसार। स्थूल बाह्य यथार्थ की परिधि का चक्कर लगाना छोड़, उनकी कहानी अब जीवंत परिवेश और चित्रात्मक भाषा के साथ मानव-मन की अंदरूनी तहों की ओर उतरती है। पाठकों के सामने गहन अनुभूतियों, जटिल संवेदनाओं और आंतरिक हलचलों का एक नया मानसिक धरातल सामने आता है। वे व्यक्ति- मन के आंतरिक संसार में फैले, बिखरे और ठहरे हुए द्वन्द्व, तनाव और अकेलेपन की अनेकानेक गुत्थियों की गिरह को सृजनात्मक काव्यात्मक गद्य की भाषा में खोलने का प्रयास करते हैं। आधुनिक युग बोध और पर्वतीय वातावरण से गहरे रूप में संपृक्त एवं मानवीय संदर्भों के साथ उसका मोहक चित्रण कहानी को और भी प्रभावशाली बना देता है। निर्मल वर्मा के यहाँ हिन्दी कहानी की अनुभूतिमय नयी दुनिया है। यथार्थ और संघर्ष इस दुनिया में भी हैं, मगर बाहर कम, मानव-मन के भीतर अधिक। बाहरी दुनिया का दुःख और संघर्ष हम खुली आँखों से देख सकते हैं लेकिन मन, जिससे पूरा व्यक्ति -जीवन संचालित होता है, उसके भीतर पसरी हुई घनीभूत वेदना और पीड़ा को पूरी कलात्मकता के साथ निर्मल वर्मा जैसे कथाकार ही पकड़ पाते हैं और परिवेश की जीवंतता के साथ अभिव्यक्त कर पाते हैं। यहाँ नामवर सिंह के इस कथन को उद्धृत करना महत्वपूर्ण हो जाता है - ''विरासत में मिले फॉर्मूलों से मुक्त होकर जब कोई लेखक सीधे जीवन का साक्षात्कार करता है और जिंदगी की जटिलताओं में प्रवेश करके सच्चाई का पता लगता तभी नवीन कलाकृति का सृजन संभव होता है।''1

निर्मल वर्मा अतीत की महत्वपूर्ण घटनाओं को समय-प्रवाह के साथ अपने कलाकार-मन में सृजनात्मकता के साथ रचने-पकने देते हैं। उसे परिपक्व अनुभव के साँचे में ढलने देते हैं। इसे प्रक्रिया में उन अनुभवों के भीतर फैली हुई गहन अनुभूतियों और सूक्ष्म संवेदनाओं से पूरित स्मृतियों का एक खूबसूरत कोलाज बन उनके रचनाकार मन को मथने लगता है, जो एक विशेष समय संदर्भ में, एक विशेष मनः स्थिति और परिस्थिति में उनकी रचनाओं में स्वतः पूरी कलात्मकता के साथ शब्दबद्ध होता जाता है।

अपनी रचना प्रक्रिया पर बात करते हुए वे स्वयं कहते हैं - ''इसलिए महत्त्वपूर्ण मेरे लिए अनुभव नहीं, स्मृति का वह झरोखा है जिसमें से गुजरकर वे कहानियाँ बनती हैं। हर रचना एक तरह से सिंहावलोकन है। 'हवा' में उड़ते, आसपास मंडराते, अनुभव-खण्डों में किसको पकड़ पाता हूँ-किसको जानबूझकर छोड़ देता हूँ, किसको

सहज गुजर जाने देता हूँ, यह महज संयोग पर निर्भर नहीं करता, न ही यह मेरी कलात्मक दक्षता, या चालाक पकड़ पर निर्भर करता है, बल्कि जब तक उन अनुभव-खण्डों को मेरे भीतर का जादू-मन्त्र, शून्य पर गड़े स्मृति-संकेत अपने पास नहीं बुलाते, मैं उनका कोई फायदा नहीं उठा सकता। उनकी कभी कोई कहानी नहीं बनती।''2

परिन्दे, नई कहानी के दौर की महत्वपूर्ण और प्रतिनिधि कहानियों में से एक है। यह निर्मल वर्मा की बहुचर्चित एवं बहुपठित कहानी है। इस कहानी की लोकप्रियता के संदर्भ में शंपा शाह का यह कथन महत्वपूर्ण है -''निर्मल वर्मा हिंदी के सबसे अधिक पढ़े जाने वाले लेखकों में से हैं. और यह स्थिति 1958 ई. में आए उनके पहले कहानी संग्रह 'परिंदे' से शुरू होकर आज तक कायम है। आज की युवा पीढ़ी भी 'परिंदे' की कहानियों को पढ़ती है, तो आश्चर्यजनक रूप से उनमें निहायत अपना संवादी पाती है। उनकी भाषा, कथ्य, कहन का अंदाज, उनकी आधुनिक अन्तःचेतना की बेचौनी एक अर्धशती के आरपार अपनी ताजगी से हमें बींधती हैं। इस पर्याप्त लंबी अवधि में उनका ताजा-टटका बना रहना अपने में ही उनकी विशिष्टता का प्रमाण है। इसके कारणों को पड़ताल करने की दरकार निर्मल वर्मा की तो हो नहीं सकती लेकिन हमारे लिए इस पड़ताल का महत्व हो सकता है।''3

सवाल है कि आखिर क्या-कुछ है, इस कहानी में, जो अपने प्रकाशन युग से लेकर आज तक पाठकों के बीच अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति बनाई हुई है। हर बार अपने पाठ में एक नया आस्वाद देती है। शिल्प और अंतर्वस्तु की बात हो, कहन की विशिष्ट शैली की बात हो, समकालीन चिंतन और युगबोध की बात हो, महत्व और प्रासंगिकता की बात हो हरेक दृष्टि से 'परिन्दे' कहानी की गणना एक कालजयी और क्लासिक कहानी के रूप में होती रही है।

'परिन्दे', एक हिल-स्टेशन पर स्थित कॉन्वेंट स्कूल में अलग-अलग स्थानों से आए तीन पात्रों (लतिका, मि.ह्यूबर्ट और डॉक्टर मुकर्जी)की पीड़ा भरी प्रतीक्षा, घनीभूत वेदना और उससे मुक्ति की छटपटाहट की मार्मिक कहानी है।

अतीत और वर्तमान की कशमकश में उलझी हुई लतिका इस कहानी की केन्द्रीय चरित्र है। वह एक पहाड़ पर स्थित आवासीय कान्वेंट विद्यालय की अध्यापिका और होस्टल की वार्डन है। लतिका का जीवन अतीत की स्नेहिल स्मृतियों में ठहर सा गया है। बाहर से देखने पर वह अपने अध्यापकीय पेशेवर जीवन में व्यस्त दिखाई पड़ती है मगर भीतर से, मानसिक धरातल पर उसका निजी जीवन कहीं ठहरा हुआ- सा है। अतीत -ग्रंथी उसके व्यक्तित्व पर इस कदर हावी है कि -''इस छोटे से हिल स्टेशन पर रहते आज उसे अरसा हो गया, किंतु कब समय पतझड़ और गरमियों का घेरा पार करके सर्दियों की छुट्टियों की गोद में सिमट जाता है, उसे कभी याद नहीं रहता।'' विद्यालय में हमेशा की तरह इस बार भी सर्दी की छुट्टियाँ होने वाली हैं। विद्यालय की सभी छात्राएँ अपने-अपने घर जाने की तैयारी कर रही हैं। लतिका पिछले तीन वर्षों से छुट्टियों में कहीं नहीं गयी है। सर्द मौसम और सुविधाओं के अभाव में भी वह कान्वेंट स्कूल के हॉस्टल में ठिठुरन भरी रात बिताना पसंद करती है, किन्तु पुरानी स्मृतियों से बाहर निकलकर, किसी नई दुनिया या नये वातावरण में जाना उसे पसंद नहीं है। डर है कि इस प्रक्रिया में अतीत की कोमल स्मृतियाँ उसके मानसपटल से विलुप्त हो जाएंगी।

स्कूल की छात्राएँ लतिका से सवाल करती हैं-''मैडम, छुट्टियों में क्या आप घर नहीं जा रहीं? लतिका के पास एक बनावटी उत्तर होता है -'आई लव द स्नो-फॉल।' अपनी बनावटी उत्तर से वह स्वयं भी झेंप जाती है-''लतिका को लगा, यही बात उसने पिछले साल भी कही थी, और शायद पिछले-से पिछले साल भी। उसे लगा मानो लड़कियाँ उसे सन्देह की दृष्टि से देख रही हैं, जैसे उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया। उसका सिर चकराने लगा, मानो बादलों का स्याह झुरमुट किसी अनजाने कोने से उठकर उसे अपने में डुबो लेगा।''

एक तरफ वह छुट्टियों में स्कूल में ही रुकने के लिए स्नो फॉल देखने का बहाना बना रही हैं, वहीं दूसरी और उसे यह भी नहीं मालूम है कि अतीत की यादें स्नो (बर्फ) की तरह उसके मानसिक धरातल पर इस कदर जम गई हैं कि उसका पूरा जीवन-व्यापार कहीं थम-सा गया है। अपने अकेलेपन को उसने अपनी आदत बना ली है -''पहले साल अकेलापन कुछ अखरा था,अब आदी हो गई हूँ।'' लतिका का चरित्र बेहद संश्लिष्ट है। वह बाहर से जितना सहज और सरल दिखाई पड़ती है, वैसी है नहीं। वह एक साथ कई जीवन जी रही होती है। अतीत की कोमल अतृप्त आकाँक्षा उसके वर्तमान को उदासी और अकेलेपन से घेर लेती है। अपने वर्तमान के बिखराव से वह अंजान नहीं है। मगर उसने अपने को नियति के हवाले कर दिया है। वह अपनी निजी जिंदगी की निजता को जितना छिपाने का प्रयास करती है, वह उतनी ही प्रकट होती जाती है। एक चिंतक की भांति वह अपनी जिंदगी की जटिलताओं को खूब समझती है। अपने द्वंद्वग्रस्त जीवन में कभी अपने सहकर्मियों से तो कभी स्वयं से और कभी प्रकृति से संवाद करती रहती है। उसकी मुक्ति का मार्ग इसी संवादधर्मिता से, इसी मनोवैज्ञानिक काउंसलिंग से होकर निकलना है।

लतिका का एक अनुराग भरा अतीत है। एक ऐसा अतीत जिसकी कसक वह वर्तमान में भी पल-पल महसूस करती है। कुमाऊँ रेजिमेंट के मेजर गिरिश नेगी जिससे वह बेइंतिहा प्यार करती थी, जिसके साथ वह अपने खूबसूरत भविष्य के सपने देख रही थी। मगर नियति को कुछ और ही मंजूर था। एक दिन वह सुनहला ख्वाब टूट कर बिखर जाता है। कश्मीर जाने के दौरान गिरिश नेगी की प्लेन-क्रैश में असामयिक मृत्यु हो जाती है। यह घटना लतिका के जीवन को पूरी तरह से झकझोर कर रख देती है। उसके सारे सपने एक झटके में टूटकर बिखर जाते हैं। उसके व्यक्तित्व पर इस मानसिक आघात का गहरा असर पड़ता है।

अब वह रह- रह कर अपने प्रेमी के साथ बिताए गए प्रेम के विरल क्षणों को याद करके भावुक हो जाती हैं। अपने वर्तमान को प्रेम में बिताए गए क्षणों के आगे समर्पित कर देती है। एक अर्थ में गिरिश नेगी के साथ-साथ वह स्वयं को भी मिटा देती है। वह वर्तमान की ठोस जमीन से कटकर, अतीत की सुखद मगर वायवीय दुनिया में खोई रहती है। स्मृतियों के धुँधलके में चलते-चलते अकेलेपन की ग्रंथि का शिकार हो जाती है। जीवन की सहज गति से विपरीत, अब अतीत के सहारे ही वह वर्तमान में चल रही होती है। इस संदर्भ में आलोचक सुरेन्द्र चौधरी का कथन महत्वपूर्ण है -''निर्मल वर्मा की कहानी 'परिंदे' में जीवन-प्रवाह की एक दूसरी ही मुद्रा है। लतिका अतीत में लौट नहीं सकती, मगर अतीत उसे प्रिय है क्योंकि इस अतीत के साथ अक्षय स्मृतियाँ हैं, जीवन की सार्थकता है। वह अपने जीवन-लक्ष्य को नहीं पाएगी क्योंकि वह स्वयं अतीत है, व्यतीत है, मगर फिर भी जिजीविषा उसे प्रेरित करती है। वह अपने चारों ओर फैली विश्व-शक्तियों से अपरिचित नहीं है, मगर इस भयावह परिचय के बावजूद वह अपने व्यतीत की रक्षा के लिए सचेष्ट है।''4

लतिका सब-कुछ समझते हुए भी अपने अकेलेपन को नियति का सच मान बैठती है और आत्मपीड़न के भाव के साथ इसके बहाव में बहती चली जाती है-''डॉक्टर सबकुछ होने के बावजूद वह क्या कुछ है, जो हमें चलाए चलता है, हम रुकते हैं तो भी अपने बहाव में हमें घसीट लिये जाता है?'' अतीत के प्रति अतिरिक्त मोह नई कहानी की एक प्रमुख विशेषता रही है। इस संदर्भ में राजेंद्र यादव कहते हैं -''नई कहानी का नायक अतीत में जीता है, वह स्थानों से नहीं, स्मृतियों से आक्रांत है...जब कभी वह वर्तमान में आता है-तो ऐसे चिचियाते निरीह कबूतर के रूप में आता है मानों काल अपने क्षणों की उँगलियों से उसके एक एक पंख नोंच रहा हो और हर पंख के नोंचे जाने के दर्द के साथ वह आसन्न मृत्यु की जकड़ महसूस करता जाता हो।''5

इस कहानी में दो और प्रमुख पात्र हैं-मि. ह्यूबर्ट और डॉ .मुकर्जी।मि. ह्यूबर्ट संगीत शिक्षक हैं। वे पियानो वादक हैं। उनकी त्रासदी यह है कि वे फेफड़े के संक्रमण से पीड़ित हैं। दमा की बीमारी के कारण उनके मन पर हर

पल अपने जीवन को लेकर संशय का भाव बना रहता है। मृत्यु के भय ने उनके व्यक्तित्व को जकड़ लिया है। इस भय को वे अपने उदास संगीत में डूबा देना चाहते हैं। उदासी और भय के साथ उनका भी जीवन सहज नहीं है। डर, चिंता और अकेलेपन की पीड़ा ने उनके व्यक्तित्व को असहज और असुरक्षित बना दिया है -"मुझे लगा, पियानो का हर नोट चिरन्तन खामोशी की अँधेरी खोह से निकलकर बाहर फैली नीली धुंध को काटता, तराशता हुआ एक भूला सा अर्थ खींच लाता है। गिरता हुआ हर 'पॉज' एक छोटी-सी मौत है,.."जिस मन में मृत्यु का भय समाया हुआ है, उसी मन में प्रेम की आकांक्षा भी पल रही है। बेरंग जीवन में रंग भरने की हसरत लिए वे लतिका को प्रेम- पत्र लिखते हैं। इस बात से अनजान कि लतिका का एक अतीत है और उस अतीत से वह गहरे रूप में आज भी जुड़ी हुई है।

कहानी में दो प्रेम- पत्रों का उल्लेख आया है। प्रेम-पत्रों के सहारे निर्मल वर्मा लतिका के जीवन में अतीत के शिकंजे को क्रमशः ढीला करते जाते हैं। अतीत की प्रेम जनित स्मृतियों और उससे उत्पन्न अकेलापन और अवसाद को वर्तमान में प्रस्फुटित प्रेम के सहारे जीवन को सहज और स्वाभाविक दिशा में आगे बढ़ाते हैं। प्रेम ही जीवन में दर्द की वजह है तो प्रेम ही जीवन में आगे बढ़ने की शक्ति भी। सवाल है कि हम प्रेम को अपने जीवन में किस रूप में ग्रहण करते हैं। प्रेम केवल कोरी भावुकता भर नहीं है,यह जीवन का शाश्वत मूल्य है। एक जीवन दर्शन है।

पहला पत्र, जो लतिका के सामने आता है-वह है एक मिलिटरी अफसर का जो जूली के लिए लिखा गया है। जूली को उसी कुमाऊँ रेजिमेंट के एक मिलिटरी अफसर से प्रेम है, जिस रेजिमेंट से मेजर गिरिश नेगी आते थे। लतिका जूली को डाँटते हुए कहती है -'जूली, अभी तुम बहुत छोटी हो।' जूली के नाम का प्रेम -पत्र वह अपने पास रख लेती है। प्रेम में डूबे व्यक्ति को उसके प्रेम -पत्र से दूर रखना किसी सजा से कम नहीं है -'जूली ने ललचाई दृष्टि से लिफाफे की ओर देखा, कुछ बोलने को उद्यत हुई, फिर बिना कुछ कहे चुपचाप वापस लौट गयी।'

लतिका कुछ भी बोलने या करने के बाद स्थिर नहीं रह पाती है। उसके मन के भीतर द्वन्द्व का बवंडर उठ खड़ा होता है। अतीत और वर्तमान के बीच का तनाव ऐंठने लगता है। उसका मन क्षोभ से भर उठता है। यह तनाव,यह घुटन इस बात की साक्षी है कि वह अपने इस रूखेपन से ऊब चुकी है। अपने हर निर्णय के बाद हमेशा की तरह वह स्वयं से संवाद करने लगती हैं- 'क्या मैं किसी खूसट बुढ़िया से कम हूँ? अपने अभाव का बदला क्या मैं दूसरों से ले रही हूँ?' अपने अभाव और जूली के भाव के बीच उसका मन हिचकोले खाने लगता है। अतीत में किए गए प्रेम और अपने जीवन में उसके प्रभाव का वह पुनर्मूल्यांकन करती हुई इस निर्णय पर पहुँचती है कि -'शायद... कौन जाने... शायद जूली का यह प्रथम परिचय हो उस अनुभूति से, जिसे कोई भी लड़की बड़े चाव से सँजोकर, सँभालकर अपने में छिपाये रहती है एक - अनिर्वचनीय सुख, जो पीड़ा लिये है, पीड़ा और सुख को डुबोती हुई उमड़ते ज्वार की खुमारी, जो दोनों को अपने में समा लेती है... 'एक दर्द, जो आनन्द से उपजा है और पीड़ा देता है।'

जूली के जीवन में अंकुरित प्रेम लतिका को उसके अपने प्रेम और उसके प्रभावों पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित करता है। निर्मल वर्मा लतिका के मन के अंतर्द्वन्द्व को उभारने के लिए और साथ ही उस अंतर्द्वन्द्व के भीतर से ही उससे बाहर निकलने की एक बेचैनी को एक कंट्रास्ट के सहारे कहानी में उभारते चलते हैं। एक तरफ यादों की मोह भरी दुनिया है, दूसरी तरफ उसी मोह भरी दुनिया में त्रासद अनुभव भी हैं और सामने नियति का सवाल भी जोर -जोर से गूंज रहा है-'देवदार पर खुदे हुए अधमिटे नाम लतिका की ओर निस्तब्ध निरीह भाव से निहार रहे थे। मीडोज के घने सन्नाटे में नाले पार से खेलती हुई लड़कियों की आवाजें है गूँज जाती थीं : 'वाट डू यू वाण्ट?वाट डू यू वाण्ट?'

लतिका के पास केवल जूली का ही प्रेम पत्र नहीं है, बल्कि स्वयं उसके लिए लिखा गया प्रेम-पत्र भी है। यह प्रेम- पत्र ह्यूबर्ट ने लिखा है। डॉ. मुकर्जी के माध्यम से जब ह्यूबर्ट को लतिका और मेजर गिरिश नेगी के प्रेम संबंधो का पता चलता है, तो वह अपराध -बोध से भर उठता है। वह लतिका से विनती करता है -'वह पत्र ...उसके लिए मैं

लज्जित हूँ। उसे आप वापिस लौटा दें। समझ लें कि मैं उसे कभी नहीं लिखा था।'

लतिका की जड़ता इन दोनों प्रेम पत्रों के माध्यम से धीरे - धीरे दरकने लगती है। ह्यूबर्ट के प्रस्तावित प्रेम से अवचेतन में स्मृतियों का जमा हुआ बर्फ आहिस्ता- आहिस्ता पिघलने लगता है। उसे वर्षों बाद अपने होने का पुनः अहसास होने लगता है। उसके भीतर का स्त्री- मन सहजता की ओर उन्मुख होने लगता है -'उसे ह्यूबर्ट की इस बचकाना हरकत पर हंसी आयी थी, किन्तु भीतर- ही-भीतर उसे प्रसन्नता भी हुई थी, उसकी उम्र अभी बीती नहीं है, अब भी वह दूसरों को अपनी ओर आकर्षित कर सकती है। ह्यूबर्ट का पत्र पढ़कर उसे क्रोध नही आया, आयी थी केवल ममता। वह चाहती तो उसकी गलतफहमी को दूर करने में देर न लगती, किन्तु कोई, शक्ति उसे रोके रहती है, उसके कारण अपने पर विश्वास रहता है, अपने सुख का भ्रम मानो ह्यूबर्ट की गलतफहमी से जुड़ा है...'

कहानी में तीसरा और बेहद महत्वपूर्ण पात्र हैं-डॉ. मुकर्जी। प्राइवेट प्रैक्टिस के अलावा वे स्कूल में छात्राओं को हाइजीन -फिजियॉलोजी पढ़ाते हैं। कहानी में उनका परिचय कुछ इस प्रकार आता है -'वह आधे बर्मी थे, इसके चिह्न उनकी तनिक दबी हुई नाक और छोटी-छोटी चंचल आंखों से लक्षित हो जाते थे। बर्मा पर जापानियों का आक्रमण होने पर वह यहां से इस छोटे से पहाड़ी शहर में आकर बसे थे।' निश्चय ही डॉ.मुकर्जी के परिचय मे द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका उभर कर सामने आती है। मिस वुड और डॉ मुकर्जी के बीच के संवाद के माध्यम से निर्मल वर्मा ने मनुष्यता के इस त्रास को चिह्नित किया है -''बहुत साल पहले शहरों को जलते हुए देखा था'' डॉक्टर लेटे हुए आकाश की ओर ताक रहे थे, 'एक-एक मकान ताश के पत्तों की तरह गिरता जाता है। दुर्भाग्यवश ऐसे अवसर देखने में बहुत कम आते हैं।'

''आपने कहाँ देखा, डाक्टर ?''

''लड़ाई के दिनों में अपने शहर रंगून को जलते हुए देखा था।''

बर्मा से विस्थापित होकर भारत आने के दौरान रास्ते में उनकी पत्नी की मृत्यु हो गई थी। दरअसल इस युद्ध ने उनका पूरा घर -संसार ही उजाड़ दिया। इन तमाम लोमहर्षक घटनाओं का गहरा असर उनके व्यक्तित्व में देखा जा सकता है। विस्थापन और अजनबीपन की पीड़ा उनके व्यक्तित्व को चारों ओर से घेर लेती है। मिस्टर ह्यूबर्ट से बात करते वे कहते हैं -''हजारों मील अपने मुल्क से दूर मैं यहाँ पड़ा हूँ। यहाँ कौन मुझे जानता है! यहीं शायद मर भी जाऊँ। ह्यूबर्ट, क्या तुमने कभी महसूस किया है कि एक अजनबी की हैसियत से परायी जमीन पर मर जाना काफी खौफनाक बात है।' अपनी जड़ों से जुड़ने की बेचौनी उनमें हमेशा बनी रहती है-उनकी इच्छा है कि 'मरने से पहले मैं एक दफा बर्मा जरूर जाऊंगा।'

डॉ.मुकर्जी के व्यक्तित्व का एक दूसरा महत्वपूर्ण पहलू भी है। वे अपने जीवन को अतीत की त्रासद स्मृतियां की कुहेलिका में नहीं बिताना चाहते हैं। अतीत और वर्तमान के अंतर्संबंध को समझते हुए, वे वर्तमान में जीना पसंद करते हैं। वर्तमान को विस्थापित किए बिना, अतीत से बिना जकड़े ,अतीत को याद करते हैं। वर्तमान से लगाव रखकर ही स्मृतियों को भी जिंदा रखा जा सकता है। बिना वर्तमान के अतीत की स्मृतियों का कोई भविष्य नहीं होता है। उनके व्यक्तित्व में अतीत की यादों का रोना नहीं है, दुःख है, मगर वे इस दुःख से बाहर निकलने वाली सकारात्मक सोच भी रखते हैं। जीवन के कड़वे त्रासद अनुभवों ने उन्हें दार्शनिक बना दिया है। 'शेखर एक जीवनी' उपन्यास की भूमिका में अज्ञेय ने ठीक ही कहा है -''वेदना में एक शक्ति है, जो दृष्टि देती है।जो यातना में है, द्रष्टा हो सकता है।''6

डॉक्टर मुकर्जी और लतिका दो भिन्न प्रकार की विचारधारा के संवाहक हैं। लतिका जहाँ अपने विगत से चिपक गई है। हर पल अतीत का एलबम पलटते रहती है। वहीं डॉक्टर मुखर्जी विगत से टकराते हुए वर्तमान और

भविष्य की तरफ चलने और देखने वाले अग्रगामी सोच के व्यक्ति हैं।

डॉक्टर मुकर्जी का अतीत, लतिका के अतीत से कहीं ज्यादा त्रासद है, बावजूद वे अपनी सकारात्मक सोच के सहारे उससे उबरने की सक्रिय संकल्प शक्ति और भरपूर हौसला रखते हैं। इतना ही नहीं वे हर मौके पर लतिका को भी उसकी भावुक स्मृतियों से बाहर निकालने का प्रयास करते रहते हैं। वे कहते हैं -''कभी-कभी मैं सोचता हूँ, मिस लतिका, किसी चीज को न जानना यदि गलत है, तो जान-बूझकर न भूल पाना, हमेशा जोंक की तरह चिपटे रहना, यह भी गलत है।'

कहानी में डॉक्टर मुकर्जी के चरित्र को इस तरह विन्यस्त किया गया है कि एक ओर वह कहानी के मूड को भी संघनित करता हैं, वहीं दूसरी ओर लतिका को उसके मनोग्रंथियों से आजाद कराने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। डॉ.मुकर्जी का व्यक्तित्व अवसाद के भीतर से जीवन का रस और राग तलाशता हुआ व्यक्तित्व है। तभी तो वे ह्यूबर्ट से लतिका के अतीत-मोह के संबंध में कहते हैं -लतिका 'वह तो बच्ची है, पागल ! मरनेवाले के संग खुद थोड़े ही मरा जाता है !'

कहानी का शीर्षक 'परिन्दे' प्रतीकात्मक और प्रभावशाली है। जड़ता के विरुद्ध यह गति और स्वच्छंद उड़ान और स्फुरण का अर्थ भरता है। किसी खास मौसम में प्रतीक्षा और अनुकूल मौसम में उड़ान ,परिन्दों के जीवन की प्रकृति है। यही प्राकृतिक नियम है। यही सम्यक स्थिति है। परिन्दों की यही जीवनचर्या है।

'परिन्दे' अपनी सहज प्रकृति से कहानी के प्रमुख पात्रों में वर्तमान की समझ और भविष्य की चेतना भरता है। उनके व्यक्तित्व में आए हुए ठहराव को पंख देता है। वर्तमान के अनुसार जीवन जीने की प्रेरणा देता है।

'लतिका को याद आया, हर साल सरदी की छुट्टियों से पहले ये परिन्दे मैदानों की ओर उड़ते हैं, कुछ दिनों के लिए बीच के इस पहाड़ी स्टेशन पर बसेरा करते हैं, प्रतीक्षा करते हैं बरफ के दिनों की, जब वे नीचे अजनबी, अनजाने देशों में उड़ जायेंगे। क्या वे सब भी प्रतीक्षा कर रहे हैं-वह, डॉक्टर मुकर्जी, मिस्टर ह्यूबर्ट! 'लेकिन कहाँ के लिए, हम कहाँ जायेंगे ?'

कहानी में जब भी परिन्दे का उल्लेख हुआ है लतिका के मन में अपने अतीत से मुक्ति की बेचैनी दिखने लगती है। वह अपनी नियति से सवाल करने लगती है-'इन दिनों अक्सर उसने अपने कमरे की खिड़की से उन्हें देखा है -धागे में बँधे चमकीले लट्टुओं की तरह वे एक लंबी टेढ़ी-मेढ़ी कतार में उड़े जाते हैं-पहाड़ों की सुनसान नीरवता से परे, उन विचित्र शहरों की ओर,जहां शायद वह कभी जाएगी।'

सभी पात्र अपने अपने मन में पीड़ा-बोध और घनीभूत वेदना के साथ प्रतीक्षारत हैं। सबके मन में एक ही सवाल गूँज रहा है-'वाट डू यू वाण्ट?' जीवन से वे क्या चाहते हैं? एकबारगी अतीत के अनुस्मरण को झटक कर किसी भविष्य की तलाश में वे जाना भी चाहें तो उनके सामने वही सवाल सामने आ जाता है?-'कहाँ के लिए, हम कहाँ जायेंगे?' यह सवाल केवल लतिका, मि. ह्यूबर्ट या डॉक्टर मुकर्जी से जुड़ा हुआ भर नहीं है। यह सवाल युगीन आधुनिकता बोध से जुड़ा हुआ है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यह सवाल पश्चिम का प्रमुख सवाल बनकर उभरा था। अस्तित्ववादी दार्शनिकों ने इस पर गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया है। अजनबीपन, अकेलापन, निरर्थकता-बोध,विसंगति बोध,निराशा, घुटन, ऊब, पीड़ा, संत्रास, अतीत-मोह, जीवन की अर्थहीनता और अनिश्चितता जैसे विचार उभर कर वैश्विक स्तर पर छा गए थे। इन विचारों का प्रभाव और उससे मुक्ति की आकांक्षा 'परिन्दे' कहानी में देखी जा सकती है। इस संदर्भ में नामवर सिंह का यह कथन खासा महत्व रखता है-''क्या वे सब प्रतीक्षा कर रहे हैं? लेकिन कहाँ के लिए, हम कहाँ जायेंगे?' प्रश्न मामूली है लेकिन कहानी के माहौल में वह सिर्फ पक्षियों का या लतिका का व्यक्तिगत प्रश्न नहीं रह जाता। जैसे इस प्रश्न से लतिका, डॉक्टर मुकर्जी, मि०

ह्यूबर्ट सबका सम्बन्ध है-इन सबका और इनके अलावा भी और सबका। देखते-देखते प्रेम की एक कहानी मानव-नियति की व्यापक कहानी बन जाती है और एक छोटा-सा वाक्य पूरी कहानी को दूरगामी अर्थवृत्तों से वलयित कर देता है। हम कहाँ जायेगें-यह वाक्य सारी कहानी पर अर्थ-गंभीर विषाद की तरह छाया रहता है। प्रसंगात चेखव की कहानियों में बार-बार गूंजने वाला वह प्रश्न याद आ जाता है-हम क्या करें! वह प्रश्न जिसकी गूंज उन्नीसवीं सदी के सारे रूसी कथा- साहित्य और सामाजिक चिंतन में बार-बार सुनाई पड़ता है। जैसे सारा जमाना एक साथ पूछ रहा हो कि क्या करें?''7

कहानी के उत्तरार्द्ध में अतीत-ग्रंथी से मुक्ति की छटपटाहट का संकेत उभरने लगता हैं-'अब वैसा दर्द नहीं होता, सिर्फ उस दर्द को याद करती है, जो पहले कभी होता था...तब उसे अपने पर ग्लानि होती है। वह फिर जान-बूझकर उस घाव को कुरेदती है, जो भरता जा रहा है, खुद-ब-खुद उसकी कोशिशों के बावजूद भरता जा रहा है..'

कहानी के अंत में जूली को उसका प्रेम- पत्र लौटा देना, लतिका के नये जीवन के आरंभ का संकेत है। कहानी के आरंभ और अंत में वातावरण निर्माण के माध्यम से लतिका के जीवन में आये हुए परिवर्तन को समझा जा सकता है। कहानी की शुरुआत में-'अँधेरे कॉरीडोर में चलते हुए लतिका ठिठक गयी' यह लतिका के मन का निविड़ अँधेरा है, इसी वजह से वह वर्तमान की देहरी पर आकर बार-बार पर ठिठक जाती है और फिर तेजी से उसी अतीत में लौट जाती है। वहीं कहानी के अंत में प्रतीकात्मक रूप में स्थिति के बदलाव का संकेत उभरने लगता है। कहानी के अंत में प्रकाश का बिंब है। यह प्रेम का प्रकाश है। यह वर्तमान में पूरी तरह से लौटने का प्रकाश है-'कॉरीडोर में चलते हुए उसने देखा, जूली के कमरे से प्रकाश की एक पतली शहतीर दरवाजे के बाहर खिंच आयी है।...लतिका धीरे-धीरे दबे पाँव जूली के पंलग के पास चली आयी। जूली का सोता हुआ चेहरा लैम्प के फीके आलोक में पीला-सा दीख रहा था। लतिका ने अपनी जेब से वही नीला लिफाफा निकाला और उसे धीरे से जूली के तकिये के नीचे दबाकर रख दिया।' अंत में कॉरीडोर में बारिश की तेज बौछार और करीमुद्दीन का अपने माउथ ऑर्गन पर नयी फिल्मी धुन बजाना एक नई जिंदगी के आरंभ का स्पष्ट संकेत है।

'परिन्दे' आधुनिक भाव-बोध से युक्त अंतर्मन की एक खूबसूरत यात्रा है। एक ऐसी कहानी जिसमें घटनाएँ महत्वपूर्ण न होकर मानव-मन की संवेदनाएँ महत्वपूर्ण हैं। एक-एक शब्द में 'तनाव भरी चमक' है, जीवन का स्पंदन है। इंद्रिय ग्राह्य शब्दों के माध्यम से मानसिक अंतर्द्वन्द्व, मनोभावों का सूक्ष्म सांकेतिक अंकन हुआ है। जीवन दर्शन, चित्रात्मक एवं संगीतात्मक भाषा की तरलता, पर्वतीय प्रकृति इस कहानी की अन्यतम विशेषता है। कहानी के वातावरण पर निश्चित ही पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव है, मगर अपनी अनुभूतियों और मूल संवेदनाओं में कहानी पूरी तरह से भारतीय परिवेश को उजागर करती है। अतीत की कोमल स्मृतियों के प्रति लतिका की भावुकता और समर्पण को भारतीय स्त्री-मन की दृष्टि से समझा जा सकता है।

संश्लिष्ट जीवन को कहानी सूक्ष्मता के साथ परिष्कृत और प्रवाहपूर्ण भाषा में प्रस्तुत करती है। अनुभूतियों और संवेदनाओं का गद्य में पूरी कलात्मकता के साथ संगुंफन, परिन्दे कहानी की विशिष्टता है। जीवन से फूट रहे संगीत के भीतर समकालीन जीवन के अनेक पार्श्वों को उनकी सारी जटिलताओं और अन्तर्विरोधों के साथ छूती हुई यह कहानी किसी पहाड़ी नदी की तरह बहती चली जाती है।

कहानी में चारों ओर एक मौन, एक सन्नाटा सा पसरा हुआ है। मौन की सृष्टि करता हुआ शब्द संगीत की ध्वनियों में ढलता और पिघलता चला जाता है। कहानी में पसरी हुई संवेदनाओं और अनुभूतियों को हम अपनी त्वचा पर ही नहीं, अपने भीतर कहीं गहरे स्तर पर महसूस करने लगते हैं। एक उदास मगर मधुर संगीत भीतर कहीं गूंजने लगता है, जिसमें बहते हुए हम सब एक मौन में डूबते चले जाते हैं। इस दृष्टि से धनंजय वर्मा का मंतव्य महत्वपूर्ण है-''यहाँ वस्तु, चरित्र, यथार्थ-दृष्टि, भाषा, वातावरण सब-के-सब उस एक व्यक्ति के एक ही मूड में

केन्द्रित हैं और उसी में डूबते-से हैं-एक भावाकुल मूड में। यों कि इस मूड का एक वृत्त है और अनुभूतियाँ उस एक ही वृत्त में चक्कर काट रही हैं। लगता है जैसे प्यानो की एक ही रीड पर कम या अधिक जोर से उँगली का स्पर्श हो रहा है और एक ही स्वर कभी धीमा, कभी तेज होकर हवा में तैर रहा है, जो उदास मूड को स्थिर प्रगाढ़ता देता है।''8

'परिन्दे' कहानी में भाषा और प्रकृति के साथ व्यक्ति का नया जुड़ाव देखने को मिलता है। एक नये प्रकार का सह-अस्तित्व। पात्रों के मनोभाव वातावरण से एकाकार होकर विचार बनकर सामने आने लगते हैं। इस संदर्भ में नामवर सिंह का कथन उद्धृत करना महत्वपूर्ण जान पड़ता है-''पिछली पीढ़ी के कहानीकार वातावरण का चित्रण कभी कहानी को सजाने के लिए करते थे तो कभी यथार्थ का रंग देने के लिए। किन्तु नयी कहानी में वातावरण अलंकरण मात्र नहीं है बल्कि अन्तःकरण है। वातावरण-निर्माण में नये कहानीकार प्रायः बिम्ब- विधान का सहारा लेते हैं। ध्यान देने की बात है कि बिम्बों की प्रधानता नयी कविता में भी है। यह आकस्मिक संयोग नही। बिम्ब वस्तुतः आधुनिक युग की कलात्मक अभिव्यक्ति का अनिवार्य माध्यम हो गया है।''9

अपनी बुनावट और बनावट में हर बार अपने नये पाठ से यह कहानी एक अलग ही प्रभाव छोड़ जाती है। ऐसा लगता है कि मानो पहली बार हम इस कहानी को पढ़ रहे हैं। प्रत्येक पात्र पाठकों के सामने एक नये भाव-बोध के साथ उपस्थित हो जाते हैं। वस्तु, शिल्प और भाषा की दृष्टि से यह एक अद्वितीय कहानी है। अतीत, वर्तमान और भविष्य काल की तीनों अवस्थाओं को कहानी सूक्ष्मता से पकड़ती है। वर्तमान से कहानी कभी फ्लैश बैक में जाती है तो कभी परिंदों की उड़ान के माध्यम से भविष्य का संकेत करती है।

'परिन्दे' कहानी का महत्व इस बात में है कि उदासी और अकेलेपन के भीतर से भी निर्मल वर्मा मानव जीवन-संगीत और जीवन-रस ढूंढ लेते हैं। कहानी में सर्वत्र एक ट्रैजिक प्रभाव है मगर परिवेश से जुड़कर यह हमें अपने प्रभाव में प्रेम से भर देता है। कहानी की भाषा और शिल्प का असर ऐसा होता है कि हम कब कहानी के भीतर उपस्थित हो जाते हैं और कब कहानी हमारे भीतर, कहना कठिन हो जाता है। एक साथ कहीं अंतर्मन में भीतर बहुत भीतर कुछ टूटने लगता है, कुछ रिसने लगता है, एक बेचैनी सी होने लगती है। उस बेचैनी के भीतर से कुछ नया सृजित भी होने लगता है। कहानी पाठकों के मन पर एक अमिट छाप छोड़ जाती है।

आधार ग्रंथ-राजेन्द्र यादव द्वारा संपादित एक दुनिया समानान्तर में संकलित 'परिन्दे' कहानी, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, आवृत्ति संस्करण, 2000ई. पृष्ठ-165-192

संदर्भ ग्रंथ -

1.कहानी : नयी कहानी-नामवर सिंह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण,1994, पृष्ठ 53-54

2.शताब्दी के ढलते वर्षों में (प्रतिनिधि निबंध)-निर्मल वर्मा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,पृष्ठ-139

3.कथादेश पत्रिका -निर्मल वर्मा पर एकाग्र, संपादकीय -शंपा शाहरू आत्म का अनुसंधानरू निर्मल वर्मा, संपादक हरिनारायण, अतिथि संपादक शंपा शाह, अंक-02, अप्रैल -अगस्त,2021 पृष्ठ-8

4.हिंदी कहानी प्रक्रिया और पाठ- सुरेंद्र चौधरी राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ -71

5.कहानीः स्वरूप और संवेदना-राजेन्द्र यादव,वाणी प्रकाशन,नयी दिल्ली, आवृत्ति संस्करण -2020, पृष्ठ -120-21

6.शेखरः एक जीवनी (पहला भाग)-अज्ञेय, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा , संस्करण, 2001, पृष्ठ-अ

7. कहानी : नयी कहानी- नामवर सिंह,लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण, 1994, पृष्ठ-52-53

8.नई कहानी : संदर्भ और प्रकृति-संपादक-देवी शंकर अवस्थी, कुछ नये कहानीकारों की कहानियाँ-धनंजय वर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, छठा संस्करण 2019, पृष्ठ-200

9. कहानी : नयी कहानी-नामवर सिंह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण, 1994, पृष्ठ-33

पर्यटन : ज्ञानक संग उद्योग विशेष रोजगारक अवसर अनन्त-अशेष

डॉ. वन्दना कुमारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
मैथिली विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

विश्व पर्यटन मानचित्रपर भारतकेँ पर्यटन स्थलक रूपमे प्रोत्साहित करबाक लेल भारत सरकार द्वारा वर्ष 2002 मे "अतुल्य भारत अभियान" शुरू कयल गेल। एहिमे भारतीय संस्कृति, इतिहास, आध्यात्मिकता आ योगक प्रदर्शनक' भारतकेँ एकटा आकर्षक पर्यटन स्थलक रूपमे प्रस्तुत कयल गेल। तहिना, "अतिथि देवो भव", "अतुल्य भारत अभियान"क पूरक जकाँ भारत सरकार द्वारा संचालित एकटा कार्यक्रम थिक।

पर्यटन" की थिक, "रोजगार" की भेल आ एहि दुनूमे की अन्तर्सम्बन्ध छैक?

"पर्यटन" भेल सोद्देश्य घूमब-फिरब। ऐतिहासिक साक्ष्य उपलब्ध अछि जे मानव सभ्यताक आरम्भहिसँ मानव समुदायक जिज्ञासा घुमबा-फिरबा आ नव-नव चीज-वस्तु देखबा-गुनबाक रहल अछि। राजा-रजवाड़ाक कालखण्ड गवाह अछि जे राजकुमारलोकनि पढ़बाक लेल गुरुकुल तँ देश-समाज आ लोककेँ देखबा-बुझबा लेल "देशाटन"पर पठाओल जाइत छलाह। एकर अतिरिक्त, एक देशक राजा अथवा राजमहलसँ जुड़ल अन्य अधिकारीगण देशाटन लेल दोसर देश-राज्य जाइत छलाह-ओहि देश-राज्यक रहन-सहन, प्रशासन, शिक्षा, सैन्य व्यवस्था आ एहने-एहने अन्य जनोपयोगी-राज्योपयोगी व्यवस्थागत चीज-वस्तुकेँ देखबाक लेल, अध्ययन करबाक लेल। घुरिक' अपन देश अयलापर ओलोकनि ओहिठामक अनुभवक उपयोग अपन देश लेल करैत छलाह, व्यवस्थाजन्य आवश्यक सुधार करैत छलाह, जाहिसँ हुनको देशक प्रजालोकनि सुख-सुविधापूर्वक सानन्द रहि सकथि।

एकर अतिरिक्त सामान्य लोक लेल देशाटन (पर्यटन)क दोसर अर्थ तथा लाभ तहियो एवं आइयो होइत छल-अछिय देश-विदेशक भ्रमण करब आ ओहिठामक लोक, समाज, ओकर स्थिति, रहन-सहन, खान-पान, पाबनि-तिहार, अन्य सामाजिक-साँस्कृतिक परम्परा, उद्योग-बजार, नदी-समुद्र, अन्य प्राकृतिक सौन्दर्य आ सम्पदा आदिक अपन आँखिए अवलोकन आ तदुपरान्त अपन बुद्धि-विवेक संग विचार-विश्लेषण करब। तँ सब कालखण्डमे देशाटन (पर्यटन)क उपयोगिता सर्वविदित आ निर्विवाद रहल अछि। देशाटन (पर्यटन)सँ हमरालोकनिक ज्ञानमे वृद्धि होइत अछि, जीवनानुभवमे विस्तार होइत अछि, जीवनक एकरसता भंग होइत अछि तथा एहि सम्पूर्ण उपक्रममे हमरालोकनिक मनोरंजन सेहो होइत अछि।

इएह देशाटन (पर्यटन) बादमे कहियो आम लोक लेल तीर्थ-यात्र अथवा तीर्थाटन सेहो बनल। एहिमे राजा-महाराजासँ ल' क' सामान्यो श्रेणीक आम लोक देव-स्थान, मन्दिर-मस्जिद आदि दर्शन, पूजा-पाठ लेल जाइत छलाह। ई निजी आस्था-श्रद्धाक विषय होइत छल। आइयो लोक सब तीर्थाटन करिते छथि, सरकार आ व्यवस्थाक लोक देशाटन-राज्याटनपर जाइते रहैत छथि-अध्ययन करबाक लेल।

एही तीर्थाटन आ देशाटनक विकसित रूप अथवा एहि दुनूक समन्वित रूपक आधुनिक नाम अथवा शब्दावली भेल "पर्यटन"-जाहिमे कोनो व्यक्ति एसगरे कि परिवारक संग, मित्र-परिवारीजनक समूहक संग कि संस्थागत रूपसँ अपन सामर्थ्य, सुविधा आ आवश्यकताक अनुरूप देशमे कि देशक बाहरो घुमबा-फिरबा लेल जाइत छथि।

देशाटन अथवा तीर्थाटन अथवा पर्यटनसँ वस्तुतः लोकमे नवजीवनक संचार होइत अछि। कहल जाइत अछि जे जाहि अनुभूतिक सद्यः आ सुखद अनुभव ताजमहल कि कुतुबमीनारकेँ अपना आँखिए देखिक' कयल जा सकैत अछि, से कोनहु किताबमे पढ़िक' किन्नहु सम्भव नहि। शिक्षाक व्यापक प्रचार-प्रसार, लोकक बढ़ैत ज्ञान-पिपासा आ आर्थिक समृद्धि आइ लोककेँ विश्वक कोन-कोनमे जयबाक लेल आ अवलोकन-मनोरंजन लेल प्रेरित कयलक अछि।

दोसर दिस, "रोजगार" भेल-एहन क्रिया अथवा कर्त्तव्य, जकरा कयलासँ अहाँकेँ वस्तु अथवा टाकाक लाभ किम्बा आमदनी हो। ओ प्राप्त वस्तु अथवा टाका अहाँक जीवनयापनमे सहायक हो। अर्थात् रोजगार भेल आर्थिक क्रिया। जेना-नोकरी करब कि कोनो स्वरोजगारे करब कि खेती करब कि चाह-पानक दोकान करब, रिक्शा-ठेला-ताँगा-कार-बस चलायब आदि। एहन अनेक तरहक रोजगार भ' सकैत अछि।

मुदा पर्यटनक परिप्रेक्ष्यमे जखन रोजगारक चर्चा करबै तँ रोजगारकेँ दू तरहेँ देखय आ बूझय पड़त। पहिल, प्रत्यक्ष रोजगार आ दोसर भेल अप्रत्यक्ष रोजगार। जेना, एकठामसँ दोसर ठाम अहाँ जयबै तँ कोना जयबै-हवाइ जहाज, ट्रेन, बस, कार कि एहने कोनो दोसर साधनसँ। मानि लिय' जे हवाइ जहाज कि ट्रेनसँ गेलियै, तँ यातायातक ई दुनू माध्यम सांस्थानिक रूपसँ काज करैए। एहिमे काज कयनिहार लोक ओतय नोकरी करैए। ओकरा वेतन भेटैत छैक। आब एहि संस्थाक यात्री बढ़तैक तँ संस्थाक लाभ बढ़तैक-जकर लाभांश वेतन, भत्ता, बोनस आदि केर रूपमे ओकर कर्मचारियोकेँ भेटतैक। तँ ई नोकरी करब भेल प्रत्यक्ष रोजगार, अर्थात् सांस्थानिक रूपसँ कर्मचारीक रूपमे नोकरी करब। दोसर भेल, जतय अहाँ गेलियै, ओहिठाम अनेक एहन आवश्यकता छैक जे सांस्थानिक रूपसँ अहाँकेँ नहि भेटत। तखन की करबै? घबराउ नहि, ओतय अहाँक आवश्यकताक पूर्ति लेल उपलब्ध छैक, एकटा आओर समानान्तर व्यवस्थाय छोट-छोट स्वरोजगारीक। जेनाय चाह-पानक दोकानदार, गाइड कि पण्डा-पुरहित, कि स्थानीय यातायात लेल छोट-छोट सवारी चलौनिहार-तहिना अनेक चीज-वस्तुक। छोट-पैघ निजी होटल, धर्मशाला कि गेस्ट हाउस। ओहिठाम जतेक बेसी पर्यटक अओतैक-ततेक बेसी ओहिठामक अप्रत्यक्ष रोजगारी अथवा स्वरोजगारीक आमदनी सेहो बढ़तैक।

पर्यटन क्षेत्र वस्तुतः सेवा प्रदाता क्षेत्रक रोजगारी क्षेत्र थिक। कोनो तीर्थस्थल हो कि कोनो समुद्रक कछेर, पौराणिक-ऐतिहासिक भवन-किला हो कि साँस्कृतिक धरोहर-जखन ओतय कोनो देशी कि विदेशी पर्यटक अबैत छथि तँ ओ जतेक दिन ओतय रहताह, सब काज लेल पाइये खर्च करताह। हुनका रहबाक लेल होटल कि धर्मशाला कि गेस्ट हाउस चाही, भोजन-चाय-जलपान चाही, मनोरंजन लेल पार्क, जिम आ कि एहने दोसर स्थल सब चाही, यातायातक साधन चाही, ओहि स्थलक विशिष्टता बुझौनिहार गाइड चाही, जँ मोन खराब भेल तँ अस्पताल, डॉक्टर आ नर्स चाही। ई सब काज आ सेवा के देतैक-स्थानीय लोक देतैक। तँ ओकरा रोजगार भेटतै, से फइतै-फुलेतैक आ ओकर आमदनी बढ़तैक। अनुमान लगाउ जे पर्यटककेँ ओहि स्थानक कोनहु निशानी आकि उपहार किनबाक छैक-तँ स्थानीय हस्तकलाक कोनहु विशिष्ट स्थानीय वस्तु कीनत। मनोरंजन लेल ओहिठामक गीतनाद सुनत, नाटक-नृत्य देखत-ताहिसँ स्थानीय पारम्परिक आ लोक कलाकारकेँ रोजगार भेटतैक-बढ़तैक। कहबाक आशय जे अनेक तरहक पेशा आ कलासँ जुड़ल लोक पर्यटन क्षेत्रमे सेवा प्रदाता बनैत छथि। स्थानीय फल विक्रेता, ठेला-खोंमचापर छोट-छोट कारोबार करयवला लोक सेहो एहि सूचीमे अओताह। जखन ई सब अओताह तँ सरकारक स्तरपर एकरा विकसितो कयल जायत। सड़क बनत, तँ प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रोजगार बढ़त। यातायातक नब-नब साधन बनत, तकर कौशल विकास कयल जायत, तकर पढ़ाइ-प्रशिक्षण लेल नब-नब संस्थान

बनत-खुजत आ भारतमे खुजि रहल अछि, तखनो रोजगार बढ़त आ बढ़ि रहल अछि। निजी पूँजी निवेश सेहो होयत, ताहूसँ रोजगार बढ़त।

आशय ई जे "पर्यटन" आइ एक दिस जँ ज्ञान-विज्ञान आ मौज-मस्तीक माध्यम अछि तँ दोसर दिस आर्थिक गतिविधिकेँ बढ़बयवला रोजगारक साधन सेहो। भूमण्डलीकरणक दौरमे आब जखन पूरा विश्व एक भ' गेल अछि-सामर्थ्यवान लोक पूरा दुनिया देखि आ घूमि लेबय चाहैए। दुनियाक सब देश आ सब राज्य-क्षेत्र अपना-अपना ओहिठाम बेसीसँ बेसी पर्यटककेँ आकर्षित करबाक लेल तरह-तरह केर ब्योंतमे लागल रहैए। कोनो देश अथवा राज्यक आमदनी बढ़यबामे ई पैघ सहायक कारक अछि। एहिमे विदेशी पर्यटकक मामिला कोनो देश लेल अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अछि। कारण जखन एक देशक लोक दोसर कोनो देश जाइत अछि तँ खर्च-बर्च करबाक लेल ओ अपने देशक टाका (मुद्रा) ल' क' जाइत अछि, जकरा गन्तव्य देश गेलाक बाद ओहि देशक टाका (मुद्रा)क संग अदला-बदली करैत अछि। एवं प्रकारे पर्यटक ओहि गन्तव्य देशक विदेशी मुद्रा भण्डारकेँ बढ़यबामे सेहो योगदान करैत छथि।

एहि क्षेत्रमे भारतक स्थिति बेस प्रशंसनीय अछि। विविधतापूर्ण साँस्कृतिक समृद्धि आ अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य भारतकेँ एहन गन्तव्य बनबैत अछि जकरा देखबा-घुमबाक इच्छा देश-विदेशक लोककेँ होइत छैक। भारतमे स्थित पर्याप्त ऐतिहासिक स्थल, अनेक विश्व धरोहर स्थल, भौगोलिक विविधता, जलवायु भिन्नता आ प्राकृतिक उपहार मिलि एकरा विश्वक चौदहम आ साँस्कृतिक संसाधनक लेल चौबीसम सर्वश्रेष्ठ पर्यटन स्थल बनबैत अछि। वर्ल्ड ट्रेवल एण्ड टूरिज्म कांउसिल 2018 केर रिपोर्टमे भारतकेँ पर्यटनक क्षेत्रमे विश्वमे तेसर सर्वश्रेष्ठ गन्तव्य कहल गेल अछि।

भारतमे एक दिस कश्मीरसँ कन्याकुमारी धरि आ अरुणाचल प्रदेशसँ गुजरात धरि प्रत्येक क्षेत्रक अपन विशिष्टता आ संस्कृति छैक। लद्दाख-राजस्थानक शीतल-गर्म रेगिस्तान, गंगा-यमुना-ब्रह्मपुत्र प्रभृत नदी, नीलगिरि आ उत्तर पूर्वक वन, अण्डमान-निकोबार द्वीप समूह, पर्वत आ पठार आदिक प्राकृतिक विशेषता पर्यटकलोकनिकेँ आकर्षित करबाक क्षमता रखैत अछि तँ रहन-सहन, खान-पान, पाबनि-तिहारक व्यापक विविधता आ साँस्कृतिक विरासत देशी-विदेशी पर्यटकलोकनिकेँ अनेक विकल्प सेहो दैत अछि। हिन्दू धर्मक अतिरिक्त बौद्ध धर्म, जैन धर्म आ सिख धर्मक प्रवर्त्तकलोकनिक जन्मस्थल भारतमे होयबाक कारणेँ भारत-भूमि धार्मिक पर्यटन लेल सेहो प्रसिद्ध अछि। आब तँ रंगबिरही "नाइटलाइफ" सेहो खुजि गेल अछि। बढ़ैत कॉरपोरेट संस्कृतिक संग पब, क्लब, संगीत आ जीवन्त रेस्तराँ "नाइटलाइफ"मे अपन नव बाट आ आयाम ताकि लेलक अछि।

भारत एकटा एहन देश थिक जे सब आगन्तुक संग भव्य आ सम्मानजनक व्यवहार लेल जानल जाइत अछि। एकर आगन्तुक-अनुकूल परम्परा, विविध जीवन शैली आ साँस्कृतिक विरासत, विविध बहुरंगी मेला आ पाबनि-तिहार, पर्यटकलोकनिक लेल स्थायी आकर्षण थिक। एहिमे साहसिक रोमांचकारी पर्यटन लेल बर्फ, नदी आ पर्वत शृँखला, विज्ञान पर्यटन लेल तकनीकी पार्क आ विज्ञान संग्रहालय, आध्यात्मिक पर्यटन लेल तीर्थस्थल, विरासत पर्यटन लेल विरासत रेलगाड़ी आ होटल आदि सहजतासँ उपलब्ध अछि। योग, आयुर्वेद आ प्राकृतिक स्वास्थ्य रिसॉर्ट तथा हिल स्टेशन सेहो पर्यटकलोकनिकेँ आकर्षित करैत छनि। एकर अतिरिक्त, भारतीय हस्तशिल्प, विशेष रूपसँ आभूषण, कालीन, चमड़ाक बनल सामान, हाथी दाँत आ पित्तरिक काज विदेशी पर्यटकलोकनि द्वारा कीनल जायवला प्रमुख वस्तुजात थिक। एकटा मोट अनुमान अछि जे पर्यटकलोकनिक खर्चक लगभग चालीस प्रतिशत राशि एहने-एहने वस्तुजातक कीन-बेसाहमे खर्च होइत अछि। भारतमेँ चिकित्सा पर्यटन,

पर्यटन उद्योगक सबसँ तेजीसँ बढ़यवला खण्ड अछि। भारतमे उपलब्ध कराओल जायवला उपचार अपेक्षाकृत सस्त आ बहुविकल्पी अछि जे चिकित्सा पर्यटन स्थलक रूपमे एकर आकर्षण बढ़बैत अछि।

वस्तुतः पर्यटन आइ दुनियाक सबसँ पैघ उद्योग बनि गेल अछि। इएह कारण थिक जे भारतोमे पर्यटन सबसँ पैघ सेवा उद्योग थिक, जकर राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद अर्थात जी.डी.पी.मे 6.23 प्रतिशत तथा भारतक कुल रोजगारमे 8.78 प्रतिशतक योगदान अछि। मोट अनुमान अछि जे एखन भारतमे प्रत्येक वर्ष औसतन दू करोड़ विदेशी पर्यटकक आगमन होइत अछि आ लगभग 56 करोड़ घरेलू पर्यटक सेहो देशक कोनो-ने-कोनो कोनमे प्रति वर्ष जाइत रहैत छथि। भारत पर्यटन उद्योगसँ वर्ष 2008 मे लगभग 100 बिलियन अमेरिकी डॉलर अर्जित कयलक तँ वर्ष 2017 मे लगभग 23 अरब डॉलरक राजस्व अर्जित कयलक। वर्ष 2017 मे भारतमे एक करोड़ चारि लाख विदेशी पर्यटक आयल रहथि जखन कि वर्ष 2014 मे ई आँकड़ा 76 लाख 8 हजार छल। पर्यटन क्षेत्रमे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूपसँ लगभग 4 करोड़ 27 लाख लोककेँ रोजगार भेटल छैक। फिक्कीक एकटा रिपोर्टक अनुसार, वर्ष 2029 धरि केवल भारतमे सब साल पर्यटन क्षेत्रमे लगभग 10 लाख नोकरी किम्बा रोजगार सृजित होयबाक अनुमान अछि। विशेष रूपसँ भारतमे महिलालोकनिक लेल सेहो एहि क्षेत्रमे रोजगारक अनेक अवसर उत्पन्न भेल अछि आ होयत। वैश्विक स्तरपर अन्य क्षेत्रक तुलनामे पर्यटन क्षेत्रमे लगभग दुगुन्ना संख्यामे महिलालोकनि कार्यरत छथि।

पर्यटनक महत्त्वक अनुमान एहि तथ्यसँ सेहो लगाओल जा सकैत अछि जे विश्व भरिमे पर्यटकलोकनिक संख्या वर्ष 1950 मे मात्र अढ़ाइ करोड़ छल जे वर्ष 2016 मे बढ़िक' 123 करोड़ भ' गेल। वर्ष 2014 मे वैश्विक अर्थव्यवस्थामे पर्यटनक हिस्सेदारी 9.4 प्रतिशत छल। मॉरीशस, सिंगापुर आ दुबई आदि देशक जी.डी.पी.मे योगदानक दृष्टिसँ पर्यटन उद्योग दोसर स्थानपर छल।

भारतमे पर्यटनकेँ प्रोत्साहित करबाक लेल पहिल सचेत आ संगठित प्रयास वर्ष 1945 मे भेल जखन सरकार द्वारा भारत सरकारक तत्कालीन शैक्षिक सलाहकार सर जॉन सार्जेंटक अध्यक्षतामे एकटा समितिक स्थापना कयल गेल। तकर बाद, वर्ष 1956 मे दोसर पंचवर्षीय योजनाक संग योजनाबद्ध ढंगसँ पर्यटनक विकास-कार्य शुरू कयल गेल। छठम पंचवर्षीय योजनामे पर्यटनकेँ सामाजिक एकीकरण आ आर्थिक विकासक लेल एकटा प्रमुख साधन मानल गेल। भारत पर्यटन विकास निगम अक्टूबर, 1966 मे अस्तित्वमे आयल आ ई देशमे पर्यटन क्षेत्रक उत्तरोत्तर विकास, सम्वर्धन आ विस्तारमे प्रमुख भूमिकाक निर्वाह करय लागल। वर्ष 1980 केर दशकक बाद पर्यटन गतिविधिमे बेसी तेजी आयल आ सरकारक स्तरपर अनेक प्रयास भेल- वर्ष 1982 मे पर्यटनपर एकटा "राष्ट्रीय नीति"क घोषणा कयल गेल। वर्ष 1988 मे, पर्यटन लेल बनल "राष्ट्रीय समिति" पर्यटनमे सतत् विकास प्राप्त करबाक लेल व्यापक योजना तैयार कयलक। वर्ष 1992 मे एकटा "राष्ट्रीय कार्य योजना" तैयार कयल गेल आ वर्ष 1996 मे पर्यटन लेल राष्ट्रीय रणनीतिक मसौदा तैयार कयल गेल। वर्ष 1997 मे, नव पर्यटन नीति, पर्यटनक विकासमे केन्द्र आ राज्य सरकार, सार्वजनिक क्षेत्रक उपक्रम आ निजी क्षेत्रक भूमिकाकेँ मान्यता देलक। पर्यटन सुविधासभक निर्माणमे पंचायती राज संस्थान, स्थानीय निकाय, गैर-सरकारी संगठन आ स्थानीय युवालोकनिक भागीदारीक आवश्यकताकेँ सेहो मान्यता देल गेल। आब प्रत्येक वर्ष 27 सितम्बरकेँ "विश्व पर्यटन दिवस" मनाओल जाइत अछि। एहि दिवसक आरम्भ सर्वप्रथम वर्ष 1980 मे संयुक्त राष्ट्र विश्व पर्यटन संगठन द्वारा कयल गेल छल, आ तहियासँ प्रत्येक वर्ष अलग-अलग देश "विश्व पर्यटन दिवस"क मुख्य आयोजक बनैत अछि।

भारतमे पर्यटनकेँ प्रोत्साहित करबाक लेल सरकार द्वारा पर्यटन क्षेत्रकेँ "निर्यात घर" केर दर्जा देल गेल अछि

आ आयकर छूट, ब्याज सब्सिडी तथा कम आयात शुल्कक रूपमे निजी निवेशकेँ प्रोत्साहन देबाक प्रयास कयल गेल अछि। होटल आ पर्यटनसँ सम्बन्धित उद्योगकेँ विदेशी निवेश लेल एकटा उच्च प्राथमिकतावला उद्योग घोषित कयल गेल अछि, जाहिमे 51 प्रतिशत तक विदेशी इक्विटीक प्रत्यक्ष निवेशक स्वचालित मंजूरी आ 100 प्रतिशत अनिवासी भारतीय निवेशक अनुमति तथा अनुमोदन प्रदान करबाक सम्बन्धमे नियम सबकेँ सरल बनाओल गेल अछि।

विश्व पर्यटन मानचित्रपर भारतकेँ पर्यटन स्थलक रूपमे प्रोत्साहित करबाक लेल भारत सरकार द्वारा वर्ष 2002 मे "अतुल्य भारत अभियान" शुरू कयल गेल। एहिमे भारतीय संस्कृति, इतिहास, आध्यात्मिकता आ योगक प्रदर्शनक' भारतकेँ एकटा आकर्षक पर्यटन स्थलक रूपमे प्रस्तुत कयल गेल। तहिना, "अतिथि देवो भव", "अतुल्य भारत अभियान"क पूरक जकाँ भारत सरकार द्वारा संचालित एकटा कार्यक्रम थिक। "विजिट इंडिया 2009" अभियानक मुख्य उद्देश्य वर्ष 2008 मे मुम्बइमे भेल आतंकवादी हमलाक संग-संग वैश्विक आर्थिक संकटक बाद आगन्तुक आ पर्यटकलोकनिक आमदकेँ प्रोत्साहित करब छल। पर्यटन सर्किटक विकास हेतु "स्वदेश दर्शन योजना", विरासत स्थलसभक विकास हेतु "हृदय योजना" तथा धार्मिक पर्यटन स्थलसभक विकास हेतु "प्रसाद" योजना आनल गेल। एतबे नहि, विदेशी पर्यटकलोकनिक आगमनकेँ सरल बनयबाक लेल 166 देश लेल ई-वीजा व्यवस्था शुरू कयल गेल अछि। "अतुल्य भारत पर्यटक सुविधा प्रदाता प्रमाणपत्र" पोर्टल सेहो लॉन्च कयल गेल अछि। "धरोहर गोद लो" योजनाक अन्तर्गत कोनो विरासतकेँ कॉरपोरेट जगत आदिकेँ गोद देल गेल अछि। विदेशमे भारतीय धरोहर सबकेँ लोकप्रिय बनयबाक लेल "द हेरिटेज ट्रेल", भारतीयलोकनिकेँ अपन देशक प्रति जागरूक करबाक लेल "देखो अपना देश" नामसँ पर्यटन पर्वक अनुष्ठान तथा राज्यसभक विशेष स्थलमे पर्यटन समारोह "पर्यटन सभी के लिए"क आयोजन कयल जा रहल अछि।

जहिना स्वयं पर्यटन आब बहुआयामी अछि तहिना एहिसँ जुड़ल प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रोजगारक क्षेत्र सेहो बहुआयामी भ' गेल अछि। पर्यटक लेल घूमब-फिरब ओकर ज्ञानार्जन आ मौज-मस्तीक साधन थिक तँ पर्यटन स्थलपर कार्यरत लोक लेल आमदनीक माध्यम। भारत तँ ओहूना "अतिथि देवो भव" केर देश थिक। अतिथि सत्कार माने देव सत्कार मानैत अछि ई देश। रोजगारक अर्थ मात्र नोकरी छैक, ताहि धारणाकेँ तोड़ैत अछि ई क्षेत्र आ अप्रत्यक्ष रोजगारोक असीम सम्भावना सृजित करैत अछि।

Problems & Prospects of Scientific Research in Bihar Today

Dr. Amrita Chakraborty
Assistant Professor
Dept. of Chemistry
A.N. College, Patna

A recent study (2019) has revealed that 18 (61 blocks) of 38 districts of Bihar are affected by ground water arsenic. These districts are termed as high contamination of arsenic. Besides it is said that 11 districts of Bihar composing 3791 rural wards affected by fluoride contamination.

The state of Bihar is a vast agricultural land mass with sporadic islands of industry, trade & commerce. Share of agriculture is 56% of GDP where industry share stands at 8% only. Service sector has its share of 36% as of data available up to 2015. The Gangetic plain comprising of alluvial soil is suitable for cultivation of rice, wheat and other cereals along with various types of fruits and vegetables. Central Bihar and southern parts have historical significance since three thousand years ago. This land has reared a very old civilisation. This old civilisation is the gift of abundant water resource of the Ganga and its tributaries, the perennial source of water and the alluvial soil of the central India plain. Both rice and wheat produced immensely contributed to the growth of the civilisation on this land since 1500 BC.

However, the growth rate of GDP (Gross Domestic product) was not satisfactory in the post-independence period. The very slow rate of growth of urbanization and industrialisation in the post independent period (plan period) was responsible for the low rate of growth of GDP vis-a-vis very low per capita income of the state. Per capita income is the most important tool to measure poverty level of the state. This important device indicates that Bihar is the poorest state in India - per capita income being lowest among the 29 states.

It is no denying the fact that faster growth of small, medium and, if possible large-scale industries may be brought about a structural change in Bihar's economy. It should be the state Govt's endeavour to promote industries with the available resources and infrastructures. Recently some steps have been taken by the state government to promote industrialisation and development of service sector. Some structural changes have seen in the GSDP Pattern of the state during 2015 to 2021. Surplus human resources in the form of disguise unemployed to be moped up and deployed in industry for gainful employment. Growth of service sector appears better in the recent past but yet to attain the faster growth rate of the developed states. In 2021 service sector

sharing 61% of GDP of the state where industry has risen to 15% and agriculture 25%.

The most prospective area of growth in the state's economy is tourism. Travelling and tourism has to be explored to the maximum extent and for that matter necessary infrastructure like construction of road, development of transport facilities, setting up of hotels and guest-houses are to be made with government incentives. It is that historical place where Goutam Buddha with his divine advent of love and non-violence won the hearts of millions and millions of people throughout the world. These historical events may be explored for the purpose of tourism of the state which will create employment opportunities and income for the young generation of the state. Mahavir Jain also related to this land for his religious exploration and education. This is equally important and may be encouraged for Jain tourism in the state.

Development of agriculture requires growth of small and minor irrigation along with exploration of waterways for inland transport. Mostly small and minor irrigation in the form of river lift irrigation, pump set clusters, excavation of canals and field channels, these are extremely important for raising per acre productivity in agriculture and thereby augmenting income of the farm sector so that employment in agriculture becomes gainful. Use of chemical fertilizers and pesticides would be automatically increased with the augmented income of the farming community.

Here lies the scope of organic chemical synthesis to synthesize agrochemicals. This will meet the domestic demand of fertilizers and manures in the state and may be sent for marketing in neighbouring states. However, the fertilizer plants should produce eco-friendly organic manures as far as practicable with traditional chemical fertilizers. Even the pesticides should be new generation eco-friendly organic products to suit environment.

As of 2021 situation has changed to some extent. Service sector has considerable impact having 61% of GSDP, agriculture has come down to 25% and industry in spite of its sluggish growth has reached near 15%. However per capita income still alarmingly low in Bihar showing it as a poor state. Though total State wise GDP position -- Bihar is on 8th among the 29 states. To wipe out the poorest state stigma by developing the key industries and augmenting income by generation of employment. Food processing is an area which has not been explored to the desired extent. Processing of agricultural products like lichis and mangoes, which are abundantly produced in Bihar has a very bright prospect for generation of income and employment. These processed food products have ready market all along the nation.

Another two/three sectors may contribute to the state's economy by generation of employment and augmenting income. With the rapid growth of housing and building constructions in big cities like Patna, Gaya and others, demand for paints and other chemicals are increasing at a fastest rate. To meet the domestic demand of the state and other areas chemical industry related to housing materials is an important area to

develop. These are an ever-expanding area and create employment in the long and the short run.

Pharmaceuticals is another thrush area which should be taken up for contributing significantly to the state economy. With the growth of hospitals and medical centres for treatment both in private and public sector, requirements of drugs and pharmaceutical products likely to be increased many folds during the years to come. To meet this ever-growing demand of the state's domestic market expansion of pharmaceutical industries are on the cards. This sector is going to flourish like anything.

To provide suitable manpower for the upcoming sophisticated industries organic chemical synthesis must be taken up widely right now. Today's college and university students are to be trained properly by imparting necessary skills and expertise so that tomorrow they may join the industry. Spread of knowledge of organic synthesis is the quintessential for today's students of chemistry in the state to equip them with skill and expertise as required.

Pollution control is the most urgent area for a state to protect the environment. Scientific research can help a lot in emission control system of automobiles. Waste water treatment plants may improve sewage system to a great extent. Electrostatic precipitation of impurities from industrial gas is very urgent to control pollution.

Water pollution is a posing problem for the state of Bihar. In a recent study it is revealed that 22 major rivers of the state have been seriously polluted even bathing in these rivers are not safe. The root cause of this huge pollution is the direct dumping of the pollutant in these rivers by 31 out of 38 districts of Bihar. This pollution rate is

increasing alarmingly day by day which must be arrested at the earliest by adopting scientific measures like setting up of water treatment plants.

A recent study (2019) has revealed that 18 (61 blocks) of 38 districts of Bihar are affected by ground water arsenic. These districts are termed as high contamination of arsenic. Besides it is said that 11 districts of Bihar composing 3791 rural wards affected by fluoride contamination. Several research groups are engaged to find techniques for averting contamination of these polluting agents from the ground water of Bihar.

Unfortunately, the state of Bihar, finds itself neck deep in the business of producing untreated waste products and it is a matter of concern that the count of cancer ailments in the state is almost second to none in the country. As a natural corollary to human existence, the mountains of untreated waste in and around the Patna city limits continue to grow, with currently generating about 1,200 tonnes, a number that is expected to double by 2036. About 14% of the urban waste of Patna contains hydrocarbon pollutants with its thermoplastic derivatives like thermocol plates and single use polyethylene terephthalate (PET), Polyvinyl Chloride (PVC) and Municipal Solid Waste (MSW) littered which is a major cause of soil pollution. Other than cancer, there are several disorders related to Liver, Gastro-intestine and reproductive organs reported till date which are believed and observed to be induced or caused by several environmental pollutants including poly-sterene, and other heavy metals like Cd, Cr and Pb. So, the practice of recycling of industrial substances which are harmful to the environment by scientific measures is too urgent.

Ultimately to preserve the quality of environment by averting the contamination and degradation of air, water and land resources by adopting scientific methods would be the need of the hour.

Water Resources, Food Security and Climate Change Nexus : Challenges and Solutions for a Sustainable Future.

Dr. Bhawana Nigam
Assistant Professor
P.G. Dept. of Geography
A.N. College, Patna

In an increasingly interconnected world, the nexus of water resources, food security, and climate change poses multifaceted challenges that demand urgent attention. The competition for restricted water resources increases as agriculture, industry, and urbanization intensify, intensified by shifting precipitation patterns driven by climate change.

In an increasingly interconnected world, the nexus of water resources, food security, and climate change poses multifaceted challenges that demand urgent attention. The competition for restricted water resources increases as agriculture, industry, and urbanization intensify, intensified by shifting precipitation patterns driven by climate change. Extreme weather events, including droughts, floods, and hurricanes, disrupt food production, damage infrastructure, and impact water availability, leading to crop failures, food shortages, and compromised water quality. Glacial retreat in regions like the Himalayas threatens major river systems while rising temperatures reduce crop yields and livestock productivity. Sustainable agricultural practices, efficient water management, and climate-resilient food production are imperative to mitigate these challenges. Furthermore, robust policy frameworks and international cooperation are crucial for a sustainable future. Understanding and addressing this intricate nexus are vital to ensure global food security, water access, and environmental sustainability while safeguarding the well-being of current and future generations.

Key words : water, food security, climate change, holistic approach, sustainability.

1. Introduction : In a world grappling with the consequences of a rapidly changing climate, two fundamental pillars of human existence stand at the forefront of global concern: food security and access to clean, reliable water resources. While distinct in their nature, these challenges are profoundly interconnected, forming a complex and intricate web that shapes the well-being of individuals, communities, and nations. The relationship between water, food security, and climate change is a critical nexus that demands rigorous examination, innovative solutions, and proactive policies to ensure a sustainable future for all.

The Global Imperative: Food Security

Food security is more than just a matter of having enough to eat. It encompasses

the broader concept of access to safe, nutritious, and culturally acceptable food, ensuring that individuals and communities can lead healthy, active lives. In a world where the human population continues to expand, reaching nearly 10 billion people by mid-century according to projections, the challenge of feeding everyone while respecting planetary boundaries looms large.

The Precious Resource: Water

Water is life's most essential resource, underpinning agriculture, industry, health, and ecosystems. It is the lifeblood of food production, serving as the essential medium through which crops grow and livestock thrive. Yet, as the global population burgeons and water demand surges, freshwater resources are under increasing stress. Water scarcity, exacerbated by climate change-induced shifts in precipitation patterns and increased evaporation rates, is becoming a harsh reality in many regions around the world.

The Climate Change Factor

The Threat of climate change casts a long shadow over both food security and water resources. Rising temperatures, altered precipitation patterns, and more frequent and severe weather events pose significant threats to agricultural productivity and water availability. Crop yields are increasingly vulnerable to heat stress, droughts, and flooding, while water resources are strained by erratic rainfall and the melting of glaciers and polar ice caps.

The Interconnected Nexus

The intricate interplay between these three elements—water, food security, and climate change—creates a delicate balance that is increasingly challenging to maintain. Changes in temperature and precipitation patterns affect crop growth and water availability, amplifying the risks of food shortages and water crises. Furthermore, the energy-intensive nature of food production contributes to greenhouse gas emissions, exacerbating climate change in a vicious cycle.

2. Research Focus and Objectives

This research paper delves into the complex web of interactions between water resources, food security, and climate change. It seeks to unravel the challenges posed by this nexus and explore innovative strategies and solutions to mitigate its adverse effects. By examining the latest scientific findings, policy initiatives, and on-the-ground experiences, this paper aims to comprehensively understand the issues at hand and offer insights into how individuals, communities, and nations can chart a sustainable course forward.

In the pages that follow, it will look into the current state of water resources, food security, and climate change, investigating their impacts on both local and global scales. It will explore the risks and vulnerabilities, but also the opportunities for

resilience and adaptation. Through a multidisciplinary lens, it will analyse policy frameworks, technological advancements, and community-based approaches that hold promise for a more secure, equitable, and sustainable future for all.

3. The current state of water resources :

The current state of global water resources is a matter of growing concern as the world faces numerous challenges related to water availability, quality, and management. Several key issues characterize the current state of water resources:

- **Water Scarcity :** Water scarcity is a pressing issue affecting many regions around the world. It occurs when the water demand exceeds the available supply. Both physical scarcity (insufficient water resources) and economic scarcity (lack of infrastructure and resources to access available water) are prevalent in various parts of the world. Regions in the Middle East, North Africa, South Asia, and parts of the United States, among others, experience chronic water scarcity.
- **Unequal Distribution:** Water resources are not evenly distributed geographically or temporally. Some regions have abundant water resources, while others face chronic shortages. Additionally, seasonal variations and changing precipitation patterns due to climate change exacerbate water distribution inequalities.
- **Groundwater Depletion :** Many areas rely heavily on groundwater for drinking water and irrigation. Over-pumping of groundwater is widespread, leading to the depletion of aquifers. This has serious long-term consequences, including land subsidence, reduced water quality, and a diminishing buffer against drought.
- **Water Quality :** Water quality issues, including contamination by pollutants, industrial runoff, and inadequate wastewater treatment, threaten the availability of clean and safe drinking water. Poor water quality contributes to waterborne diseases and environmental degradation.
- **Climate Change Impact :** Climate change is altering precipitation patterns, increasing the frequency and severity of droughts and floods, and causing shifts in snowmelt timing. These changes have profound implications for water availability and exacerbate water stress in many regions.
- **Rivers and Ecosystems :** Many rivers and freshwater ecosystems are under stress due to dam construction, water diversion, and over-extraction. These alterations disrupt natural flow regimes, harm aquatic ecosystems, and impact the services they provide, such as fisheries and flood control.
- **Water Use in Agriculture :** Agriculture is a major consumer of freshwater resources, accounting for a significant portion of global water withdrawals. The inefficient use of water in agriculture exacerbates water scarcity and raises questions about sustainable agricultural practices.
- **Urbanization and Industrialization :** Rapid urbanization and industrial growth lead

to increased water demand in cities and industrial centers. This often results in competition for water resources between urban, industrial, and agricultural sectors.

- **Water Stress in Mega-Cities :** Many of the world's largest cities, often situated near coastlines or in arid regions, face severe water stress. Expanding populations and limited access to freshwater sources strain the capacity to provide safe drinking water and sanitation services.
- **Water Governance and Management :** Effective water governance and management are essential for addressing these challenges. However, in many regions, governance structures are inadequate, leading to misallocation of resources, inefficient use, and disputes over water rights.

Addressing these water resource challenges requires a multifaceted approach that includes sustainable water management practices, improved infrastructure, conservation efforts, and measures to adapt to changing conditions. Moreover, international cooperation and integrated water resource management strategies are essential to ensure equitable and sustainable access to water resources for all.

4.The challenges of Global food security: -

According to a UN report on water and food security, several critical challenges threaten global food security:

- **Water Scarcity :** A significant portion of the world's population depends on agriculture for livelihood and sustenance. However, water scarcity is increasingly affecting agricultural productivity. Competition for limited water resources from various sectors, including industry and urban areas, further exacerbates this challenge.
- **Climate Change:** Changing precipitation patterns, more frequent and severe droughts and floods, and rising temperatures due to climate change directly impact crop yields and livestock health. Extreme weather events can lead to crop failures and disrupt food supply chains.
- **Soil Degradation :** Unsustainable agricultural practices, such as overuse of fertilizers, pesticides, and intensive monoculture farming, degrade soil quality over time. This diminishes the land's capacity to produce food and necessitates more resources to maintain yields.
- **Biodiversity Loss :** Declining biodiversity threatens food security as it reduces genetic diversity in crops and makes them more susceptible to diseases and pests. Loss of pollinators like bees also affects crop pollination.
- **Food Waste :** A significant portion of food produced is lost or wasted during production, distribution, and consumption. Reducing food waste is essential to improving food security.

Addressing these challenges requires holistic and sustainable approaches to agriculture, water resource management, and climate change mitigation and adaptation. The UN report underscores the importance of integrated policies and international cooperation to ensure a resilient and secure global food supply.

5. Climate change and agriculture : -

Climate change and agriculture are intricately connected, with climate change significantly impacting the agricultural sector and, conversely, agriculture playing a key role in contributing to climate change. This relationship is multifaceted and underscores the importance of addressing climate change for the sustainability of food production and global food security.

- **Altered Weather Patterns :** Climate change is leading to shifts in weather patterns, including changes in temperature, precipitation, and the frequency and intensity of extreme weather events. These changes can disrupt planting and harvesting schedules, reduce crop yields, and damage livestock.
- **Increased Heat Stress :** Rising temperatures can cause heat stress in crops and livestock, affecting their growth and productivity. Certain crops, like wheat and maize, are particularly sensitive to temperature increases, which can lead to reduced crop yields.
- **Altered Pest and Disease Patterns :** Climate change can influence the distribution and behaviour of pests and diseases that affect crops and livestock. Warmer temperatures can extend the range of pests, allowing them to thrive in new areas and infest crops.
- **Water Scarcity :** Changes in precipitation patterns and increased evaporation can lead to water scarcity, affecting irrigation for agriculture. Droughts can reduce crop yields and the availability of water for livestock.
- **Loss of Biodiversity :** Climate change can disrupt ecosystems, leading to changes in the distribution of plant and animal species. Loss of biodiversity can impact pollinators, which are crucial for many crops.
- **Emissions from Agriculture :** Agriculture contributes significantly to greenhouse gas emissions, primarily through the release of methane from enteric fermentation in livestock, nitrous oxide from fertilizer use, and carbon dioxide from land-use changes such as deforestation. These emissions exacerbate climate change.
- **Feedback Loops :** Climate change can create feedback loops in agriculture. For example, as temperatures rise and crops become less productive, farmers may increase irrigation, leading to further water scarcity and increased energy use.

Addressing the relationship between climate change and agriculture is vital for global food security. Mitigation efforts, such as reducing greenhouse gas emissions from agriculture and transitioning to more sustainable farming practices, are necessary to

limit the impact of climate change on agriculture. Additionally, adaptation strategies, such as developing drought-resistant crops and improving water management, are essential for building resilience in the face of changing climate conditions.

6. Water Resources, Food Security, and Climate Change Nexus: Challenges

The nexus of water resources, food security, and climate change presents a complex web of challenges that demand immediate attention.

- **Growing Water Scarcity :** Increasing global demand for water, coupled with the uneven distribution of freshwater resources, leads to water scarcity in many regions. This scarcity is exacerbated by climate change-induced shifts in precipitation patterns and more frequent droughts, putting pressure on agriculture's ability to secure water for irrigation.
- **Agricultural Impact on Climate :** Agriculture is a major contributor to greenhouse gas emissions through practices like enteric fermentation in livestock, synthetic fertilizer use, and deforestation. These emissions exacerbate climate change, creating a feedback loop where a changing climate further stresses agriculture.
- **Climate-Induced Crop Loss :** Altered weather patterns, rising temperatures, and extreme weather events adversely affect crop yields. Crops become more susceptible to heat stress, pests, and diseases, jeopardizing food production and food security.
- **Water Quality Issues :** Climate change can intensify water quality problems, affecting both drinking water and agricultural water sources. Increased pollution and higher temperatures can compromise the safety and availability of water resources.
- **Impact on Livestock :** Livestock are sensitive to temperature changes and heat stress, reducing their productivity. Climate-induced shifts in vegetation also affect grazing patterns and food sources for livestock.
- **Vulnerability of Smallholders :** Small-scale farmers, often in regions most vulnerable to climate change, face challenges adapting to new climate realities. They lack the resources and technology to mitigate risks effectively.
- **Global Food Trade Disruptions :** Climate change can disrupt global food supply chains by causing crop failures and limiting food exports from affected regions.
- **Water-Energy-Food Nexus :** The interconnection between water, energy, and food systems exacerbates challenges. Agriculture consumes significant energy for irrigation and processing, while energy production and water availability are closely linked.

Addressing these challenges necessitates a multifaceted approach. Sustainable agricultural practices, efficient water management, climate-resilient crop varieties,

and global cooperation are essential components of a comprehensive strategy to ensure food security in a changing climate. Failure to act could lead to food shortages, rising food prices, and increased vulnerability for millions of people worldwide.

7. The impact of water scarcity, food, and climate change in India; at a glance: -

India's complex nexus of water scarcity, food security, and climate change poses significant challenges, especially for its large population and agrarian economy. With over a billion people to feed, India's agricultural sector is not only a source of livelihood for millions but also a linchpin of its food security. However, the sector is increasingly susceptible to the adverse impacts of climate change, including erratic weather patterns, extreme events, and rising temperatures. These factors jeopardize crop yields and livelihoods, leading to food shortages and malnutrition issues.

Water Scarcity :

- **Groundwater Depletion :** India is the largest user of groundwater globally, primarily for irrigation. Excessive pumping of groundwater has led to its depletion in several regions, For example- The Indus Basin aquifer, shared by Pakistan and India, is crucial for irrigated agriculture in both countries. Excessive pumping for irrigation, especially in Punjab, has led to a substantial decline in groundwater levels. This depletion poses risks to food production and water availability for millions of people.
- **Erratic Monsoons :** Climate change has disrupted India's monsoon patterns, leading to uneven distribution of rainfall. This results in water scarcity in some areas and flooding in others, affecting crop yields and water availability. In 2021, India experienced uneven monsoon rainfall distribution, which had significant impacts on various regions: Rajasthan and parts of Gujarat, faced prolonged dry spells and water scarcity. In contrast, southern states like Kerala and Karnataka experienced above-average rainfall, leading to flooding and landslides. These extreme rainfall events caused displacement, damage to infrastructure, and agricultural losses.
- **Interstate Water Disputes :** Water scarcity has led to disputes between Indian states. For example, the Cauvery River dispute between Karnataka and Tamil Nadu highlights the challenges of equitable water allocation. Similarly, Delhi, Haryana, and Uttar Pradesh have had disputes over the allocation of Yamuna River waters. The issue primarily revolves around Delhi's water needs and its impact on downstream states.

Food Security :

- **Crop Yield Variability :** Climate change impacts crop yields through extreme weather events, heatwaves, and changing rainfall patterns. For example, in 2020, Bihar and Uttar Pradesh faced prolonged dry spells, leading to reduced paddy

production. These states are major rice-producing regions, and the water stress during critical growth stages led to yield losses. Cotton-producing states like Maharashtra experienced rainfall variability. Excessive rainfall in some cotton-growing regions resulted in crop damage, while drought in others impacted cotton yields.

- **Vulnerable Agriculture:** A large portion of India's population relies on agriculture for livelihoods. Vulnerable smallholder farmers are at risk due to climate-related crop failures, impacting their food security. For example-In May 2020, Cyclone Amphan struck West Bengal, causing widespread damage to crop and agricultural infrastructure. Smallholder farmers, particularly those in the Sundarbans region, lost their livelihoods as rice, betel leaves, and fisheries were severely impacted. The cyclone disrupted their food supply and income sources.
- **Malnutrition:** Food security challenges contribute to malnutrition issues, particularly among marginalized communities. Climate change-induced food shortages exacerbate these problems. For example- The Bundelkhand region in northern India, which spans across parts of Uttar Pradesh and Madhya Pradesh, has experienced recurrent droughts, erratic monsoons, and crop failures due to climate change. This region is home to numerous marginalized communities and smallholder farmers who heavily depend on rain-fed agriculture for their livelihoods and food security.

Climate Change:

- **Glacial Retreat :** Himalayan glaciers are retreating due to rising temperatures, affecting water resources for millions of people in northern India. For example- Himalayan glaciers, like Gangotri, are melting due to rising temperatures. This impacts the Ganga River, a lifeline for northern India. Reduced glacier melt means less water for agriculture, drinking, and hydropower. It also affects ecosystems and can lead to water conflicts. Mitigation efforts and climate-resilient water management are crucial to address these challenges.
- **Heatwaves :** Increasing heatwaves have health and agricultural implications. In 2019, India experienced an intense and prolonged heatwave that affected many parts of the country. Temperatures soared above 45 degrees Celsius in several regions, especially in northern and central India. Agriculture suffered as well, with crop failures and reduced yields due to extreme heat stress.
- **Sea Level Rise :** Coastal regions, including Mumbai and Kolkata, are vulnerable to sea-level rise, threatening infrastructure, and agricultural land. Similarly, Agriculture and aquaculture are vital sources of income and food for communities in the Sundarbans. Rising sea levels have led to the intrusion of saltwater into agricultural fields, rendering them unsuitable for traditional rice cultivation. This has resulted in declining crop yields and increased food insecurity.

- **Extreme Weather Events :** India faces more frequent and severe cyclones, such as Cyclone Amphan, which disrupt food production and displace communities. Another example is the devastating floods in the southern state of Kerala in 2018 and 2019 damaged rice paddies and other crops, affecting food production. The floods also disrupted transportation, leading to food supply issues in the region.

8. **The impact of water scarcity, food, and climate change at the global scale; at a glance:**

Water Scarcity:

- **Depletion of Aquifers :** Excessive groundwater pumping for agriculture and urban use has led to the depletion of aquifers in various parts of the world, resulting in long-term water scarcity. for example- The Ogallala Aquifer, located beneath the Great Plains of the United States, is one of the world's largest groundwater sources. However, decades of intensive irrigation for agriculture have led to significant depletion. In parts of Texas, Oklahoma, and Kansas, water levels have dropped dramatically, threatening the sustainability of agriculture in the region.
- **Conflict and Migration :** Water scarcity can exacerbate conflicts over water resources and force people to migrate in search of water, contributing to regional instability and global migration challenges. For example, disputes and conflicts over the sharing of the Nile River's waters have arisen among countries in the Nile Basin, including Egypt, Sudan, and Ethiopia. The construction of the Grand Ethiopian Renaissance Dam (GERD) on the Nile has exacerbated these tensions, raising concerns about future regional instability and potential migration.
- **Economic Impacts :** Water scarcity hampers industrial and agricultural productivity, leading to economic losses and potential food price hikes in the global market. For example- Wheat is a staple food crop worldwide. Droughts in major wheat-producing countries, such as Russia and Australia, have led to reduced wheat harvests.

Food Security :

- **Crop Yield Reduction:** Climate change-induced extreme weather events, such as droughts and floods, can reduce crop yields, leading to food shortages and increased global food prices. For example- Australia, a major exporter of wheat, barley, and other grains, faced prolonged drought conditions in 2019 and 2020. These droughts significantly reduced crop yields, leading to decreased exports and contributing to global shortages of certain grains. Prices for Australian wheat and barley on the global market increased as a result.
- **Malnutrition and Health Issues:** Food security challenges contribute to malnutrition and health problems, particularly in vulnerable populations, with far-reaching global health implications. For example- Persistent food insecurity in

many Sub-Saharan African countries has contributed to high rates of malnutrition, particularly among children. Chronic malnutrition, characterized by stunted growth, weak immune systems, and cognitive impairments, can have lifelong health consequences. This region also faces food-related diseases like kwashiorkor and marasmus due to inadequate access to nutritious food.

- **Global Food Trade:** Climate-related disruptions in food production can impact global food trade, affecting supply chains and food availability in various regions. Brazil, the world's largest coffee producer and exporter, faced severe frosts and droughts in 2021. These extreme weather events damaged coffee crops, leading to concerns about reduced coffee exports and potential impacts on global coffee prices.

Climate Change:

- **Rising Temperatures:** Global temperature rise affects ecosystems, agriculture, and food production. It can also intensify heat waves, affecting human health and labour productivity. For example- In late June 2021, the Pacific Northwest region of North America, including parts of the United States and Canada, experienced an unprecedented and prolonged heatwave. Record-breaking temperatures soared well above 100 degrees Fahrenheit (37.8 degrees Celsius). This extreme heat had several significant impacts:
- **Sea Level Rise:** Rising sea levels threaten coastal regions and can lead to the displacement of communities and damage to infrastructure, with global economic repercussions. For example- Miami Beach, located in Florida, has been grappling with the impacts of sea-level rise and coastal flooding for several years. This coastal city is particularly vulnerable due to its low-lying topography and proximity to the Atlantic Ocean. experiences sunny-day flooding, where high tides and rising sea levels lead to recurrent flooding of streets, neighbourhoods, and properties. Even without heavy rainfall, seawater enters streets during high tide events.
- **Extreme Weather Events:** Increased frequency and severity of extreme weather events, like hurricanes and wildfires, disrupt food production and supply chains globally. In August 2021, Hurricane Ida made landfall in the southern United States, causing widespread flooding and power outages. The storm impacted agriculture in Louisiana, a major producer of crops like soybeans, rice, and sugarcane. Flooding and infrastructure damage disrupted supply chains, affecting the availability of these crops.
- **Biodiversity Loss:** Climate change accelerates biodiversity loss, impacting ecosystems and reducing genetic diversity in crops and livestock. For example- The Great Barrier Reef, the world's largest coral reef system, has been severely affected by climate change-induced factors, including rising sea temperatures and ocean acidification. All these have caused mass coral bleaching events, weakened corals,

and can lead to their death. The loss of coral cover and the degradation of reef habitats have cascading effects on the entire ecosystem, leading to a decline in biodiversity.

Innovative solutions, and proactive policies to ensure a sustainable future.

Here are some innovative solutions and proactive policies that can help ensure a sustainable future in the face of challenges related to water resources, food security, and climate change:

- **Clima te-Resilient Crop Varieties:** Invest in research and development to create and promote the adoption of climate-resilient crop varieties that are more adaptable to changing weather patterns and require less water.
- **Precision Agriculture:** Promote precision agriculture techniques that utilize data, sensors, and technology to optimize crop yields, reduce water usage, and minimize environmental impacts.
- **Agroforestry:** Encourage agroforestry practices, which involve planting trees alongside crops. This helps improve soil health, enhance water retention, and diversify income sources for farmers.
- **Rainwater Harvesting:** Implement rainwater harvesting systems at various scales, from household-level to large-scale reservoirs, to capture and store rainwater for agricultural and domestic use during dry periods.
- **Desalination Technology:** Invest in sustainable desalination technologies to provide fresh water in regions facing extreme water scarcity, particularly coastal areas.
- **Eco-Friendly Farming:** Promote organic farming practices that reduce chemical pesticide and fertilizer use, enhance soil health, and decrease the carbon footprint of agriculture.
- **Crop Rotation and Diversification:** Encourage crop rotation and diversification to improve soil fertility, reduce pest pressures, and enhance overall ecosystem resilience.
- **Payment for Ecosystem Services:** Develop policies that reward farmers and landowners for implementing practices that benefit ecosystems, such as reforestation, wetland restoration, and habitat preservation.
- **Water Trading and Pricing:** Establish water trading systems and pricing mechanisms that incentivize efficient water use and allocation while ensuring equitable access.
- **Climate-Resilient Infrastructure:** Invest in climate-resilient infrastructure, such as flood defenses, irrigation systems, and energy-efficient transportation networks, to protect against extreme weather events and support sustainable agriculture.

- **Education and Capacity Building:** Launch educational programs and capacity-building initiatives to empower farmers and communities with knowledge and skills for climate-smart agriculture and sustainable water management.
- **International Cooperation:** Collaborate with neighbouring countries and international organizations to manage shared water resources and address climate change impacts that transcend borders.
- **Sustainable Fisheries Management:** Implement science-based policies for sustainable fisheries management to protect marine ecosystems and ensure a consistent supply of seafood.
- **Circular Economy:** Promote a circular economy approach in agriculture, minimizing waste, and maximizing resource efficiency through practices like composting and recycling.
- **Innovation and Research Funding:** Allocate resources to support innovation, research, and development in agriculture, water management, and renewable energy technologies that contribute to sustainability.
- **Carbon Farming:** Encourage carbon farming practices that sequester carbon in agricultural soils, mitigating climate change while improving soil health.
- **Climate-Resilient Livestock Farming:** Support livestock farming practices that reduce methane emissions, improve animal welfare, and increase the resilience of livestock to climate stressors.
- **Food Waste Reduction:** Develop policies and incentives to reduce food waste at the production, distribution, and consumption levels, thus conserving resources and reducing greenhouse gas emissions.
- **Sustainable Urban Planning:** Implement sustainable urban planning policies that promote local food production, reduce food transportation emissions, and enhance urban resilience to climate impacts.
- **Regenerative Agriculture:** Advocate for regenerative agricultural practices that restore soil health, enhance biodiversity, and sequester carbon, contributing to sustainable food production.

These innovative solutions and proactive policies can play a significant role in building a more sustainable future by addressing the complex challenges posed by the water-food-climate nexus. They require collaboration among governments, businesses, communities, and civil society to ensure their successful implementation.

References: -

1. Rockström, J., Falkenmark, M., Allan, T., Folke, C., Gordon, L., Jägerskog, A., & Meybeck, M. (2014). The unfolding water drama in the Anthropocene: Towards a resilience-based perspective on water for global sustainability. Ecohydrology & Hydrobiology, 14(1), 317-323.

2. Schmidhuber, J., & Tubiello, F. N. (2007). Global food security under climate change. Proceedings of the National Academy of Sciences, 104(50), 19703-19708.
3. Sultan, B., Defrance, D., Iizumi, T., & Cabell, J. F. (2020). Agricultural vulnerability in Africa: An updated synthesis. Environmental Research Letters, 15(3), 033003.
4. IPCC. (2019). Climate Change and Land: An IPCC special report on climate change, desertification, land degradation, sustainable land management, food security, and greenhouse gas fluxes in terrestrial ecosystems.
5. Wada, Y., van Beek, L. P., Viviroli, D., Dürr, H. H., Weingartner, R., & Bierkens, M. F. (2011). Global monthly water stress: 2. Water demand and severity of water stress. Water Resources Research, 47(7), W07518.
6. Lobell, D. B., Schlenker, W., & Costa-Roberts, J. (2011). Climate trends and global crop production since 1980. Science, 333(6042), 616-620.
7. World Bank. (2016). Water scarcity and climate change: Growing risks for businesses and investors. Retrieved from https://openknowledge.worldbank.org/ bitstream/handle/10986/25056/Water-Scarcity-and-Climate-Change-Growing-Risks-for-Businesses-and-Investors.pdf
8. Jay, S. (2018). Climate change, water resources, and food security in the Arabian Peninsula: A review. International Journal of Water Resources Development, 34(6), 851-879.
9. FAO. (2018). The state of food security and nutrition in the world 2018: Building climate resilience for food security and nutrition. Retrieved from http://www.fao.org/3/I9553EN/i9553en.pdf
10. Smakhtin, V., Revenga, C., & Döll, P. (2004). A pilot global assessment of environmental water requirements and scarcity. Water International, 29(3), 307-317.
11. Rosenzweig, C., Elliott, J., Deryng, D., Ruane, A. C., Müller, C., Arneth, A., ... & Schmid, E. (2014). Assessing agricultural risks of climate change in the 21st century in a global gridded crop model intercomparison. Proceedings of the National Academy of Sciences, 111(9), 3268-3273.
12. Ringler, C., Bhaduri, A., & Lawford, R. (2013). The nexus across water, energy, land and food (WELF): Potential for improved resource use efficiency? Current Opinion in Environmental Sustainability, 5(6), 617-624.
13. UN Water. (2020). Water and Climate Change: Policy Brief. Retrieved from https://www.unwater.org/app/uploads/2019/08/Policy-brief-Water-and-Climate-Change.pdf
14. Gornall, J., Betts, R., Burke, E., Clark, R., Camp, J., Willett, K., & Wiltshire, A. (2010). Implications of climate change for agricultural productivity in the early twenty-first century. Philosophical Transactions of the Royal Society B: Biological Sciences, 365(1554), 2973-2989.
15. FAO. (2020). Climate Change and Food Security: Risks and Responses. Retrieved from http://www.fao.org/3/cb1983en/cb1983en.pdf

NAGAR VAN YOJANA

A BEACON OF HOPE FOR URBAN BIODIVERSITY IN BIHAR

Dr. Gaurav Sikka
Asst. Professor
P.G. Dept. of Geography
A.N. College, Patna

Dr. Prerna Bharti
Asst. Professor
P.G. Dept. of Geography
Patna University, Patna

With increasing urbanization in India, particularly in states like Bihar, the pressure on natural ecosystems within city limits is growing rapidly. The Nagar Van Yojana (Urban Forest Scheme), launched in 2020 by the Ministry of Environment, Forest and Climate Change (MoEFCC), is a policy intervention aimed at restoring urban ecological balance by establishing forests in urban areas. This article examines the significance, implementation, and outcomes of the Nagar Van Yojana in Bihar. It also analyses the critical role played by the Nagar Van Yojana in achieving the UN Sustainable Development Goals (SDGs) at the local level. The article is based on secondary data using official data of government reports, case studies, and field reports to highlight its role in promoting urban biodiversity and ecosystem resilience.

Urban forestry, Nagar Van Yojana, Bihar, urban biodiversity, climate resilience, UN Sustainable Development Goals.

Introduction

Urbanization and Ecological Challenges in India

India is undergoing an unprecedented phase of urbanization. The urban population in the country is expected to reach 600 million by 2031, up from 377 million in 2011 (Ministry of Housing and Urban Affairs, 2020). This demographic shift has profound environmental implications, including reduced green cover, higher pollution levels, urban flooding, and loss of biodiversity. Urban ecosystems, once rich in native flora and fauna, are increasingly being replaced by impervious surfaces, heat islands, and ecologically sterile environments.

Urban green spaces play a crucial role in mitigating these effects. Studies have shown that urban forests can reduce air pollutants, moderate temperatures, recharge groundwater, and enhance the psychological well-being of urban residents (Pandey et al., 2022). However, the per capita availability of green space in Indian cities is abysmally low — less than 5 square 2

meters per person in many metropolitan areas, compared to the World Health Organization's recommendation of 9 square meters (World Health Organization, 2016).

The Urban Context of Bihar

Bihar presents a particularly challenging case. Although predominantly rural, its urban centres, particularly Patna, Gaya, Muzaffarpur, and Bhagalpur, are expanding rapidly. According to the Bihar Economic Survey 2022–23, urbanization in the state has increased from 11.3% in 2001 to nearly 14% by 2011, with even steeper growth projected in the current decade (Government of Bihar, 2023). Yet, green spaces in cities remain highly limited. As per remote sensing data from ISRO's Bhuvan platform, cities like Patna lost over 35% of their green cover between 2000 and 2020 (ISRO, 2022).

In response to these challenges, the **Nagar Van Yojana**, launched on World Environment Day 2020, by the Ministry of Environment, Forest and Climate Change (MoEFCC), Government of India is a policy intervention aimed at restoring urban ecological balance by establishing forests in urban areas. The scheme is aimed at creating more than 500 urban forests across India, including in Bihar. This initiative aligns with India's broader goals under the National Biodiversity Action Plan, Smart Cities Mission, and international climate commitments under the Paris Agreement.

In the context of Bihar, where rapid urban expansion threatens to erode ecological integrity and biodiversity, the Nagar Van Yojana serves as a transformative initiative aligned with the United Nations Sustainable Development Goals (SDGs). By establishing urban forests in cities such as Patna, Gaya, and Muzaffarpur, the scheme advances SDG 11 (*Sustainable Cities and Communities*), creating accessible green spaces that enhance urban livability and environmental quality. It contributes to SDG 3 (*Good Health and Well-being*) by mitigating air pollution, reducing heat stress, and offering spaces that promote mental and physical well-being. Furthermore, these green buffers support SDG 6 (*Clean Water and Sanitation*) by improving groundwater recharge and reducing urban runoff. The urban forests' ability to act as carbon sinks and regulate local temperatures directly supports SDG 13 (*Climate Action*), while the use of native species and the revival of degraded land contribute to SDG 15 (*Life on Land*), promoting conservation and restoration of local biodiversity.

This article examines the implementation of the Nagar Van Yojana in Bihar, analyzing its ecological, social, and policy implications. It presents quantitative data and provides recommendations for improving urban forestry efforts in the state.

OVERVIEW OF NAGAR VAN YOJANA

Objectives of the scheme

The Nagar Van Yojana is aimed at:

- Creating green space and an aesthetic environment in an urban set-up.

- Creating awareness about plants and biodiversity and developing environmental stewardship.
- Facilitating in-situ conservation of important flora of the region.
- Contributing to environmental improvement of cities by pollution mitigation, providing cleaner air, noise reduction, water harvesting and reduction of the heat island effect.
- Extending health benefits to residents of the city and
- Helping cities become climate resilient

Structure and Funding

The scheme is implemented by State Forest Departments with support from Urban Local Bodies (ULBs) and funding from the Compensatory Afforestation Fund Management and Planning Authority (CAMPA). Both traditional afforestation techniques and innovative models like the Miyawaki method are encouraged (MoEFCC, 2020). The Miyawaki method of afforestation has gained attention for its ability to rapidly restore native forest ecosystems in small urban spaces. Developed by Japanese botanist Dr. Akira Miyawaki, this technique involves densely planting a mix of indigenous tree species—usually 30 to 50 species per site—closely spaced to mimic the structure of a natural forest. These micro-forests grow 10 times faster, are 30 times denser, and support 100 times more biodiversity than conventional plantations.

Urbanization and Ecological Stress in Bihar

Bihar's urban centres are facing mounting ecological pressure.

Table 1: Urban Expansion and Tree Cover Decline

City	Tree Cover (2000)	Tree Cover (2020)	Change (%)	Avg. AQI 2023
Patna	15.8%	9.4%	–40.5%	214 (Poor)
Gaya	13.2%	7.1%	–46.2%	189 (Moderate)
Muzaffarpur	12.6%	6.4%	–49.2%	201 (Poor)

(Data Source: ISRO-Bhuvan, 2022; Central Pollution Control Board [CPCB], 2023)

Urban tree cover across major cities in Bihar has witnessed a sharp decline over the past two decades, reflecting the urgent need for restorative green infrastructure. According to satellite-based estimates shown in Table 1, Patna's tree cover fell from 15.8% in 2000 to 9.4% in 2020, marking a 40.5% loss. Similarly, Gaya and Muzaffarpur experienced declines of 46.2% and 49.2%, respectively. These reductions correlate with deteriorating air quality levels, with Patna and Muzaffarpur recording average AQI values of 214 and 201 in 2023—both categorized as "Poor" by the Central Pollution Control Board (CPCB). Even Gaya, which maintained a slightly lower AQI of 189, fell under the "Moderate" category, still raising health concerns. The declining green cover,

combined with rising vehicular emissions, construction activity, and urban sprawl, has exacerbated environmental stress in these cities.

Table 2: Urban Green Budget Allocation (FY 2022–23)

CITY	GREEN BUDGET (CRORE)	% OF ULB BUDGET
PATNA	6.8	1.3%
GAYA	4.2	1.0%
MUZAFFARPUR	3.5	0.9%

Source: Bihar Economic Survey, Government of Bihar, 2023 4

Despite the ecological stress faced by urban centers in Bihar, green budget allocations by Urban Local Bodies (ULBs) remain disproportionately low (table 2). In the fiscal year 2023–24, Patna, the state capital, allocated only 6.8 crore, accounting for just 1.3% of its total ULB budget. Gaya and Muzaffarpur followed with even lower shares—1.0% and 0.9%, respectively. These limited investments in urban greenery and environmental management highlight a significant gap between ecological need and policy priority.

Nagar Van Yojana in Bihar: Implementation Status

As of 2024, Bihar has implemented six urban forest projects, covering a cumulative area of 127 hectares and involving over 140,000 saplings.

Under the Nagar Van Yojana, Bihar has received central assistance totaling 443.7 lakh between 2020 and 2024. The scheme offers financial support of 4 lakh per hectare for the creation and maintenance of urban forests, encouraging the involvement of local communities, NGOs, and educational institutions.

Danapur Urban Forest (Patna)

- Area: 25 hectares of municipal wasteland.
- Flora: Native species including Neem (*Azadirachta indica*), Peepal (*Ficus religiosa*), Kadamb (*Neolamarckia cadamba*), and Arjun (*Terminalia arjuna*).
- Outcome: Within two years, over 38 bird species were documented, and local air quality improved by 8% (Bihar Forest Department, 2023).
- Gaya Forest near Vishnupad
- Focus: Sacred groves, Buddhist heritage flora.
- Community Role: Buddhist monks, students, and volunteers led plantation drives.
- Impact: Emergence of 22 new butterfly species in the urban zone (Zoological Survey of India, 2023).
- Railway-Linked Urban Forest (Muzaffarpur)
- Innovation: Railway land repurposed for ecological restoration.

- Support: Joint effort by East Central Railway and Forest Department.
- Ecological Services: Provides pollinator corridors and reduces urban heat island effect.

The Bihar Department of Environment, Forest, and Climate Change has developed six urban forest sites across five districts in the state. In Gaya Ji, the revered Brahmayoni Hill has been transformed into a vibrant urban forest, blending ecological restoration with cultural heritage. Bhagalpur, often referred to as the silk city of Bihar, now houses a restored green lung at Jayaprakash Udyan, providing residents with an accessible and ecologically rich public space. In the southern district of Banka, an urban forest has been developed at Supaha, creating a much-needed biodiversity zone in a semi-urban setting. Gopalganj has added to its green 5 infrastructure through afforestation efforts at Thawe, while Rohtas district has established two significant forested areas—Shaheed Sanjay Singh Park and the park at Dehri-on-Sone.

Figure 1: Bihar's first urban forest developed in Brahmayoni Hill, Gaya Ji

Photo Source: ETV Bharat

Urban forests, such as those developed under the Nagar Van Yojana in Bihar, play a crucial role in enhancing biodiversity within fragmented cityscapes. These green patches act as microhabitats that support a variety of species including pollinators like bees and butterflies, avian fauna such as bulbuls, parakeets, and mynas, and even urban-adapted mammals like squirrels and civets. By preserving native plant species

and providing food, shelter, and breeding grounds, these forests help sustain ecological networks disrupted by urbanization. Beyond biodiversity, urban forests also offer significant climate regulation and carbon sequestration benefits. According to a study by The Energy and Resources Institute, New Delhi (TERI, 2021), each hectare of urban forest can absorb approximately 6.5 metric tonnes of CO_2 annually, reduce particulate matter (PM2.5) concentrations by up to 20%, and lower local temperatures by 2–4°C, providing natural cooling in heat-prone urban regions. These functions are especially critical in cities like Patna and Muzaffarpur, where air quality regularly falls into the "poor" category. Additionally, urban forests foster psychological well-being and social cohesion. Research by Pandey et al. (2022) highlights how access to green spaces promotes stress reduction, opportunities for physical activity, and social inclusion, especially in densely populated and socio-economically diverse urban neighbourhoods. Thus, the ecological and social dividends of the Nagar Van Yojana extend far beyond aesthetics, offering a multi-functional solution to urban challenges in Bihar.

Crucially, the Bihar State Biodiversity Board (BSBB) plays a pivotal role in ensuring that the plantations under the Nagar Van Yojana are ecologically appropriate and biodiverse. The Board provides technical guidance on the selection of indigenous plant species, monitors the ecological impact of urban forestry initiatives, and helps prepare People's Biodiversity Registers (PBRs) in collaboration with local communities and urban bodies. This ensures that the forests not only serve environmental functions but also preserve the traditional ecological knowledge and biological heritage of the region.

However, the implementation of the Nagar Van Yojana in Bihar faces several critical challenges that hinder its full potential. A foremost obstacle is the availability of suitable urban land, as much of it is either encroached upon or earmarked for infrastructural development, leaving limited space for afforestation. Even when land is identified, securing it for long-term ecological use becomes a bureaucratic hurdle. Secondly, budgetary constraints significantly affect the success of these projects. While initial funding is often provided for plantation, insufficient maintenance budgets compromise the survival of saplings in the crucial early years, especially in the absence of community stewardship or local monitoring systems. Moreover, climate-related vulnerabilities pose a serious threat: increasing temperatures, prolonged dry spells, and erratic rainfall patterns—now frequent across Bihar—endanger the growth and health of newly planted trees. Finally, the scheme is also challenged by limited institutional capacity. Many urban local bodies in Bihar lack access to trained urban foresters, ecologists, and landscape planners, which affects species selection, plantation design, and long-term ecological management. Addressing these structural, financial, climatic, and human resource gaps is essential for the sustained impact of

urban forestry efforts under the Nagar Van Yojana.

Policy Recommendations

1. Green Master Plans should be mandatory for all cities above 1 lakh population.
2. Eco-budgeting: Cities must allocate at least 3% of their annual budget to green infrastructure.
3. Public-private partnerships for funding and maintaining Nagar Vans.
4. Digital Monitoring through GIS and citizen science apps.
5. Capacity building for urban foresters, ecologists, and landscape planners.
6. Ecological Literacy in schools to foster long-term stewardship.

Conclusion

The Nagar Van Yojana holds transformative potential for Bihar's urban landscape. With the twin crises of climate change and biodiversity loss looming large, such green interventions serve not only ecological but also social and health-related objectives. By making green infrastructure a cornerstone of urban planning, Bihar can lead the way in climate-resilient development, offering its citizens a cleaner, greener, and more liveable urban future.

References

- Bihar Department of Environment, Forest and Climate Change. (2023). *Status report on Nagar Van Yojana implementation*. Government of Bihar.
- Bihar State Pollution Control Board (BSPCB). (2023). *Annual air quality report 2023*. Government of Bihar.
- Central Pollution Control Board. (2023). *National Air Quality Bulletin – Bihar*. CPCB, MoEFCC.
- ETV Bharat weblink: https://www.etvbharat.com/hindi/bihar/city/gaya/bihar-first-city-forest-completed-in-gaya/bh20210904012713736
- Government of Bihar. (2023). *Bihar Economic Survey 2022–23*. Department of Finance, Patna.
- Indian Space Research Organisation. (2022). *Urban Vegetation Index – Bhuvan Platform*. Retrieved from https://bhuvan.nrsc.gov.in
- Ministry of Environment, Forest and Climate Change. (2020). *Nagar Van Yojana Guidelines*. Government of India.
- Ministry of Environment, Forest and Climate Change. (2020). *Nagar Van Yojana guidelines*. Government of India. Retrieved from https://moef.gov.in/
- Ministry of Housing and Urban Affairs. (2020). *Urban India: Growth and Challenges*. MoHUA Annual Report.

- Pandey, R., Joshi, P., & Singh, S. (2022). *Urban Forestry and Mental Health: An Indian Perspective*. *Indian Journal of Environmental Sciences*, 46(1), 45–52.
- Pandey, R., Singh, S., & Chaurasia, V. (2022). *Urban green infrastructure and psychological wellbeing: A socio-environmental perspective*. Journal of Urban Ecology, 8(1), ueac003. https://doi.org/10.1093/jue/ueac003
- Patna Press. (2024, April 3). *Bihar's environment minister reviews key schemes under Agricultural Road Map*. Retrieved from https://patnapress.com/bihars-environment-minister-reviews-key-schemes-under-agricultural-road-map/
- Press Information Bureau (PIB). (2024, April 1). *Financial progress under Nagar Van Yojana*. Government of India. Retrieved from https://www.pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=1946406
- TERI – The Energy and Resources Institute. (2021). *Urban Forests and Climate Benefits in Indian Cities*. TERI Policy Brief.
- TERI-Energy and Resources Institute (2021). *Urban green spaces: Carbon sequestration and air quality co-benefits*. TERI Press.
- Times of India. (2024, March 25). *Six sites developed as urban forest areas in Bihar*. Retrieved from https://timesofindia.indiatimes.com/city/patna/six-sites-developed-as-urban-forest-areas-in-bihar/articleshow/117561025.cms
- UNDP India. (2020). *Sustainable Development Goals and India: Transforming our world*. Retrieved from https://www.in.undp.org/content/india/en/home/sustainable-development-goals.html
- World Health Organization. (2016). *Urban Green Spaces and Health – A Review of Evidence*. WHO Regional Office for Europe.
- Zoological Survey of India. (2023). *Butterfly Diversity in Urban Forests of Gaya*. Patna Regional Office.

सांस्कृतिक वैशिष्ट्य से समादृत लोकभूमि : नागालैंड

डॉ. कुमार वरूण
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

सांस्कृतिक बहुलता के दृष्टिकोण से यदि भारत विश्व का लघु संस्करण है, तो इस महान पुण्य भूमि के पूर्वोत्तर में अवस्थित नागालैंड तमाम वैविध्यों के साथ धरती के लघुत्तम संस्करण के रूप में अभिहित करने योग्य है। समाज-इतिहास, भाषा-साहित्य, कला-संस्कृति, रीति-नीति, पर्व-त्योहार, चिंतन-विश्वास आदि के आधार यह भूमि बहुलतावादी संस्कृति का विस्तार है।

संपूर्ण विश्व के वैविध्यमय सांस्कृतिक वैशिष्ट्य का नायाब खजाना है, भारत का पूर्वोत्तर प्रदेश। यहां कई जनजातियां एकसाथ अपनी विविधताओं के साथ मौजूद हैं। यह प्रदेश बहुधार्मिक, बहुसांस्कृतिक और बहुभाषिक जातियों का समुच्चय है। नागालैंड, पूर्वोत्तर का एक प्रमुख राज्य है। प्राकृतिक हरीतिमा से आवृत्त यह प्रदेश आज भी संपूर्ण भारत के लिए अबूझ सा है। यह प्रदेश सांस्कृतिक विविधता और मनोरम प्राकृतिक दृश्यों के लिए ख्यात है। संस्कृति मानव और समाज के विकासमान प्रक्रिया का संवाहकऔर पोषक है। नागालैंड को समग्रता में जानने के लिए संस्कृति के तत्वों का सहारा लेना चाहिए, न कि परंपरागत पूर्वाग्रहों को आधार बनाना चाहिए। इस समाज का अध्ययन 'संस्कृति की विकासमान परंपरा' के परिप्रेक्ष्य में करना तर्कसंगत और न्यायसंगत होगा। नागालैंड का लगभग समूचा हिस्सा पर्वतीय है। उत्तर में नागा पहाड़ियां ब्रह्मपुत्र घाटी से अचानक ऊंचाई की ओर अग्रसर होती है और इसके बाद दक्षिण पूर्व दिशा में इनकी उंचाई 2000 मीटर हो जाती है। फिर म्यांमार की सीमा के पास यह पहाड़ियां पटकोई पर्वत श्रृंखला में मिलती है। संपूर्ण प्रदेश कई जलधाराओं में विभक्त है। नदी की कई जलधाराओं की तरह ही नागा समाज अपनी परंपरा में संस्कृति के अनेक तत्वों को समाहित कर कई अर्थ-संदर्भों के साथ जीवंत है। समूचा प्रदेश भौगोलिक और आर्थिक असमानताओं से बद्ध है, बावजूद इसके यहां के लोग जीवन के कई रंगों को बेलौस तरीके से जीते हैं।

भारत के पूर्वी छोर पर स्थित यह प्रदेश एक साथ कई सदियों में जीता है। यहां जीवन-बोध केवल मानसिक स्तरों-उपस्तरों में विभक्त नहीं है बल्कि यह सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक आयामों को व्यापक फलक पर उकेरता है। यहां समतल, सहज और व्यवस्थित कुछ भी नहीं। न प्रकृति और न जीवन, क्योंकि यह लोक भूमि है। लोकजीवन में सहजता और निश्छलता का संचार होता है, परंतु परोक्ष रूप से देखने पर सब कुछ अस्पष्ट, उबड़-खाबड़ और असहज सा प्रतीत होता है। प्रकृति इनके जीवन व्यापार का हिस्सा भर नहीं है, बल्कि प्रकृति इनकी चिंतन परंपरा को समृद्ध करती है। इनके सभी लोक-विश्वास, परंपरा और मिथक प्रकृति से स्पंदित हैं। प्रकृति इनके लिए सर्वाधिक पूज्य है। इससे संबद्ध विधि-विधान इनके लोकजीवन का हिस्सा है, साथ ही साहित्य और संस्कृति के रंग भी प्रकृति से सरोबार है।

किसी भी जाति की लोक-संस्कृति का प्रतिफलन लोकसाहित्य में दिखता है। जनमानस में विश्वास, चिंतन प्रक्रिया, संस्कार, परंपराएं और समस्त जीवन शैली लोक साहित्य में भास्वर होती है। पूर्वोत्तर भारत का लोकसाहित्य यहां के जीवन बोध का हिस्सा है। इस प्रदेश का लोक समाज दुख में भी गाता है, मादक बजाता है, हारता नहीं है। उनमें संपत्ति अर्जित करने की कोई भावना निहित नहीं होती है। पूर्वोत्तर का साहित्य हाशिये समाज

का साहित्य नहीं है, बल्कि हमारे पुरखों की सामूहिक चेतना इसमें धड़कती है। यह हमारे पुरातन समाज का साहित्य है। जिसमें जीवन के विभिन्न अध्यायों से प्राप्त अनुभवों एवं सत्यों की वास्तविक अभिव्यक्ति निहित होती है। इसमें भावों की अभिव्यक्ति का बनावटीपन नहीं है। यहां भावों का सहज एवं सरल संप्रेषण है, जहां मानवीय भावनाएं साफगोई से साहित्य का अंग बन जाती है। इसलिए इस साहित्य में शास्त्र के बरक्स लोक की आवाज की अनुगूंजें सुनाई पड़ती है। नागालैंड के लोक-साहित्य में लोककथा, लोकगीत, लोकगाथा, लोकोक्तियां और पहेलियां आदि का विशेष महत्व है। आज भी इनका साहित्य मौखिक रूप में ही समृद्ध है। धीरे-धीरे इसे लिखित रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश की जा रही है।

आओ नागालैंड की सबसे शिक्षित और संपन्न जनजाति है, आओ जनजाति में टोकरी को लेकर विचित्र और रोचक लोकगाथा प्रचलित है। यह गाथा प्रकृति और ईश्वर के प्रति आस्था का बोधक है। एक प्रसिद्ध जादूगर था, जिसने कहा कि 'मेरे मरने के छह दिन बाद मेरी कब्र को खोदना, उसमें कुछ दिखाई देगा। जब गांववालों ने कब्र को खोदा को उसके पास से भांति-भांति के आकार और आकृति की सुंदर टोकरियां रखी मिली। तभी से गांववालों ने टोकरियां बनाना शुरू कर दिया।' प्रस्तुत कथा नागा समाज का प्रकृति के ऊपर निर्भरता दर्शाती है। नागा जनजातियों के साहित्यिक अवलोकन से स्पष्ट ज्ञात होता है कि सभी जनजातियों के लोक-साहित्य अपनी विशिष्टताओं के साथ अपने समुदाय के जीवन-प्रणाली का आत्मसातीकरण है।

लोककथा लोकमानस की मुखर अभिव्यक्ति है। इन लोक कथाओं में जनजातीय समाज की दिनचर्या, उनकी आकांक्षाओं, हर्ष-उल्लास, दुख और मान्यताओं की अभिव्यक्ति तथा प्रकृति संबंधित चित्र देखने को मिलते हैं। लोथा लोक कथाओं की विषय-वस्तु बेहद व्यापक है। इनमें पशु-पक्षिओं की कहानी जिसमें पशु-पक्षिओं का मानवीकरण रूप देखने को मिलता है। वे मानवीय भाषा में बात करते हैं। एक प्रसिद्ध कीट जिसे नागामीज में जिनंगजिंग (जोकि बहुत तेज आवाज में बोलता है) कहा जाता है, इस कीट के सहारे प्रकृति और मानव के अंर्तसंबंधो का रेखांकन है, जोकि नागा लोक साहित्य की प्रमुख विशेषता है।

जेलियांग समुदाय में कथाओं का वाचन प्रायः वृद्ध महिला के द्वारा छोटे बच्चों के समक्ष करने की परंपरा रही है। जब समाज कृषि-कार्य व्यस्त होता है, तो गांव के बच्चें की जिम्मेदारी बूढ़ी दादी को दी जाती है। तब दोपहर के वक्त वह इन्हीं लोककथाओं के माध्यम से वह उनका मनोरंजन करती है। ये कथाएं बच्चों को नैतिक शिक्षा देने का भी कार्य करती हैं। लोकथाओं में पौराणिक, प्रेम विषयक और संस्कृति के तत्व मौजूद होते हैं। मनोरंजन की दृष्टि से हास्यपरक कथाओं का भी प्रचलन है। कुछ कथाएं उद्देश्यात्मक होती हैं, जो परियों की रहस्यमय कहानियों से लबरेज रहती हैं। दक्षिण भारत में प्रचलित तेनालीराम की मनोरंजक कहानियां नागा समाज के लोककथा में सन्निहित हैं। इससे साफ जाहिर होता है कि नागा समाज जड़ समाज कभी नहीं रहा, बल्कि यहां के लोग प्रवसन के जरिए दक्षिण भारत की यात्र किसी न किसी मकसद से प्रारंभ भी करते थे।

लोक गीत मानव के व्यक्तिगत और सामूहिक सुख-दुख की लयात्मक अभिव्यक्ति है। नागा समाज में लोकगीतों की समृद्ध और सार्थक परंपरा रही है। वास्तव में लोकजीवन के जितने भी आयाम होते हैं, नागा लोक गीतों में वह सभी मौजूद हैं। नागा समाज के विविध रंगों का सांगोपांग अध्ययन, नागालोक गीतों के माध्यम से कर सकते हैं। नागा लोकगीतों में प्रकृति प्रेम, जीवन-बोध के संदर्भ, प्रेम और भक्ति के तत्व मिलते हैं। प्रकृति यहां अनेक रंग और रूपों में द्रष्टव्य है। नागा लोक गीतों में प्रवासन की पीड़ा को भी समाहित किया गया है -

अरम तू करवन में मड्.म या, तुरा लुंग सू लुन लुजे

तेसंग रपिन वि ये जे, जुन्केवंग मैरा, वड्. मड.ग या

अरम रा तेसंग प्युरम स्वंगवी वे

कता न वी कातेधुई पुइरम तु फुल्जे, कमी मै मलन नी

वड्.लक गे बम ये जे लौ

(जेलियांग लोकगीत)

प्रस्तुत लोकगीत में कहा गया है कि गांव को छोड़कर चकाचौंध में जो लोग परदेस चले गए हैं, उन्हें बाद में पछताना पड़ता है। किसी न किसी दिन उन्हें गांव के लोगों की याद आती है। उस समय तक उनके लिए गांव और उनके लोग पीछे छूट गए होते हैं। सर्वगुण संपन्न स्वदेश का परित्याग कर परदेस में ब्याही लड़कियां चाहते हुए भी अपने गांव वापस नहीं आ पा रही हैं। इसलिए आप जल्द से जल्द अपने देश आ जाओ।

वनस्पति और खनिज संसाधनों से संपन्न यह प्रदेश कई जनजातियों का आश्रय स्थल है। इस प्रदेश में मुख्यतया 17 जनजातियां और उसकी उपजातियां निवास करती हैं, यथा - अंगामी, आओ, चाकेसांग, कचारी, लोथा, चांग, कुकी, कोन्याक, सेमा, पोचुरी और रेंगमा आदि। ये सभी मंगलोइड प्रजाति समूह के अंतर्गत आते हैं। यह विचित्र संयोग है कि प्रायः सभी जनजातियों की बोली उन्हीं के पर नाम है। जैसे - अंगामी - अंगामी बोली, आओ- आओ बोली, सेमा- सुमी बोली और जेलियांग - जेलियांग बोली आदि-आदि। हालांकि नागामीज (क्रियोल भाषा रूप) और अंग्रेजी यहां की संपर्क भाषा के रूप् में प्रचलित है। नागा समाज का संपर्क शेष भारत से कम ही रहा है, अथवा यह कहा जाए कि नागा समाज में प्रवसन (Migration) अभी न के बराबर है। इसीलिए हिंदी भाषा का प्रचार-प्रसार अभी यहां बेहद कम हुआ है। हालांकि केंद्र समर्थित नीतियों की वजह से वर्ष 2014 के बाद हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में तेजी आई है। साथ ही दूरदर्शन और हिंदी सिनेमा ने हिंदी के विस्तार को आगे बढ़ाया है।

सांस्कृतिक विविधता से सम्पन्न यह प्रदेश आज अपनी पहचान को जीवित रखने के लिए संघर्ष कर रहा है। एक साथ दो तरह के सांस्कृतिक वैविध्य के बीच अपने अस्मितागत विमर्श से जुड़ने का प्रयास कर रहा है। ईसाई मिशनरियों के आने के बाद यह प्रदेश बहुत तीव्र गति से पश्चिमीकरणकी चपेट में आ गया था। सर्वप्रथम उन्होंने, उनकी भाषा/बोली पर आघात किया, क्योंकि भाषा संस्कृति की अधिरचना का आधार है। संस्कृति एक अमूर्त अवधारणा है, जिसे भाषा मूर्त आकार प्रदान करती है। महात्मा गांधी ने अपनी पुस्तक 'हिंद स्वराज' में ठीक ही लिखा है ''धर्मांतरण करना आसान है, संस्कृति बदलना मुश्किल है परंतु मातृभाषा बदलना नामुमकिन है। 'भाषिक अस्मिता को लेकर अभी तक नागालैंड में कोई आंदोलन नहीं हुआ है। केंद्र और राज्य सरकारों की तरफ से जनजातीय शोध संस्थानों के माध्यम से लोक भाषाओं को संरक्षित करने का प्रयास अनवरत जारी है। यहां की कुछ बोलियां लुप्तप्राय श्रेणी में आ गई हैं। किसी भी जनजाति के लिए दूसरी जनजाति के लिए अबूझ सी होती है। इनकी भाषा तिब्बती-बर्मी और चीनी-तिब्बती भाषा समूह के अंतर्गत आती हैं। नागा जनजाति अपनी भाषा के लिए रोमन लिपि का प्रयोग करती हैं। यहां की भाषाएं मुख्यतया तीन समूहों में विभक्त हैं -

केंद्रीय भाषा समूह य लोथा, आओ, फोम

पूर्वी भाषा समूह य कोन्याक, चांग

पश्चिमी भाषा समूहय सेमा, अंगामी, रेंगमा, चाकेसांग

भाषायी बहुलता होने के बावजूद नागा समाज अंग्रेजी का प्रयोग आधिकारिक भाषा के रूप के करता है। अपनी भाषा को जीवित रखने के प्रति इनमें कोई दिलचस्पी देखने को नहीं मिलती। हिंदी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाएं यहां की भाषाई विविधता को समाप्त करने की पुरजोर कोशिश में हैं। भाषाओं को जीवित रखने के लिए

रोजगार एक प्रमुख कारक है, जो कि नागा समाज की बोलियों में नहीं के बराबर है। आदिवासी साहित्य के अध्येता रमणिका गुप्ता लिखती हैं, ''भाषाएं मरा नहीं करती, भाषाएं मार दी जाती हैं। बोलने वाले मारते हैं या सरकारें मारती है। बोलने वाले इसलिए मारते हैं क्योंकि उनको रोजगार नहीं मिलता और भाषाओं में रोजगार मिलने लगे तो भाषाएं जिंदा रहेंगी, समृद्ध होंगी और आपस में सहयोग करेंगी। इसलिए हमार मुख्य कर्तव्य है भाषाओं को बचाना, उन्हें मरने नहीं देना। बदलिये जरूर लेकिन मारिये मत।'' भाषा की मृत्यु संस्कृति की मृत्यु के समान है।

नागालैंड के आदिवासी समाज में कई विविधताएँ मौजूद हैं। आदिवासी समाज कहीं मातृ-प्रधान है तो कहीं पितृ-प्रधान है। यहाँ के आदिवासियों में दोनों तरह की समाजिक-संरचनाएं मिलती हैं वस्तुतः यह पितृ-सत्तात्मक प्रधान समाज है। जेलियांग जनजाति में स्त्रियों को सम्पति का अधिकार दिया गया है। अलग-अलग आदिवासी समूहों की सामाजिक-आर्थिक संरचना भिन्न है। यहाँ की सामाजिक-संरचना में गओंबुरा (Gaonbura) का स्थान सर्वोच्च है, वह गाँव की सभी सामाजिक-राजनीतिक गतिविधियों का नियंत्रक होता है। नागालैंड की न्याय-व्यवस्था प्रथागत कानून (Customary law) के अधीन है। नागालैंड के जनजातीय संगठन में कोंयांक के निरंकुश अंग (सरदार) और सेमा व चांग के आनुवांशिक मुखिया से लेकर अंगामी, आओ, लहोरा और रेंगमा की लोकतान्त्रिक संरचनाओं जैसी भिन्नताएँ पाई जाती हैं। इनके यहाँ मोरूंग (सामुदायिक भवन) गाँव का प्रमुख स्थान होता है, जहाँ पहले खोपड़ियाँ और युद्ध के अन्य विजय चिन्ह टाँगे जाते थे। इनके स्तंभों पर अब भी बाघ, गणेश, मानव तथा अन्य आकृतियों की नक्काशी की जाती है। मोरूंग में युवक-युवतियों के लिए अलग-अलग स्थान निर्धारित है। जहाँ शिक्षा,जीवन-कर्त्तव्य और नैतिक-मूल्य संदर्भित पाठ का वाचन होता है।

नागालैंड की सांस्कृतिक और धार्मिक बुनावट अपनी खूबियों और कमियों के साथ संगुफित है। यह प्रदेश अपनी अस्मिता को जीवंत रखने के लिए संघर्षरत हैं, क्योंकि जिस तरह से बाहरी शक्तियों का अनाधिकार प्रवेश हो गया है उससे स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि आगामी कुछ दशकों में इनके पास अपना कहने के लिए कुछ नही बचेगा। अफ्रीकी देशों में इसी प्रकार का अनाधिकार प्रवेश अंग्रेजों (जो तथाकथित सभ्य कहलाते हैं) के द्वारा हुआ था, वहां के एक लेखक की उक्ति उस दर्द को बयाँ कुछ यों करती है, ''जब ये नही आयें थे तो हमारे पास अपनी कृषि, खानपान, वेशभूषा, साहित्य और संस्कृति थी। इन्होंने हमें अंग्रेजी दिया, अब हमारे पास अपने कहे जाने लायक कुछ भी नहीं बचा। आज हम त्रसद आत्महीनता के दौर से गुजर रहे हैं'' उसी प्रकार नागालैंड के आदिवासी समूहों को सजग और सचेत होने की जरुरत है नहीं तो आने वाले समय में व्यक्तिवादिता की ओर अग्रसर समाज में विलीन हो जायेंगे। आदिवासियों की सामूहिक जीवन-बोध ही उनकी पूंजी है। सुख-दुःख की लयात्मक अभिव्यक्ति आदिवासी समाज में सुनाई पड़ती है।

सांस्कृतिक बहुलता के दृष्टिकोण से यदि भारत विश्व का लघु संस्करण है, तो इस महान पुण्य भूमि के पूर्वोत्तर में अवस्थित नागालैंड तमाम वैविध्यों के साथ धरती के लघुत्तम संस्करण के रूप में अभिहित करने योग्य है। समाज-इतिहास, भाषा-साहित्य, कला-संस्कृति, रीति-नीति, पर्व-त्योंहार, चिंतन-विश्वास आदि के आधार यह भूमि बहुलतावादी संस्कृति का विस्तार है। सामूहिक जीवन-शैली, अनुशासन और जीवन अनुभवों के यथार्थ पर आधारित मूल्यबोध इनकी विरासत है। यह विरासत ही लोकभूमि को समृद्ध और विचार संपन्न बनाती है। अतः हम सबको मिलकर इनकी सांस्कृतिक-धार्मिक और भाषायी पहचान को जीवित रखने के लिए अपना योगदान देना चाहिए।

सेवा से व्यापार तक
शिक्षा और स्वास्थ्य का बदलता चेहरा

डॉ. विकास कुमार
सहायक प्राध्यापक
अर्थशास्त्र
ए.एन.कॉलेज, पटना

एक विकासशील देश जिसके पास विश्व की सबसे बड़ी जनसंख्या है जनसांख्यिकीय लाभांश तभी हासिल कर सकता है जब उसके लोग स्वस्थ और शिक्षित हों किन्तु दुर्भाग्य से भारत में ये दोनों क्षेत्र की सत्ता मुख्यतः निजीकरण के पास है। कहने को तो सरकारी स्कूल और कॉलेज और सरकारी अस्पताल उपलब्ध है किन्तु यथासंभव लोग इनमे सिर्फ आर्थिक गरीबी की वजह से जाते हैं।

भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में शिक्षा और स्वास्थ्य दो ऐसे स्तंभ हैं जो नागरिकों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संविधान में इन्हें मौलिक अधिकारों के रूप में मान्यता दी गई है और यह माना गया है कि हर नागरिक को गुणवत्ता-युक्त शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाएं समान रूप से मिलनी चाहिए। परंतु वर्तमान समय में यह दोनों क्षेत्र बड़े स्तर पर निजीकरण की ओर अग्रसर हो चुके हैं। इससे सेवा की भावना की जगह लाभ कमाने की प्रवृत्ति आ गई है। निजीकरण का अर्थ है किसी सेवा या संसाधन का संचालन और प्रबंधन निजी कंपनियों या व्यक्तियों द्वारा किया जाना। शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में निजीकरण तब होता है जब स्कूल, कॉलेज, अस्पताल, क्लीनिक जैसे संस्थान लाभ कमाने के उद्देश्य से खोले जाते हैं। इनकी सेवाएं बाजार के नियमों पर आधारित होती हैं, जहाँ ग्राहक (छात्र या रोगी) और सेवा प्रदाता (संस्थान) के बीच लेन-देन होता है। इस प्रक्रिया में सेवा का मानवीय और नैतिक पहलू कम हो जाता है और लाभ कमाना केंद्र बिंदु में होता है। यह कहना बिलकुल गलत नहीं होगा की निजी संस्थाओं का उदय सरकार की विफलता का प्रत्यक्ष परिणाम है।

शिक्षा और स्वास्थ्य न केवल मानव जीवन को दिशा देते हैं, बल्कि सामाजिक न्याय, समता और समावेशिता को भी बढ़ावा देते हैं। भारत का संविधान अनुच्छेद 21। के अंतर्गत 6 से 14 वर्ष के बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार देता है। वहीं, स्वास्थ्य सेवाओं को 'जीवन के अधिकार' के दायरे में रखा गया है। इनका उद्देश्य केवल सुविधाएँ प्रदान करना नहीं, बल्कि नागरिकों के समग्र विकास को सुनिश्चित करना है। ऐसे में जब इन क्षेत्रों का निजीकरण होता है, तो यह अधिकार केवल एक वर्ग तक सीमित रह जाते हैं।

एक विकासशील देश जिसके पास विश्व की सबसे बड़ी जनसंख्या है जनसांख्यिकीय लाभांश तभी हासिल कर सकता है जब उसके लोग स्वस्थ और शिक्षित हो। किन्तु दुर्भाग्य से भारत में ये दोनों क्षेत्र की सत्ता मुख्यतः निजीकरण के पास है। कहने को तो सरकारी स्कूल और कॉलेज और सरकारी अस्पताल उपलब्ध है किन्तु यथासंभव लोग इनमे सिर्फ आर्थिक गरीबी की वजह से जाते हैं। आज भारत में प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक निजी संस्थानों का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। निजी स्कूलों की फीस इतनी अधिक होती है कि आम आदमी के लिए बच्चों को वहां पढ़ाना मुश्किल होता जा रहा है। कोचिंग संस्थान और प्राइवेट विश्वविद्यालयों ने शिक्षा को एक व्यवसाय बना दिया है। वे केवल उन्हीं छात्रों को प्रवेश देते हैं जो अधिक शुल्क चुका सकें। इससे गरीब और वंचित वर्ग के प्रतिभाशाली छात्रों को अवसर नहीं मिल पाते, जिससे सामाजिक विषमता और अधिक बढ़ जाती है।

प्राइवेट संस्थानों का मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना होता है, न कि शैक्षणिक गुणवत्ता सुनिश्चित करना। बहुत से

निजी कॉलेजों में शिक्षकों की नियुक्ति योग्यता के आधार पर नहीं बल्कि व्यक्तिगत संपर्कों या पैसों के आधार पर होती है। इससे शिक्षा का स्तर गिरता है और डिग्री का वास्तविक मूल्य समाप्त हो जाता है। निजीकरण के चलते सरकार की जिम्मेदारियाँ भी कम होने लगती हैं। सरकार शिक्षा के बजट को घटा देती है यह मानकर कि निजी क्षेत्र इस काम को कर लेगा। इससे सरकारी स्कूलों और कॉलेजों की हालत और भी खराब होती है, भवन जर्जर हो जाते हैं, शिक्षक नहीं मिलते, और आधुनिक तकनीक का अभाव होता है। इस चक्र में गरीब वर्ग की पहुँच केवल घटिया गुणवत्ता की शिक्षा तक रह जाती है।

स्वास्थ्य क्षेत्र में निजीकरण का प्रभाव और भी गंभीर होता है। सरकारी अस्पतालों में सुविधाओं की कमी और लंबी प्रतीक्षा सूची के कारण लोग मजबूरी में निजी अस्पतालों का रुख करते हैं, जहाँ इलाज बेहद महंगा होता है। निजी अस्पताल आमतौर पर गंभीर बीमारियों और आपातकालीन स्थितियों में ज्यादा मुनाफा कमाने के लिए अनावश्यक जांच, दवाइयों और ऑपरेशनों की सलाह देते हैं। स्वास्थ्य सेवा एक मानवीय क्षेत्र है, जहाँ सेवा की भावना सर्वोपरि होनी चाहिए। डॉक्टरों को 'जीवनदाता' कहा जाता है, परंतु जब चिकित्सा एक व्यवसाय बन जाती है, तो मरीज केवल 'ग्राहक' बनकर रह जाता है। यह स्थिति समाज में नैतिकता के ह्रास को दर्शाती है। आजकल निजी बीमा कंपनियों और अस्पतालों के बीच गठजोड़ देखा जाता है, जिसमें मरीज से ज्यादा से ज्यादा पैसे निकालने की कोशिश होती है। बीमा योजनाओं की जटिलता और अस्पतालों की मूल्यवृद्धि आम जनता को आर्थिक रूप से कमजोर कर देती है। यह स्थिति गरीब और निम्न-मध्यम वर्ग को दोहरी मार देती है।

भारत की बड़ी जनसंख्या गांवों में निवास करती है, जहाँ न तो अच्छे निजी स्कूल हैं और न ही अस्पताल। ऐसे में सरकारी संस्थानों का होना अनिवार्य है। लेकिन सरकार जब इन क्षेत्रों को निजी हाथों में सौंपती है, तो ग्रामीण जनता पूरी तरह से उपेक्षित रह जाती है। निजी कंपनियाँ वहाँ निवेश नहीं करतीं जहाँ लाभ की संभावना कम हो। इससे क्षेत्रीय असमानता और भी गहराती है। जब शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में केवल पैसे वाले लोग ही बेहतर सुविधाएं प्राप्त कर सकते हैं, तो समाज में एक प्रकार की वर्गभेद की दीवार खड़ी हो जाती है। इससे गरीब वर्ग में असंतोष और कुंठा बढ़ती है, जो सामाजिक अशांति को जन्म दे सकती है। एक समतामूलक समाज का निर्माण तभी संभव है जब सभी को समान अवसर मिलें। यह प्रश्न भी उठता है कि क्या सरकारी संस्थानों के भरोसे इन सेवाओं को सुचारू रूप से चलाया जा सकता है? यदि राजनीतिक इच्छाशक्ति, बजट, पारदर्शिता और प्रशासनिक ईमानदारी हो तो सरकारी व्यवस्था निजी से कहीं बेहतर साबित हो सकती है। देश और विश्व में ऐसे कई उदाहरण हमारे सामने हैं जहाँ सरकारी शिक्षा और स्वास्थ्य प्रणाली अत्यंत प्रभावी और विश्वसनीय है।

निजी क्षेत्र के समर्थक यह तर्क देते हैं कि निजी संस्थान प्रतिस्पर्धा के कारण गुणवत्ता बढ़ाते हैं, लेकिन हकीकत यह है कि गुणवत्ता केवल अमीरों तक ही सीमित रहती है। निजी संस्थानों के पास संसाधन होते हैं, पर उनका लक्ष्य सामाजिक समानता नहीं होता। यह तर्क भी दिया जाता है कि निजी क्षेत्र सरकार का बोझ कम करता है, पर यह तर्क तभी स्वीकार्य होगा जब सबको समान अवसर मिले, जो कि निजी व्यवस्था में संभव नहीं है। भारत का संविधान 'समानता', 'न्याय', और 'अवसर की समानता' जैसे सिद्धांतों पर आधारित है। यदि शिक्षा और स्वास्थ्य पर केवल पूंजीवादी व्यवस्था का नियंत्रण हो, तो ये सिद्धांत केवल कागजों तक सीमित रह जाएंगे। एक कल्याणकारी राज्य का मूल कर्तव्य है कि वह नागरिकों की मूलभूत आवश्यकताओं को बिना भेदभाव पूरा करे।

वर्त्तमान परिदृश्य में यह जरुरी है की सरकार द्वारा शिक्षा और स्वास्थ्य पर बजट बढ़ाया जाए। विशेषकर बिहार जैसे पिछड़े राज्य को अगर गरीबी और पिछड़ेपन के दुष्चक्र से बहार निकलना है तो इन दो क्षेत्रों को हमेशा प्राथमिकता देनी होगी। कुछ रिपोर्ट सरकार को GDP का कम से कम 6% शिक्षा पर और 3% स्वास्थ्य पर खर्च

करने की सलाह देते हैं। किन्तु यह समय और जरुरत के अनुरूप होना चाहिए। प्रबल धक्का सिद्धांत जो ऐसे चक्र से निकलने हेतु बड़े निवेश की सलाह देता है आवश्यक है। जरुरी है ये की निवेश सरकारी स्तर से हो। ऐसे प्रयास से सरकारी संस्थानों को आधुनिक बनाना चाहिए। डिजिटल उपकरण, योग्य शिक्षक, मेडिकल स्टाफ और आवश्यक दवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित होनी चाहिए।

शिक्षा और स्वास्थ्य ऐसे क्षेत्र हैं जिनका संबंध केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि राष्ट्रीय और सामाजिक विकास से होता है। इन क्षेत्रों को निजी हाथों में सौंपना केवल सुविधा नहीं, बल्कि संवैधानिक जिम्मेदारियों से मुंह मोड़ने जैसा है। समाज में समता, समान अवसर और न्याय तभी संभव है जब हर नागरिक को बिना किसी भेदभाव के अच्छी शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाएं मिलें। अतः यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में निजीकरण नहीं होना चाहिए।

The POSITION OF WOMEN in Indian Society after Independence

Kausar Tasneem
Assistant Professor
Dept. of Political Science
A.N. College, Patna

In an increasingly interconnected world, the nexus of water resources, food security, and climate change poses multifaceted challenges that demand urgent attention. The competition for restricted water resources increases as agriculture, industry, and urbanization intensify, intensified by shifting precipitation patterns driven by climate change.

India is a country with boast its glorious heritage, where woman has not only enjoyed the equal status but has been described in the scriptures as more than the better half, which she lost with the passage of time. At present it has become necessary for the Government to create special laws and enforce those rigorously to give the desired social and economic status to this impoverished sex. In fact the problem is deep rooted as to be found in any patriarchal society of which India is a living example where males generally dominate and women are trailing in a subordinate position though they shoulder major responsibilities. Efforts need to revive their glory and honour by removing the inequality and imbalance they are facing in the society.

Women form a vital but vulnerable section of the society. She is a pivot round which the whole family revolves. Family is considered the cradle of the society. During Rig-Vedic period women enjoyed a status of equality with men. She along with men received education, participated in assemblies and debates, studied Vedas and performed sacrifices along with their husbands.

Traditionally being a patriarchal society, women have secondary role to play in every household in India. However, issues related to welfare of women have always been a priority among policy makers since independence, though the path has witnessed repositioning with time and as per the requirement from the Fifth Five Year Plan (1974-78) onwards, there has been a remarkable shift in the approach to women s issues from welfare to development. India has also endorsed various global efforts as the the Mexico Plan of Action (1975), the Nairobi Forward Looking Strategies (1985), Convention on Elimination of All Forms of Discrimination Against Women (CEDAW) in 1993, the Beijing Declaration as well as the Platform for Action (1995) and the Outcome Document adopted by the UNGA Session on Gender Equality and Development and Peace for the 21st century. In this background, the paper discusses status of women empowerment in India and its status at the international spectrum

with regard to achievement of SDG Goal 5 of the United Nations by 2030.

Women have been an integral part of India's culture and society since ancient times. However, the status of women in India has been a topic of debate and concern for many years. Despite the progress made in recent years, there are still many challenges that women in India face today.

Progress and Achievements

In recent years, there have been many positive developments in India's efforts to empower women. The government has implemented several programs and policies aimed at improving women's health, education, and economic opportunities. There has been a significant increase in the number of women participating in the workforce, and women have achieved high positions in various fields, including politics, business, and entertainment.

Challenges and Struggles

Despite these achievements, women in India still face significant challenges. Gender discrimination, violence against women, and unequal pay continue to be major issues. Female foeticide and infanticide, particularly in rural areas, remain a significant concern. Women's safety and security are also a significant issue, with many incidents of sexual harassment and assault reported each year. Women in India have been granted various legal rights over the years to promote gender equality and protect their interests. Here are some of the most important legal rights that women in India have:

Right to equality

Article 14 of the Indian Constitution guarantees the right to equality to all citizens, regardless of their gender.

Right to education

The Right of Children to Free and Compulsory Education Act, 2009, makes it mandatory for all children, including girls, between the ages of 6 and 14 to receive education.

Right to work

The Equal Remuneration Act, 1976, ensures that men and women receive equal pay for the same work.

Right against sexual harassment

The Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition, and Redressal) Act, 2013, provides a framework for addressing complaints of sexual harassment at the workplace.

Right to property

The Hindu Succession Act, 1956, was amended in 2005 to give equal inheritance rights

to daughters in Hindu families.

Right to marriage and divorce

The Hindu Marriage Act, 1955, gives women the right to seek divorce on various grounds, including cruelty and adultery.

Right to health

The Maternity Benefit Act, 1961, provides women with paid maternity leave and other benefits during pregnancy and childbirth.

Right against domestic violence

The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005, provides legal protection to women from physical, emotional, and verbal abuse by their spouses or relatives.

Overall, while women in India have come a long way in terms of legal rights, there is still a lot of work to be done to ensure full gender equality and protection from discrimination and violence.

The Way Forward

To address these challenges and improve the status of women in India, there needs to be a concerted effort from all sectors of society. The government needs to continue to implement policies that promote women's health, education, and economic empowerment. There needs to be a greater focus on gender sensitization and education at all levels of society. The media also has a role to play in promoting positive messages about women and combating gender stereotypes.

Conclusion

In conclusion, the status of women in India has improved significantly in recent years, but there is still a long way to go. It is essential to recognize the achievements made so far and continue to work towards a more equitable and just society for women. By addressing the challenges that women in India face and promoting gender equality, we can ensure that women can fully participate in all aspects of life and contribute to the development of the country.

भारत रत्न कर्पूरी ठाकुर : जननायक की कहानी

डॉ. संजीत लाल
सहायक प्रोफेसर
इतिहास विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

कर्पूरी ठाकुर का राजनीतिक जीवन भारतीय राजनीति के आसमान में ध्रुव तारे की तरह है। जो विधायक के रूप में 1952 से शुरू होकर उनके मृत्यु यानी 1988 तक समाज के नवनिर्माण के लिए समर्पित रहा। अंग्रेजी की अनिवार्यता को समाप्त कर शिक्षा को आम जन तक पहुंचाना तथा आरक्षण द्वारा पिछड़ो को नए अवसर प्रदान करना।

हम सोये वतन को जगाने चले है , हम मुर्दा दिलों को जलाने चले हैं।
गरीबों को रोटी न देती हुकूमत , जालिमों से लोहा बजाने चले हैं ,
हमें और ज्यादा न छेड़ो, ऐ, जालिम, मिटा देंगे जुल्म के सारे नजारे ,
या मिटने को खुद हम दीवाने चले हैं, हम सोये वतन को जगाने चले हैं।

यह पंक्तियां आजादी के दिनों में कर्पूरी ठाकुर द्वारा रचित 'स्वतंत्रता संग्राम में नवयुवक शीर्षक' कविता की है। जननायक कर्पूरी ठाकुर को उनके जन्मशती वर्ष 2024 में 'भारत रत्न' द्वारा पुरस्कृत करना बिहार राज्य का ही नहीं मानवता का सम्मान है। यह उस सादगी भरे राजनीतिक शख्सियत का सम्मान है, जिसने खपरैल घर से अपनी जीवन की शुरुआत कर सत्ता के शिखर पर पहुंच कर भी अपनी जायदाद के रूप में वहीं खपरैल घर छोड़ा। लेकिन उनके द्वारा छोड़ी गई राजनीतिक व सामाजिक मूल्यों की विरासत अमूल्य है। वस्तुतः कर्पूरी ठाकुर विलक्षण प्रतिभा के धनी व्यक्ति थें। जिन्होंने बिहार राज्य के दो बार मुख्यमंत्री तथा एक बार उप-मुख्यमंत्री पद पर शोभित हुए। कर्पूरी ठाकुर समाजवादी धारा से जुड़े थे अपनी राजनीतिक जीवन में वे कई पार्टियों से जुड़े लेकिन वे सारी पार्टियां समाजवादी विचारधारा पर ही आधारित थे। कर्पूरी जी ने अपने विचार व सिद्धांतों से कभी समझौता नहीं किया। साथ ही उनकी कथनी व करनी में सदैव समानता बनी रही।

कर्पूरी ठाकुर का जन्म 24 जनवरी 1924 को दरभंगा जिला (वर्त्तमान में समस्तीपुर जिला) के पितौझिंया गांव में हुआ। जो वर्तमान में 'कर्पूरी ग्राम' के नाम से जाना जाता है। वे गोकुलनाथ ठाकुर तथा रामदुलारी देवी की संतान थे। उनके पिता सीमांत किसान के साथ अपनी जातीय पेशा हज्जाम (नाई) का भी कार्य करते थे। कर्पूरी ठाकुर में आरंभिक काल से ही नेतृत्व क्षमता दिखने लगा था। 1930 के दशक के आखिर में प्रसिद्ध समाजवादी नेता पंडित रामानंदन मिश्र के कार्यक्रम में छात्रों के मध्य से कर्पूरी भी मंच पर आकर जबरदस्त उद्गार व्यक्त किया। तब रामनंदन मिश्र ने उनसे उनका नाम पूछा, तो उन्होंने विनम्रतापूर्वक कहा -'कपूरी'। जिस पर रामनंदन मिश्र ने शाबासी देते हुए कहा 'कि तुम कपूरी नहीं हो, तुम तो कर्पूरी हो। तुम वह कपूर हो जो अपनी तेज खुशबू से पूरे वातावरण को सुगंधित कर देता है।' महज 14 वर्ष की आयु में 1938 में स्वामी सहजानंद सरस्वती के नेतृत्व में किसान आंदोलन में भाग लेने के लिए पितौझिंया गाँव में युवाओं को जोड़ने के लिए नवयुवक संघ की स्थापना की। साथ ही स्थानीय युवकों के साथ पुस्तकालय को भी संचालित किया। कर्पूरी ठाकुर पढ़ाई में अच्छे थे तथा विपरीत सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों में भी उन्होंने 1940 में मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास किया जो गौरव का विषय था। मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण होने पर स्थानीय जमींदार द्वारा उनकी प्रतिभा का सम्मान की जगह उन्हें अपना पैर

दबवाने की बात कहना कर्पूरी ठाकुर के जीवन से जुड़ी एक लोक कथा के रूप में प्रचलित हो गयी है। उसके पश्चात वे इंटर की पढ़ाई सी० एम० कॉलेज दरभंगा से तथा 1942 में ग्रेजुएशन की पढ़ाई हेतु नामांकन करवाया। इसी दौरान भारत छोड़ो आंदोलन ने उन्हें स्वतंत्रता समर में खींच लिया। जयप्रकाश नारायण व राममनोहर लोहिया सरीखे समाजवादी नेता उनके आकर्षण का केन्द्र रहे। इसी दौरान जेपी द्वारा निर्मित आजाद दस्ता का हिस्सा बने। अंग्रेजों की कारवाई तेज होने पर वे अपने अन्य समाजवादी साथियों के साथ लगभग 13 महीने तक फरार रहे। अंततः 23 अक्टूबर1943 को उन्हें गिरफ्तार करके दरभंगा व तत्पश्चात् भागलपुर जेल में रखा गया। जेल की अव्यवस्था के कारण वे 28 दिनों तक उन्होंने भूख हड़ताल की। बंदी जीवन में उन्होंने विश्व के विभिन्न क्रांतियां व विचारकों - मार्क्स, हीगल, लेनिन, माओत्सें तुंग आदि को पढ़ा। वे समाजवाद, साम्यवाद, पूंजीवाद, द्वंद्वात्मक भौतिकवाद, भारतीय दर्शन इत्यादि विषयों पर भी गहन जानकारी हासिल की। जब वे नवंबर 1945 में लगभग 25 महीने की जेल की कैद की सजा काटकर बाहर आए, तब तक वे परिपक्व व बौद्धिक नेता के रूप में प्रांतीय राजनीति में प्रतिष्ठित हो गये थे। कर्पूरी जी 1945 से 1947 तक वे कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की दरभंगा जिला इकाई के मंत्री रहे। 1947 में उन्हें बिहार प्रादेशिक किसान सभा के प्रधान सचिव बनाया गया।1947 में ही डॉ. राम मनोहर लोहिया ने पंडित रामनंदन मिश्र के नेतृत्व में 'अखिल भारतीय हिंद किसान पंचायत' के स्थापना के द्वारा कर्पूरी ठाकुर को जिले की राजनीति से बाहर निकाल कर प्रांतीय राजनीति में ले आया गया। हिंद किसान पंचायत में अपने बेहतरीन काम के कारण भी चर्चित हुए।

कर्पूरी ठाकुर चुनाव में धन के दुरुपयोग की जगह चुनाव में धन के न्यूनतम उपयोग पर जोर दिया। आजादी के पश्चात कांग्रेस से अलग हुए सोशलिस्ट पार्टी के वे सदस्य बने। जब 1952 में पहला आम चुनाव की घोषणा तब वह चुनाव में खड़ा नहीं होना चाहते थे तथा सांगठनिक कार्यों मे ही लगे रहना चाहते थे। लेकिन शीर्ष नेतृत्व जयप्रकाश नारायण सरीखे नेताओं के दवाब के कारण वे ताजपुर विधान सभा के उम्मीदवार के तौर पर खड़े हुए।लेकिन उन्होंने अपनी कुछ शर्ते रखी - जिसमें चुनावी खर्चे के लिए वे किसी के पास पैसे मांगने नहीं जाएंगे तथा चुनावी चंदे के रूप में कहीं से भी चवन्नी व अठन्नी से ज्यादा मुद्रा नहीं ली जाएगी, केवल अपवाद स्वरूप प्रभावती देवी (जेपी की पत्नी) की जिद्द की वजह से उन्होंने उनसे 5 रुपये की चंदा को स्वीकार किया। उन्होंने जनता द्वारा प्राप्त चुनावी चंदे को समाज का आशीर्वाद माना तथा उसकी एक भी पाई अपने व्यक्तिगत उपयोग में नहीं लगाया। जो उनका अपना बनाया गया उसूल था। ताजपुर में उनका मुकाबला कांग्रेस प्रत्याशी रामसुकुमारी देवी से था जो बनैली रियासत की अंतिम राजा कामाख्या नारायण सिंह की पत्नी थी। साथ ही ताजपुर में कुशवाहा व यादव का वर्चस्व था तथा नाई समुदाय नगण्य था। इन विपरीत परिस्थितियों में भी जब पूरे देश में कांग्रेस का जोर था तथा समाजवादियों की हार का सामना करना पड़ा। तब कर्पूरी ठाकुर उन चंद समाजवादियों में से एक थे , जिनके सिर पर चुनावी जीत का सेहरा बंधा। इस चुनावी जीत के पश्चात केवल 1984 में इंदिरा गांधी की हत्या से उपजी सहानूभूति की लहर में लोकसभा चुनाव में हार के अलावा कर्पूरी ठाकुर ने अपनी पूरी राजनीतिक जीवन कभी भी हार का मुंह नहीं देखा।

युवा कर्पूरी विधायक के रूप में विधानसभा में प्रमुख वक्ता के रूप में उभरें - बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, दामोदर घाटी निगम प्रस्ताव, गन्ने की कीमत से लेकर भूदान यज्ञ विधेयक, स्कूलों में पाठ्य पुस्तकों की कमी से लेकर बिहार राजभाषा विधेयक जैसे कई विविध विषयों पर अपनी राय रखी। वे भारतीय प्रतिनिधिमंडल के सदस्य के तौर पर 1952 में वियना तथा युगोस्लाविया तथा 1959 में इजरायल, हालैण्ड और इटली आदि देशों की यात्रा की वे इन देशों की उन्नत कृषि प्रणाली की जानकारी हासिल की। इजरायल की कृषि प्रणाली से काफी प्रभावित थे। 1967 के चुनाव में पहली बार विभिन्न राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकार की स्थापना हुई। जिसमें कई राज्यों सहित बिहार में

संविद (संयुक्त विधायक दल) सरकार बनी। जिसमें वाम, दक्षिण तथा मध्यम मार्गी सभी पार्टियों शामिल थी। संविद सरकारों के निर्माण ने निचली जातियों के राजनीतिक सशक्तीकरण की तरफ प्रयास किया। 68 सीटों वाली सबसे बड़ी दल संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी के नेता कर्पूरी ठाकुर को समझौता करते हुए उपमुख्यमंत्री पद मिला वहीं 26 सीटों वाली जनक्रांति दल के पूर्व कांग्रेसी महामाया प्रसाद सिंह मुख्यमंत्री बनें। हालॉकि कपूरी ठाकुर के पास उपमुख्यमंत्री के साथ शिक्षा व वित्त दो प्रमुख मंत्रालय भी थे। उस समय वे तत्कालीन मुख्यमंत्री से ज्यादा चर्चित व लोकप्रिय नेता थे। उस समय देश विषम खाद्य संकट से जूझ रहा था इस दौरान महामाया -कर्पूरी सरकार की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि थी इस खाद्य संकट का सफलता पूर्वक प्रबंधन करना।

कर्पूरी ठाकुर का महत्वपूर्ण कार्य शिक्षा का लोकतंत्रीकरण करने में भी है जिसके तहत उन्होंने मैट्रिक परीक्षा में अंग्रेजी भाषा की अनिवार्यता को समाप्त किया। वे हिंदी भाषा के समर्थक थे। वे आरंभ से ही कांग्रेसी सरकार पर आरोप लगाते रहे कि सरकार उनलोगों को ही सरकारी नौकरियों में प्राथमिकता दे रही है जो अंग्रेजी भाषा के जानकार है। बिहार राजभाषा विधेयक 1957 पर बहस में भागीदारी के दौरान कहा 'जो लोग हिंदी भाषा के जानकार हैं वे सब नौकरी पाने का इंतजार कर रहे हैं, लेकिन उन्हें नौकरी नहीं मिल रही है क्योंकि उन्हें अंग्रेजी नहीं आती। अब यह सरकार की जिम्मेदारी है कि वह हिंदी जानने वाले लोगों को वैसी ही शिक्षा देने की व्यवस्था करें जैसे अंग्रेजी जानने वालों को दी जा रही है। 'कर्पूरी ठाकुर मानते थे बिहार की अधिसंख्य आबादी अंग्रेजी भाषा की जानकारी न होने के कारण मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण नहीं कर पा रहे। जबकि उस समय नॉन मैट्रिक होना एक बड़ा सामाजिक आक्षेप था। उस समय बिहार में सिपाही बनने के लिए भी अंग्रेजी का जानना अनिवार्य माना जाता है कर्पूरी ठाकुर ने अपने 1967 के कार्यकाल में मैट्रिक परीक्षा में अंग्रेजी के अनिवार्यता को समाप्त कर दिया। जिससे अब अंग्रेजी में उत्तीर्ण होना जरूरी नहीं रह गया। फलतः आने वाले वर्षो में यहाँ तक कि उन दिनों के अभिजात्य माने जाने वाले पटना विश्वविधालय में भी छात्रों की सामाजिक संरचना बदलने लगी। पिछड़ी जातियों के ग्रामीण छात्रों की तादाद अब विश्वविद्यालयों में बढ़ने लगी। हालांकि उस समय बिना अंग्रेजी से उत्तीर्ण छात्र को कर्पूरी डिवीजन से पास होने के रूप में चिन्हित किया जाने लगा तथा उनका मजाक उड़ाया गया।

वे 1967 में दिल्ली में आयोजित शिक्षा की राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में बतौर मुख्यमंत्री प्रतिनिधि हिंदी में अपनी बातों को रखने वाले संभवत पहले व्यक्ति थे।1967 में उन्होंने सातवीं तक की स्कूली शिक्षा तथा आगामी कार्यकाल में मैट्रिक तक की स्कूली शिक्षा को निःशुल्क कर दिया। उनकी सरकार ने एक आदेश भी पारित किया जिसमें कहा गया की गैर -सरकारी माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों को सरकारी स्कूलों के शिक्षकों के समान वेतन मिलेगा और कॉलेज के शिक्षकों को अब विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सिफारिशों के अनुसार वेतन दिया जाएगा। वस्तुतः लोहिया - कर्पूरी की अपनी भाषा के महत्व को लेकर जो प्रयास किया वह अब राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मूल तत्व है। साथ ही वर्त्तमान में यह निःशुल्क व्यवस्था छात्राओं के लिए स्नातकोत्तर तक की शिक्षा पर लागू है।

1940 के दशक तक बिहार का किसान आंदोलन कांग्रेस के हाथों से निकलकर समाजवादियों व साम्यवादियों के हाथ में चला गया। उसके विरोध में जमींदारों ने भी लामबंदी शुरू कर दी तथा कुछ बड़े जमींदारों के द्वारा गरीब किसानों को उनकी जमीन से बेदखल करने के लिए अभियान आरंभ हुआ। आजादी के समय व तत्पश्चात् जमींदार -कृषक -भूमिहीनों संघर्ष में तेजी आ गई। फलतः समाजवादी कर्पूरी ठाकुर ने भूमि जोतने वाले के अधिकारों को बनाए रखने के लिए बकाश्त आंदोलन सक्रिय रूप से भाग लिया उन्होंने बटाईदारों व भूमि जोतने वाले किसानों की अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए यथाशीघ्र कानून लाने की बात करते थे। इस क्षेत्र में उन पर स्वामी सहजानंद सरस्वती तथा लोहिया के विचारों का प्रभाव था। उनका स्वामीजी के इस विश्वास में आस्था थी कि

कि कृषकों की कोई जाति नहीं होती है। फलतः वे भूमि जोत के मुद्दे पर श्री कृष्ण सिंह के सरकार पर भी दवाब बनाये रखें तथा बकाश्त आंदोलन के दौरान 700 लोगों तथा उनके नेता कर्पूरी ठाकुर को शाहाबाद में गिरफ्तार कर लिया गया। कृषकों के भूमि अधिकारों व उन्नयन के लिए वे काफी सजग थे। विदेश भ्रमण से प्राप्त अनुभवों तथा कृषि उन्नयन के लिए कर्पूरी ने खेती व मकान बनाने की योजना बनाई तथा इसकी रूपरेखा योजना आयोग को दी। वे ग्रामीण सिविल सेवा के पक्षधर थे जो गांव की पृष्ठभूमि तथा जीवन शैली के साथ उसकी संरचना से भली-भांति परिचित हो, जिससे वे वहां के किसानों के उपज बढ़ाने के नए तरीकों से मदद कर सके। उन्होंने मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी की मांग की। उच्च व निम्न सरकारी सेवकों के मध्य वेतन में भारी अंतर था इस असमानता को कम करना उनके समाजवाद का लक्ष्य रहा है। उन्होंने जमीन हदबंदी के मिल्कियत की सीमा तय करने का प्रयास किया। जिससे भूमिहीनों के मध्य भूमि का वितरण किया जाए हालांकि इसमें उन्हें बड़ी-बड़ी जमीन मालिक वाले सवर्ण तथा पिछड़े विधायको के विरोध का भी सामना करना पड़ा। लेकिन 1967 में उन्होंने अलाभकर जोत (6 एकड़ से कम) वालें किसानों से लगान न वसूलने का आदेश पारित किया।

कर्पूरी ठाकुर ने समता मूलक समाज के निर्माण के लिए ऐतिहासिक काम किया। वे राज्य के सामाजिक उत्थान के न सिर्फ जनक थे बल्कि अगुवा भी थे। इस क्षेत्र में लोहिया उनके पथ प्रदर्शक रहे। लोहिया का रास्ता एक ही समय में स्त्री, दलित, पिछड़े और वंचित समूह और गुलाम राष्ट्रीयताओं को हौसला देता था। अपने मुख्यमंत्रित्व काल में उन्होंने बिहार में नौकरी व शिक्षा में आरक्षण कर समाज के वंचितों व पिछड़े समुदाय को सत्ता में हिस्सेदारी व प्रतिनिधित्व देने का प्रयास किया। 22 जून 1977 को बिहार में कर्पूरी ठाकुर के नेतृत्व में जनता सरकार का गठन हुआ। करीब साढ़े आठ महीने बाद 9 मार्च 1978 को कर्पूरी मंत्रिमण्डल ने मुंगेरी लाल समिति की सिफारिशों को स्वीकृति देते हुए 1 अप्रैल से राज्य में पिछड़ी जातियों के लिए सरकारी नौकरियों में आरक्षण लागू करने का फैसला किया। इस निर्णय के तहत अन्य पिछड़ी जातियों को 8 प्रतिशत, अति पिछड़ी जातियों को 12 प्रतिशत, महिलाओं को और आर्थिक रूप से पिछड़े सवर्णों को 3-3 प्रतिशत आरक्षण दिया जाना था। दरअसल, दारोगा प्रसाद राय सरकार ने मुंगेरी लाल की अध्यक्षता में पिछड़ा वर्ग आयोग का गठन किया था। लेकिन उसकी अनुशंसाओं पर कांग्रेस की सरकार ने 1972 से 77 के बीच कोई कारवाई नहीं की।

इसके द्वारा पहली बार पिछड़ो के साथ अति पिछड़ों की पहचान, महिलाओ व गरीब सवर्णों के लिए भी शिक्षा व नौकरी में कोटा में कोटा के तहत आरक्षण की व्यवस्था की। इस व्यवस्था के लागू होने से उन्हें काफी विरोध का भी सामना करना पड़ा। कुछ लोग कर्पूरी ठाकुर के इतने खिलाफ हो गए कि वे जाति सूचक नारे भी लगाने लगे - 'कर्पूरी - करपूरा छोड़ गद्दी, उठा उस्तूरा।' लेकिन कर्पूरी ठाकुर ने पिछड़ो व वंचितों के उन्नयन के लिए न केवल खाका तैयार किया अपितु उसे लागू भी किया। इसी आधार पर तत्कालीन केन्द्र की मोरारजी सरकार ने भी 1978 में मंडल आयोग का गठन किया।कर्पूरी मंत्रिमण्डल का एक महत्त्वपूर्ण कदम था -प्रदेश में पंचायत चुनाव संपन्न कराना। व्यापक हिंसा खून खराबे के बीच हुए इस चुनाव के द्वारा पिछड़ी जातियों ने ग्रामीण सत्ता पर उच्च जातियों के परम्परागत वर्चस्व को तोड़ दिया।

उनके जीवन से जुड़ी हुई सादगी के किस्से से भरे पड़े हैं - जिसमें उनके विधायक बन जाने पर भी उनके पिता ने अपना पुश्तैनी काम - हज्जाम को नहीं छोड़ा और न ही कर्पूरी ने अपने पिता को कभी अपने काम से रोका, क्योंकिं वह किसी भी काम को बड़ा या छोटा नहीं मानते थे। मुख्यमंत्री पद पर रहते अपनी बेटी की शादी के लिए रांची जाने में सरकारी संसाधनों का इस्तेमाल न करना।अपने छोटे बेटे के हृदय के इलाज के लिए कार्यकर्ताओं द्वारा तैतीस हजार रुपये धन एकत्रित करने को अस्वीकार कर, इसे पार्टी फंड में जमा करना।हॉलाकि बाद में

बहुगुणाजी ने इलाज की सस्ती व्यवस्था करवायी।जनता दल अध्यक्ष चंद्रशेखर द्वारा उनके फटे कुर्ते को देखकर उनके लिए कुर्ता फंड एकत्र कर उन्हें देना तथा इस फंड को कर्पूरी द्वारा पार्टी फंड में जमा कर देगा। उनके गाँव के मकान की मरम्मत के लिए गांव में पचास हजार ईटों का भेजा जाना तथा उन ईटों से घर के मरम्मत की जगह वहां स्कूल का निर्माण करवा देना। अपने मुख्यमंत्रित्व काल में ही पटना में विधायक व सांसदों के लिए कॉलोनी के रूप में कौटिल्य नगर बनाने का फैसला हुआ। विधायकों व सांसदों को सस्ती दरों पर सरकारी जमीन दी गई। कर्पूरी जी से भी आग्रह किया गया कि वे भी एक भू - खंड ले ले, लेकिन उन्होंने इसे नकार दिया। कर्पूरी ठाकुर के प्रधान सचिव रहे यशवंत सिन्हा अपने जीवन वृतांत में लिखते है 'कि अपने जीवन काल मैंने जितने नेताओं के साथ काम किया उसमें सबसे बेहतर दो-तीन नेताओं में एक कर्पूरी ठाकुर थे। वे एक कुशल प्रशासक थे। राजनीति में इतना ईमानदार होना तथा बना रहना बड़ा मुश्किल था, बल्कि वे अपने साथ रहने वाले लोग भी ईमानदार रहें इसे सुनिश्चित करते थे। अपने निकट के लोगों की गड़बड़ी को कभी बर्दाश्त नहीं करते थे। 'उनके इस सादगी व प्रभावशाली व्यक्तित्व व निर्णयों के कारण ही जनता पार्टी अध्यक्ष चंद्रशेखर ने कर्पूरी ठाकुर को सर्वप्रथम 'जननायक' के रूप में पुकारा।

कर्पूरी ठाकुर का राजनीतिक जीवन भारतीय राजनीति के आसमान में ध्रुव तारे की तरह है। जो विधायक के रूप में 1952 से शुरू होकर उनके मृत्यु यानी 1988 तक समाज के नवनिर्माण के लिए समर्पित रहा। अंग्रेजी की अनिवार्यता को समाप्त कर शिक्षा को आम जन तक पहुंचाना तथा आरक्षण द्वारा पिछड़ो को नए अवसर प्रदान करना। यह दोनों परिवर्तन आज भी विमर्ष का विषय बने हुए हैं तथा कर्पूरी ठाकुर की भाषा व समानता की लड़ाई स्वातंर्त्योत्तर भारत की एक अविस्मरणीय परिघटना बनी हुई है। वही सबसे बढ़कर उनका सादगीपूर्ण राजनीतिक जीवन तथा साध्य व साधन की शुचिता को ध्यान रखना वर्त्तमान समय में एक नजीर पेश करती है। उनकी जन्मशती वर्ष में 'भारत रत्न' जैसे सर्वोत्कृष्ट सम्मान मिलना, हॉसिये पर पड़े लोगों के लिए पुरोधा और समानता व सशक्तिकरण के समर्थक के रूप में उनके स्थायी प्रयासों का एक प्रमाण हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने जननायक कर्पूरी ठाकुर को भारत रत्न दिए जाने की घोषणा पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते कहा कि 'पिछड़ों और वंचितों के उत्थान के लिए कर्पूरी ठाकुर की अटूट प्रतिबद्धता और उनके दूरदर्शी नेतृत्व ने भारत के सामाजिक - राजनीतिक ताने-बाने पर एक अमित छाप छोड़ी है यह पुरस्कार न केवल उनके उल्लेखनीय योगदान का सम्मान है बल्कि हमें अधिक न्यायसंगत समाज बनाने के उनके मिशन को जारी रखने के लिए भी प्रेरित करता है।'

संदर्भ सूची :-

- संतोष सिंह/आदित्य अनमोल, कर्पूरी ठाकुर, पेगुइन स्वदेश, नई दिल्ली, 2025
- प्रसन्न कुमार चौधरी/श्रीकांत, बिहार में सामाजिक परिवर्तन के कुछ आयाम, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001,
- इंदुमति केलकर, राममनोहर लोहिया, नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली, 2005
- जय प्रकाश नारायण, समाजवाद क्यों?, सेतु प्रकाशन, नोएडा , 2023
- आनन्द कुमार, गाँधी-लोहिया-जयप्रकाश और हमारा समय, नयी किताब, दिल्ली, 2014
- रामचंद्र गुहा, भारत नेहरु के बाद, पेगुइन बुक्स, नई दिल्ली , 2012
- संतोष सिंह, रूल्ड ऑर मिसरुल्डरूद स्टोरी एंड डेस्टिनी ऑफ बिहार , ब्लूम्सबरी , नई दिल्ली , 2015
- यशवंत सिंहा , रिलेन्टलेस : एन ऑटोबायोग्राफी , बलूम्सबरी इंडिया , नई दिल्ली , 2019
- अमर उजाला सामाचार पत्र, पटना , 23 जनवरी 2024
- Sansad TV special : Bharat Ratna Jananayak karpoori thakur, 01 April 2024

'कछुआ धरम' और नवजागरणकालीन चेतना

डॉ. सरिता सिन्हा
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

कछुआ द्वारा विषम परिस्थिति में अपना सिर छुपा लेना और अपनी पीठ को ढाल बनाकर समस्या से बच निकलने का प्रयास करना वर्तमान सामाजिक, राजनैतिक परिवेश में अत्यंत प्रासंगिक लगता है। 'कछुआ धरम' का भाई 'शुतुरमुर्ग धरम' है जो अपना पीछा किये जाने पर रेत में सिर छिपाकर यह मान लेता है कि कोई उसे नहीं देख रहा है।

चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' जी बीसवीं शताब्दी के आरंभिक निबंधकार की श्रेणी में आते हैं। इसी समय हिंदी गद्य के क्षेत्र में महावीर प्रसाद द्विवेदी का अविर्भाव हुआ था और उन्होंने भाषा के रूप को सुव्यवस्थित एवं समृद्ध तथा विषय वस्तु के क्षेत्र को विस्तृत बनाने में अपनी शक्तियों का नियोजन किया था। चंद्रधर शर्मा गुलेरी द्विवेदी युग के आरंभिक तीन लेखकों में से एक हैं। द्विवेदी युग के दो अन्य निबंधकारों के नाम हैं - सरदार पूर्ण सिंह तथा माधव प्रसाद मिश्र। ये तीनो उच्च कोटि के निबंधकार थे। पंडित माधव प्रसाद मिश्र अधिकांशतः धार्मिक विषयों पर ही निबंध लिखते थे। उन्होंने कुछ साहित्यिक समीक्षाएं भी लिखी थी। उनके निबंध अधिकतर भावनात्मक होते थे। भावों की माणिक्ता के साथ एक विशेष प्रकार की ओजस्विता भी इनके निबंध में थी इनकी रचनाओं में वाक्य विन्यास अत्यंत ही सरस और सटीक है।

इस युग के तीसरे निबंधकार सरदार पूर्ण सिंह ने अपने निबंधों में अपनी अद्‌भुत प्रतिभा का परिचय दिया। विषय और भाषा-शैली सभी दृष्टि से इनके निबंध हिंदी में एक नई दिशा के सूचक थे। भाषा की जैसी एकता और भावों की मूर्तिमत्ता उनके निबंधों में देखी जाती है, वैसी उस समय के किसी अन्य लेखकों में बिरले ही मिलती है। इनके निबंध यद्यपि भावनात्मक शैली के अंतर्गत ही आते हैं, किंतु उनका ढंग बिल्कुल अनोखा है। इनके निबंध की बड़ी विशेषता यह है कि पाठक हृदय की सहजता एवं भावुकता में बह जाते हैं और उनके मन पर एक विशेष प्रभाव अंकित हो जाता है। 'आचरण की सभ्यता', 'मजदूरी और प्रेम' इत्यादि सरदार पूर्ण सिंह के प्रमुख निबंध हैं।

इस समय के अन्य निबंध लेखकों में पंडित पद्‌मश्री शर्मा, गोपाल राम गहमरी तथा ब्रजनंदन सहाय का नाम भी प्रमुखता से लिया जाता है। इनमें पंडित पद्‌म सिंह शर्मा की शैली विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनकी भाषा बड़ी ही चुटीली है। इनके द्वारा लिखे गए निबंध में भावुकता के साथ-साथ मार्मिकता भी पाई जाती है। ये अपने निबंधों की गद्य शैली के लिए ही प्रसिद्ध हैं। बृजनंदन सहाय के निबंधों की भाषा काव्यात्मक एवं मनोरम है। इनके निबंधों में अनुभूति की गहनता पाई जाती है।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने विविध विषयों पर-छोटे-बड़े अनेकों निबंध लिखे। इनमें अधिकांश निबंध ऐसे हैं जिनसे पाठकों में कौतुहल जागृत होता है साथ ही साथ उनका ज्ञानवर्धन और मनोरंजन भी होता है। भाषा बड़ी ही विशद, प्रांजल एवं बोधगम्य है। द्विवेदी जी ने कुछ ऐसे भी निबंध लिखे जिनमें निबंध के अपेक्षित गुण पाए जाते हैं। इनमें सरसता के साथ-साथ वचन विदग्धता भी पायी जाती है। शैली बड़ी ही रमणीय एवं प्रवाहपूर्ण है। जीवन में नैतिक आदर्श की प्रतिष्ठा और जातीयता तथा देश प्रेम का उद्‌बोधन द्विवेदी युग के साहित्यकारों का प्रधान लक्ष्य था। द्विवेदी जी ने समाज, धर्म, शिक्षा, नीति, संस्कृति, साहित्य, राजनीति, इतिहास आदि अनेक

विषयों पर लेख लिखे और तात्कालीन हिंदी पाठकों के दृष्टिकोण को व्यापक बनाया। प्राच्य एवं पाश्चात्य ज्ञान भण्डार में जहाँ जो कुछ ग्रहण करने योग्य था, उसे द्विवेदी जी ने ग्रहण किया तथा अपनी सरल और सुबोध शैली के प्रयोग द्वारा उसे पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया। चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' जी एवं अन्य द्विवेदी युगीन निबंधकारों ने निबंध के माध्यम से सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक क्षेत्र में तो सुधारवादी दृष्टिकोण अपनाया ही, साथ-ही-साथ साहित्यिक गतिविधियों को भी एक नया आयाम दिया। इन निबंधकारों के निबंध इस बात का प्रमाण हैं।

चंद्रधर 'शर्मा गुलेरी' द्वारा रचित निबंध 'कछुआ धरम' (1919) एक प्रतीकात्मक निबंध है। यह अपने समय के समाज तथा व्यवस्था पर किया गया व्यंग्य है जो तात्कालीन समस्याओं से टकराते हुए अपने भावबोध में आज भी उतना ही प्रासंगिक है। 'कछुआ धरम' निबंध सभ्यता के विकास से लेकर बीसवीं सदी के आरंभिक दो दशकों की स्थिति का चित्रण करती है। निबंधकार के अनुसार हमारे आस-पास कई ऐसे मुद्दे हैं जिन पर विचार करने की जरूरत है, किन्तु हम उनपर विचार न कर खुद को संकुचित कर लेते हैं। जिस समय यह निबंध लिखा गया, उस समय भारतीय समाज में व्याप्त रूढ़ियों को तोड़ने के लिए कई समाज सुधार आंदोलन चल रहे थे जो सिद्धांतों को छोड़कर आगे बढ़ने की बात कर रहे थे। गुलेरी जी उसी ओर संकेत करना चाहते हैं। उन्होंने अपनी बात को 'कछुआ धरम' पर शुरू कर' शुतुरमुर्ग धरम' पर खत्म किया है। दोनों के मूल में एक ही बात है - परिस्थिति का सामना न कर समस्या से बचने के लिए ढाल में घुस जाना और अपने विचार एवं चिंतन प्रक्रिया को विस्तार न देना। इन्हीं बातों को समझते हुए 'गुलेरी' जी ने 'कछुआ धरम' निबंध के माध्यम से व्यंग्य का आधार लेकर उसका विरोध किया।

निबंध की शुरुआत में ही 'गुलेरी' जी ने मनुस्मृति में वर्णित एक प्रसंग का उल्लेख किया है जहां गलत बात का विरोध नहीं है। उसे वह हिंदुस्तानी सभ्यता का आदर्श बताते हुए टिप्पणी करते हैं कि उसका प्रतिकार होना ही चाहिए। अन्य जगहों पर तो इसका विरोध है परन्तु हिंदुस्तान में नहीं। निबंधकार के अनुसार मनुस्मृति में लिखा है कि जहां भी गुरु की कलंकथा हो रही हो, वहां से उठ कर चले जाना चाहिए अथवा अपनी कान बंद कर लेनी चाहिए। 'गुलेरी' जी कहते हैं कि यह तो सही है, लेकिन दूसरे देश के लोग इसका तीसरा उपाय ढूंढ लेते हैं और उन्हें पीटते हैं जो गुरु की शिकायत करते हैं। 'गुलेरी' जी दूसरे देशों के तीसरे उपाय के आधार पर कछुआ धर्मियों पर व्यंग्य करते हैं कि यह तो हिंदुस्तानी कछुआ धर्म के विरुद्ध होगा क्योंकि हिंदुस्तानी कछुए की तरह अपने बचाव के लिए ढाल में घुस जाते हैं, विरोध नहीं करते। ऐसे मुद्दे नवजागरण कालीन भारतीय समाज में भी विद्यमान थे। भारतीय सामजिक - राजनैतिक परिस्थितियां बहुत कुछ ऐसी ही थीं। कुछ पढ़े लिखे मध्य वर्ग के लोग इसे समझ रहे थे। इसमें उन्हें अंग्रेजों की चाल, कूटनीति आदि की स्पष्ट झलकियां मिल रही थी और वे इनका विरोध कर रहे थे। ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज आदि उसी के विरोध के परिणाम स्वरूप स्थापित हुए थे। इसके बावजूद लोग अपनी समस्याओं पर विचार न कर उससे मुंह चुराते थे। ऐसे प्रसंगों में अन्तर्निहित भाव इस और संकेत देते हैं कि गलत से डरकर या बचकर भागना उचित नहीं, वरन उसका सामना करते हुए यथोचित प्रतिकार आवश्यक है।

निबंधकार चंद्रधर शर्मा'गुलेरी' जी ने 'कछुआ धरम' नामक निबंध के माध्यम से भारतीय जनमानस में व्याप्त स्वार्थपरता एवं कूपमण्डूकता पर करारा व्यंग्य किया है। अपनी बात को स्पष्ट करने हेतु उन्होंने आर्यों-अनार्यों ,सुरों- असुरों आदि का उदाहरण दिया है।'गुलेरी' जी लिखते हैं कि देवताओं और आर्यों ने कभी असुरों अथवा अनार्यों से लोहा नहीं लिया बल्कि मैदान छोड़कर भाग जाना ही उचित समझा। अनार्य चढ़ाई कर रहे थे, आर्य चुप बैठे थे। असुरों के डर से इंद्र द्वारा किवाड़ बंद कर लेना उचित है? प्रासंगिक ढाल में घुस जाना अर्थात किवाड़ बंद कर लेना ही है, विरोध दर्ज करना अथवा वीरता का प्रदर्शन करना नहीं। 'गुलेरी' जी के निबंध में व्यंग्य की धार काफी तीक्ष्ण है। मन्त्रों से देवताओं को आहुति दी जा रही, किन्तु बाधक तत्वों से टक्कर नहीं ले रहे। गौरतलब है कि 1857 का सिपाही विद्रोह अनेक सामजिक, राजनैतिक, धार्मिक मुद्दों को अपने गर्भ में छुपाये हुए

था। युद्ध क्षेत्र में प्रयोग में लाये जाने वाले कारतूसों ने लोगों के मन में उठने वाली चिंगारी को हवा दे दी थी। हिंदू और इस्लाम दोनों के धर्म नष्ट होने का सवाल उठ खड़ा हुआ और लोगों ने विद्रोह छेड़ दिया। आज इहलोक की चिंता ज्यादा कारगर है, तब परलोक की चिंता थी। जब परलोक को अच्छा बनाने के लिए लोगों ने युद्ध छेड़ दिया, फिर इहलोक को सुधारने के लिए विद्रोह की मनःस्थिति का पैदा ना होना निःसंदेह निंदनीय है।

20वीं शताब्दी में गौ रक्षा आंदोलन चल रहा था। 'गुलेरी' जी ने उसे आधार बनाकर व्यापार और आर्थिक पक्ष की ओर संकेत किया है। व्यापार में अपनी सामग्री का गुणगान करना कला कहलाती है। एक दृष्टांत प्रस्तुत करते हुए निबंधकार ने लिखा है - 'गाय से दूध होता है, मक्खन होता है, दही होता है, यह होता है, वह होता है। पर काबली काहे को मानता, उसके पास सोम की मोनोपॉली थी और उन्हें बिना लिए जीवन सरस नहीं ।अंत में गौ का एक पाद अर्द्ध होते होते दाम तय हो जाते हैं। भूरी आंखों वाली एक बरस की बछिया में सोम राजा खरीद लिए जाते हैं। '' (1) मुख्य बात है सोम का क्रय-विक्रय, पर उसके लिए इतना तर्क -वितर्क कर रहे हैं। व्यापार का यह पक्ष एकतरफा लाभ की ओर संकेत करता है जहाँ लाभ अंग्रेजों को ही था। 'गुलेरी' जी ने ऐसे प्रसंगों के माध्यम से हिंदू-मुस्लिम धर्मावलम्बियों के बाह्याडम्बर पर भी प्रहार किया है। इस्लाम में सूद लेना हराम है, पर सूद देना हराम नहीं। अतः जरुरत पड़ी तो सूद दी जायेगी। आर्यों के मन में यह बात थी कि सोम बेचना पाप है, उसकी उपज नहीं करनी है। लेकिन क्रय करना करना पाप नहीं चाहे इसकी कितनी भी कीमत चुकानी पड़े। आर्य सोमरस पीने के शौकीन थे। गोदान देकर सोमरस खरीदते थे। उनकी इसी लालसा को देखते हुए गंधर्वों ने सोमरस की कीमत बढ़ा दी। इससे आर्यों को और अधिक कठिनाई होने लगी। विकल्प ढूंढने अथवा उपादान बढ़ाने की बजाय सिद्धांतों में उलझ कर रह जाने की मानसिकता विकास के मार्ग में बाधक है। 20वीं सदी में ये सभी समस्याएं विद्यमान थीं और इसके बीज नवजागरण काल में भी दिखाई देते हैं।

निबंधकार के अनुसार तात्कालीन सामजिक राजनैतिक परिवेश में भारतियों को धर्म के आधार पर गुमराह किया जाता था। विदेशी भारत में व्यापार करने आये। यहाँ आकर उन्होंने अपने धर्म का प्रचार प्रसार किया। पादरी के प्रसंग में 'गुलेरी' जी लिखते हैं कि -अपने धर्मविस्तार के उद्देश्य से एक पादरी ने कुँए पर लोगों से कहा कि मैंने उसमें तुम्हारा अभक्ष्य डाल दिया है। फिर तो धर्म ही नष्ट हो गया। कछुए को ढाल के बल उलट दिया गया। अब तो उसका चलना भी संभव नहीं। उसे चलना है तो कुछ उपाय तो ढूंढना ही होगा। यानि मुख्य बातों पर सोचने समझने की शक्ति ही नष्ट हो गई। उन्होंने समुद्र यात्रा के प्रसंग को इसी धर्म एवं चिंतन की प्रक्रिया में लपेट कर दिखाया है। समुद्र पार के लोग अपने धर्म के प्रचार -प्रसार में लगे हुए हैं। वे लूट-मार नहीं करते किन्तु बेधरम कर देते हैं। निबंध में हर जगह धर्म पर करारी चोट है जो कछुआ धर्म का ही उदाहरण है। मसलन - खांड खाने से अधर्म होता है क्योंकि उसमें अभक्ष्य चीजें मिली हुई होती हैं। यहां दो बातें सामने आती हैं-

(1) देसी गुड़ खाना बंद करो।

(2) अगर मीठा खाए बिना नहीं रह सको तो शहद खाना शुरू करो।

यानी अपनी समस्याओं से लड़ने की कोशिश नहीं करना और न उसका कोई विकल्प ढूंढना। उसे छोड़ देना , अपना अस्तित्व ही मिटा देना। संकेत यह है कि अंग्रेज हमारे पीछे लगे हैं। हम गुलाम हैं पर अपनी समस्याओं से बचने के लिए उन तमाम बातों में उलझ रहे हैं, जो अंग्रेजों को सम्बल प्रदान कर रहे हैं। गन्ने का आधार लेकर यह बताने का प्रयास है कि हिन्दुस्तान से कच्चा माल विदेश जाता है और वहां से बनकर आये उत्पादों का हिन्दुस्तान में विक्रय किया जाता है। भारतेन्दु ने इसी चालाकी के प्रति दुःख व्यक्त करते हुए कहा था -

''अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी।

पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी ।।''

'गुलेरी' जी ने हिन्दुस्तानियों के दुखों का उल्लेख करते हुए उसे दूर करने के उपायों को बड़े ही चुटीले अंदाज में अभिव्यक्त किया है। निबंधकार लिखते हैं- ''चोर को क्या मारें, चोर की माँ को ही न मारें। न रहे बांस न बजे बांसुरी।'' (2) निबंध में वर्णित यह प्रसंग संकेतों के विविध आयामों से लबरेज है। संकेत यह है कि अपनी इच्छा शक्ति, कार्यक्षमता व चुनौतियों से लड़ने की प्रवृति का दमन कर अपनी चिंतन प्रक्रिया को अवरुद्ध कर देना। तात्कालीन सन्दर्भ में यह प्रसंग चोट खाने व अंग्रेजों के आतंक से बचने का संकेत भले हो लेकिन आज के दौर में यह मनुष्य की स्वार्थपरता और समस्याओं से मुंह मोड़ने की प्रवृति को दर्शाता है।

'कछुआ धरम' निबंध प्रथम विश्व युद्ध के बाद लिखा गया है। प्रथम विश्वयुद्ध में 5 लाख से अधिक लोग मारे जा चुके थे।'गुलेरी' जी भारतीयों को अपनी चिंतन प्रक्रिया विकसित करने की ओर संकेत दे रहे हैं। उन्हें जागृत करने की बात कर रहे हैं। उनका कहना है कि यह समझना हम भारतीयों की भूल है कि अंग्रेजो का विरोध ना करें तो हम उनके आतंक से बच जाएंगे। प्रथम विश्व युद्ध में अंग्रेजों ने अपने मतलब के लिए भारतीय सेना को युद्ध भूमि में भेजा जिसमें लाखों भारतीय शहीद हो गए। अतः शुतुरमुर्ग बनकर गर्दन रेत में छिपा लेने से हम बाह्य आघात से बच नहीं सकते। जरूरत है सिर बाहर कर शत्रुओं को पहचानने की, उनके आतंक से खुद को बचाने की, और उनका विरोध करने की। नवजागरण के मुख्य रूप से तीन ही कारण थे-

(1) अतीतजीवी होना
(2) तमाम तरह के सुधारो की बात करना और
(3) दमनकारी शासन व्यवस्था का विरोध करते हुए उसकी जगह दूसरी व्यवस्था का प्रतिपादन करना।

इन तमाम बिंदुओं को हम 'कछुआ धरम' निबंध में पाते हैं।

हिंदी नवजागरण तमाम बुराइयों का परिष्कार करते हुए आगे बढ़ा। यहां अस्मिता की तलाश सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्र में थी। नवजागरण काल में तमाम जड़ीभूत शक्तियों को नष्ट कर शिक्षा पर बल देते हुए अच्छी व्यवस्था हेतु पत्रकारिता एवं साहित्य की मदद ली गई थी। 'गुलेरी' जी ने अपने निबंध में इन्हीं जरूरतों की ओर संकेत करते हुए कहा - ''पर आज कोई पढ़ने के लिए विलायत जाने लगे तो हनूज-रोज-ए-अव्वल सुस्त।'' (3) जो देश इतना संपन्न है, वहां के लोग यदि पलायन कर रहे हैं तो इसके पीछे के कारणों पर गंभीरता से विचार करना चाहिए।

'कछुआ धरम' व्यंग्यात्मक और विचारात्मक निबंध है।'गुलेरी' जी ने मनुष्य की भीरु प्रवृति जैसे- सत्य का साथ न देना, अन्याय के विरुद्ध आवाज न उठाना, अवांछित परिस्थितियों में बिना विरोधाभास के समायोजित हो जाना आदि स्थितियों पर व्यंग्य किया है। यहाँ स्पष्ट रूप से यह समझाने का प्रयास किया गया है कि मर्यादा और सीमा में रहकर संयोजित रूप से कार्य करते हुए मानवीय मूल्यों का संरक्षण करना, नैतिकता, समन्वयता और सौहार्द्रता जैसे गुणों को सर्वव्यापी बनाना हमारा कर्तव्य होना चाहिए। कछुआ द्वारा विषम परिस्थिति में अपना सिर छुपा लेना और अपनी पीठ को ढाल बनाकर समस्या से बच निकलने का प्रयास करना वर्तमान सामाजिक, राजनैतिक परिवेश में अत्यंत प्रासंगिक लगता है। 'कछुआ धरम' का भाई 'शुतुरमुर्ग धरम' है जो अपना पीछा किये जाने पर रेत में सिर छिपाकर यह मान लेता है कि कोई उसे नहीं देख रहा है। वर्तमान परिवेश में ऐसे प्रसंग अत्यंत विचारणीय लगते हैं।

सन्दर्भ सूची

(1) गुलेरी साहित्यालोक, सम्पादक - डॉ मनोहर लाल, पृ० 239 , प्रकाशन वर्ष -1984
(2) गुलेरी साहित्यलोक , सम्पादक - डॉ मनोहर लाल ,पृ० -241, प्रकाशन वर्ष -1984
(3) गुलेरी साहित्यलोक, सम्पादक - डॉ मनोहर लाल , पृ०-243 , प्रकाशन वर्ष -1984

भारतीय ज्ञान, कला एवं संस्कृति (नृत्यकला के विशेष संदर्भ में)

डॉ. अर्चना चौधरी
सहायक प्राध्यापक
इतिहास विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

प्राचीन नृत्य कला भारतीय कला के अंतर्गत अतिविशिष्ट कला है, जिसके उदाहरण प्रागैतिहासिक काल के गुफाओं और चट्टानों में उल्लेखित आकृतियों एवं मूर्तियों में निहित है। आनंद की चरम अवस्था का नाम है-नृत्य। भारतीय संस्कृति में नृत्य को धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्ता प्रदान की गई है।

भारतीय कला में विभिन्न परंपराओं का स्वरूप व्यक्त होता है। ललित कला, संगीत कला, नृत्य कला, स्थापत्य कला, मूर्त्ति कला, आदि भारतीय कला के ही विभिन्न आयाम है। प्राचीन नृत्य कला भारतीय कला के अंतर्गत अतिविशिष्ट कला है, जिसके उदाहरण प्रागैतिहासिक काल के गुफाओं और चट्टानों में उल्लेखित आकृतियों एवं मूर्तियों में निहित है। आनंद की चरम अवस्था का नाम है-नृत्य। भारतीय संस्कृति में नृत्य को धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्ता प्रदान की गई है। हमारे देश में इसे सिर्फ मनोरंजन का साधन नहीं समझा जाता है, वरन यह ईश्वर उपासना का भी माध्यम है। यह कला देवताओं से उत्पन्न कला है। भगवान शंकर को जहाँ नटराज की उपाधि दी गई तथा तांडव नृत्य की उत्पत्ति के देवता माने गए है, वहीं माता पार्वती से लास्य नृत्य की उत्पत्ति मानी जाती है। भारतीय नृत्य कला की महान ज्ञान संपदा 'नाटयशास्त्र' ग्रंथ में संकलित है जिसके प्रणेता भरतमुनि है। इसे पंचमदेव भी कहा गया है। इस नाटयवेद की रचना ऋग्वेद से पाठय, सामवेद से गीत, यजुर्वेद से अभिनय तथा अथर्ववेद से रस लेकर की गई है। पात्रों की सज्जा, अभिनय के क्रम, नायक-नायिकाओं के गुण, कथावस्तु, रस आदि का उत्कृष्ट वर्णन किया गया है। नाटय शास्त्र में सौन्दर्य शास्त्र, कविता तथा व्याकरण की भी शिक्षा दी गई है। यह कला शास्त्र का एक अतिमहत्वपूर्ण ग्रंथ है।

हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ों की खुदाई में प्राप्त नर्तकी की काँसे की प्रतिमा, लोथल, काठियावाड़, महाबलीपुरम, आदि प्रागैतिहासिक महत्व के स्थानों से प्राप्त कला सामग्री में नृत्य एवं अभिनय से संबंधित वस्तुओं का समावेश है। इतिहासकार फेटिश (Fetish) ने लिखा है-''भारतीयों को ईसा पूर्व से ही संगीत व नृत्य का ज्ञान था। द्रविड़ों का नृत्य बड़ा ही उच्च कोटि का था। उसमें हमें जीवन की एकरूपता, व्यापकता और आत्मसौन्दर्य का ऐश्वर्य प्राप्त होता है''। उन्हें नृत्य के वैज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक एवं धार्मिक व आध्यात्मिक दृष्टिकोण की महता को वर्णित किया है। नृत्य का स्पष्ट उल्लेख वेदों में स्थान-स्थान पर प्राप्त होता है। वेदों के मूल संहिताओं के समान ही उसके संपूरक ब्राह्मण ग्रंथों, आरण्यकों, उपनिषदों तथा षड्-वेदागों में भी नृत्य का विवरण है। उत्तर वैदिक काल में नृत्य, संगीत द्वारा अपनी आजीविका चलाने वाली अनेक जातियाँ निकाल पड़ी थी। तैतरीय ब्राह्मण में आयोगव भाट, सूत, शैलूष, आदि अनेकों नाम वर्णित है। वैदिक काल में नृत्य सामाजिक जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग था। धार्मिक यज्ञ से उत्सव, पर्वो तक सभी पारखी हुआ करते थे। मनुष्य को सुसंस्कृत बनाने के लिए अन्य शिक्षाओं के साथ नृत्य-संगीत की भी शिक्षा दी जाती थी। जहाँ स्वयं श्री राम संगीत, वाद्य, चित्र आदि कलाओं में निपुण माने जाते थे, वहीं रावण भी नृत्य-गीत के साथ भगवान शिव की पूजा करता था। नृत्य प्रशिक्षण हेतु राजमहलों में नाटयशालायें हुआ करती थी जिसमें प्रख्यात नट-नर्तक अपनी कलाओं का प्रदर्शन किया करते थे। रामायण काल से ही समाज

में नृत्य के प्रति जो रूझान जागृत हुई थी उसका पूर्ण विकास महाभारत काल में हुआ। महाभारत के सूत्रधार श्रीकृष्ण स्वयं नटवर कहलाते है। उन्होंने ब्रज में गोपियों के साथ रास नृत्य कर सम्पूर्ण जड़-चेतन जगत को मोहित कर दिया था। यह रास हल्लीसक के नाम से जाना जाता था। पांडव के अर्जुन ने भी नृत्य की शिक्षा अप्सरा उर्वशी से प्राप्त की थी तथा अज्ञातवास में राज विराट की पुत्री उतरा को यह शिक्षा प्रदान किया था। इस प्रकार महाभारत काल के नृत्य के सर्वागीण विकास के स्पष्ट प्रमाण मिलते है। जैन तथा बौद्ध धर्म के अभ्युदय के काल में भी संगीत-नृत्य की धारा अबाध गति से बहती थी। प्रसिद्ध बौद्ध ग्रंथ ललित विस्तर में भी लगभग 79 कलाओं की सूची है जिसमें नृत्य, संगीत, नाट्य लास्य की भी गणना है। व्यवसायिक नर्तक, नर्तकियों को भी समाज में प्रतिष्ठा थी वैशाली की राजनर्तकी आम्रपाली भी इसी युग की प्रसिद्ध नृत्यांगना थी। जातकों में नृत्य का प्रचुर वर्णन है। दिव्यावदान की एक कथा में रूद्रदामन को वीणा बजाने तथा उसकी स्त्री चन्द्रावति को नृत्य करते हुए दर्शित किया गया है। इसी काल में रूद्रदामन को वीणा बजाने तथा उसकी स्त्री चन्द्रावति को नृत्य करते हुए दर्शित किया गया है। इसी काल में मौर्य साम्राज्य का भी अभ्युदय हुआ। कौटिल्य ने भी अर्थशास्त्र में लिखा है कि ''राजा को चाहिए कि वह गायन, नृत्य, नाटक, वीणा, मृदंग, आदि कलाओं में निपुण लोगों को राज दरबार में नियुक्त करें।'' इस प्रकार हम देखते हैं कि पाँचवी तथा छठी शताब्दी में संगीत तथा नृत्य कला भारतीय जनजीवन में रच बस गया था। इस युग में नटों, नर्तकों, गायिकाओं व अन्य व्यावसायिक कलाकरों का समाज में बहुत मान था तथा इन्हें राजकीय संरक्षण एवं प्रशिक्षण प्राप्त था। यूनानी इतिहासकार एरियन में लिखा है-''किसी भी देश में नृत्य-संगीत का इतना प्रचलन नहीं है जितना भारतवर्ष में है।''

काल परिवर्तन के साथ-साथ नृत्य-संगीत कला में भी परिवर्तन होते गए। राजनीतिक परिर्वतन से सांस्कृतिक तथा सामाजिक परिवर्तन हुए। नृत्य कला में भी काफी उतार चढ़ाव आया। मध्यकाल, विशेष रूप से मुगलकाल कथक नृत्य के लिये आमूल परिवर्तन काल सिद्ध हुआ। ईश्वर उपासना की यह कला अब राजदरबारों की शोभा बन गई तथा मनोरंजन का केन्द्र के रूप में प्रयोग की जाने लगी। भक्ति प्रधान गीत का स्थान श्रृंगारिकता ने लिया। नृत्य की विभिन्न शैलियाँ विकसित होने लगी। मुगल साम्राज्य में इस विधा को काफी प्रश्रय भी मिला। सम्राट वाजिदअली शाह स्वयं नृत्य-कला में निपुण थे। अपने महल में रहसखाना अथवा रसखाना का निर्माण करवाया जहाँ वे स्वयं कृष्ण बनकर महल की स्त्रियों के साथ रासलीला किया करते थे। दक्षिण भारत में भी राजा कृष्णदेव राय की विशेष आज्ञा से नृत्य-मण्डप और नृत्य-शालाएँ तैयार की गई थीं जिसमें नृत्य की विभिन्न मुद्राएँ उत्कीर्णित थी। भरतनाट्यम, कथकलि, कुच्चीपुड़ी ये सभी नृत्य शैलियाँ अपने विकास की ओर उत्तरोत्तर उन्मुख थी।

धीरे-धीरे आधुनिक काल में नृत्य कला दो भागों में विभक्त हो गई- शास्त्रीय तथा लोक नृत्य। नृत्य के घराने प्रचलित होते गए। लखनऊ घराने के प्रसिद्ध नर्त्तक बिन्दादीन महीराज ने अनेक ठुमरियों की रचना की जिससे श्रृंगार एवं भाव अधिक समृद्ध हुआ। उस्तादों और संगीतज्ञों के अथक प्रयासों से वर्तमान समय में नृत्य कला एक समृद्ध तथा प्रतिष्ठित रूप में भारतवर्ष में स्थापित है। वर्त्तमान समय में नृत्य की सभी शैलियों में अनेक प्रयोग हो रहे है तथा युवा-पीढ़ी भी इस विशिष्ट भारतीय संस्कृति एवं विरासत को आत्मसात कर रही है और इसे जन-जन तक लोकप्रिय बना रही है।

बैजू बाबू

डॉ. विनीता सिंह
सहायक प्राध्यापक
अंग्रेजी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

आओ बच्चों तुम्हे मिलाएँ,
बैजू बाबू पटना से।
आए हुए हैं जो आजकल,
दिल्ली में एक घटना से।
बैजू बाबू टीचर हैं,
बच्चों को लाड लड़ाते हैं।
बिना डाँट और मार-पीट के,
बच्चों को समझाते हैं।

वैसे तो इतिहास के हैं,
लेकिन विज्ञान भी पढ़ाते हैं।
सूझ-बुझ और तकनीकों से,
उनका ज्ञान बढ़ाते हैं।
बैजू बाबू रोज नियम से,
स्कूल समय पर जाते हैं।
खूब हँसा कर, लोट-पोट कर,
बच्चों को भा जाते हैं।
अब, आओ बच्चों हम तुमको,
और एक बात बताते हैं।
हालाँकि है अच्छे टीचर,
पर बैजू जी को शब्द नजर नहीं आते हैं।
सोच रहे हो क्या कैसे,
प्रश्न मन में उठते जाते हैं,
तो जाने से पहले हम तुम्हें बताते जाते हैं,
पढ़ने के हैं बहुत तरीके,
कुछ देखें, कुछ सुने सिर्फ,
और कुछ छू के अर्थ बनाते हैं।
हालाँकि हैं भिन्न तरीके,
अर्थ बदल नहीं जाते हैं।
बैजू जी ने छू के सीखा,
अब भी आगे बढ़ते जाते हैं।
खुद सीखा अब और सिखाएं,
इसलिए, दिल्ली आते जाते हैं।

साहित्य, समाज और पर्यावरण

डॉ. नवीन कुमार
सहायक प्राध्यापक
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण का सजीव चित्रण पाठकों को प्रकृति से जुड़ने, उसे समझने और उसकी रक्षा के लिए प्रेरित करता है। जब कविता, कहानी या उपन्यास में पर्यावरण की पीड़ा और उसकी सुंदरता को प्रस्तुत किया जाता है, तब वह संवेदना को जाग्रत कर सकारात्मक कार्यवाही की प्रेरण देता है।

साहित्य और पर्यावरण के मध्य एक गहरा और अभिन्न संबंध है। प्रकृति ने केवल साहित्य की प्ररेणा रही है, बल्कि उसमें मनुष्य के भावों, जीवन संघर्षो और चेतना को भी प्रतिबिंबित किया गया है। वेदों, उपनिषदों, लोक साहित्य और संत साहित्य में प्रकृति के प्रति श्रद्धा, संवेदना और सह-अस्तित्व की भावना मिलती है।

साहित्य केवल समाज का दर्पण नहीं होता, बल्कि वह समाज की चेतना, संस्कारों, संवेदनाओं और मूल्यों का संवाहक होता है। साहित्य मानव जीवन की गहराइयों में उतरकर उसके अनुभवों, आशाओं, संघर्षो और आकांक्षाओं को स्वर देता है। यह न केवल मनुष्य की आंतरिक दुनिया को अभिव्यक्त करता है, बल्कि बाह्य जगत से उसके संबंधो की भी पड़ताल करता है। इसी बाह्य जगत का एक महत्वपूर्ण घटक है- पर्यावरण, जो मानव जीवन के अस्तित्व का मूलाधार है।

पर्यावरण का अर्थ केवल वृक्ष, नदी, पर्वत आकाश या पृथ्वी नहीं है, बल्कि उन सभी जैविक और अजैविक तत्वों का समुच्चय है, जिनसे मानव जीवन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित होता है। यह जल, वायु, भूमि, पशु-पक्षी, वनस्पति, जलवायु और समस्त प्राकृतिक संसाधनों का वह जाल है, जिसके भीतर जीवन अपनी विविधता के साथ संचरित होता है। जब साहित्य और पर्यावरण का समागम होता है, तो एक गहरी अंतः सम्बन्ध की अनुभूति होती है, जो केवल सौंदर्य के धरातल तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह पारिस्थितिक चेतना और जिम्मेदारी को भी उद्भासित करती है।

भारतीय साहित्य की परंपरा में प्रकृति सदैव एक सजीव इकाई के रूप में उपस्थित रही है। वैदिक ऋचाओं से लेकर आधुनिक कविता तक, प्रकृति न केवल सौंदर्य का स्रोत रही है, बल्कि वह सामाजिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोण से भी अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। नदियाँ, पर्वत, वनों के वृक्ष, ऋतुएँ, सूर्य, चंद्रमा-ये सब साहित्य में प्रतीक नहीं, बल्कि पात्र के रूप में स्थान पाते हैं। प्रकृति और साहित्य का यह सह-अस्तित्व भारतीय संस्कृति की आधारशिला रहा है। किन्तु आज का युग केवल विकास और प्रौद्योगिकी की अंधी दौड़ का युग बनता जा रहा है, जहाँ पर्यावरणीय संतुलन को लगातार क्षति पहुँच रही है। जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, वनों की अंधाधुंध कटाई, जैव विविधता का क्षरण, प्रदूषण और प्राकृतिक संसाधनों का दोहन जैसी समस्याएँ मानव अस्तित्व को ही संकट में डाल रही हैं। ऐसे संकटपूर्ण समय में साहित्य की भूमिका पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

आज साहित्य केवल मनोंरजन या सौंदर्याभिव्यक्ति का माध्यम नहीं रह गया है, बल्कि यह जागरूकता, संवेदनशीलता, और परिवर्तन का शस्त्र बन चुका है। साहित्य समाज को न केवल पर्यावरणीय संकटों के प्रति

चेताता है, बल्कि उसे संवेदनशील दृष्टि और उत्तरदायित्व-बोध भी प्रदान करता है। साहित्यिक रचनाएँ, चाहे वह कविता हो, कहानी हो, उपन्यास हो या निबंध-वे सब मिलकर एक ऐसी पारिस्थितिक दृष्टि विकसित करने का कार्य करती हैं, जो मानव और प्रकृति के बीच संतुलित संबंध को स्थापित करने में सहायक होती है।

इसलिए आज आवश्यकता है कि साहित्य को पर्यावरण के परिपेक्ष्य में नए सिरे से देखा जाए। इकोक्रिटिसिज्म जैसी आधुनिक अवधारणाएँ इस दिशा में मार्गदर्शन कर रही हैं। परंतु भारतीय परंपरा में यह दृष्टि बहुत पहले से निहित रही है-जहाँ 'पृथ्वी' को माँ माना गया, 'वृक्ष' को देवता का दर्जा प्राप्त है और 'जल' को जीवन का अमृत समझा गया।

पश्चिम में 20वीं सदी में इकोक्रिटिसिज्म (Ecocriticism) नामक एक आलोचना पद्धति का उदय हुआ, जिसने साहित्य में पर्यावरण के चित्रण को केंद्र में रखकर उसकी व्याख्या की। इस विचारधारा के अनुसार, साहित्य में प्रकृति के साथ मानव संबंध, पर्यावरणीय समस्याएँ, और पारिस्थितिकी संतुलन के तत्वों को विश्लेषित किया जाता है।

भारतीय संदर्भ में यह दृष्टि नई नहीं है। यहाँ परंपरागत रूप से प्रकृति को देवतुल्य स्थान प्राप्त रहा है। वृक्षों, नदियों और पशु-पक्षियों को पूजनीय माना गया है। हिंदी साहित्य में यह चेतना सदियों से विद्यमान रही है। रेणु के उपन्यासों में ग्रामीण प्रकृति की संवेदनशीलता है, अज्ञेय और केदारनाथ सिंह की कविताओं में आधुनिक पारिस्थितिक संकट की गूँज सुनाई देती है।

वर्तमान समय में जब पर्यावरणीय असंतुलन और जलवायु संकट गहराता जा रहा है, तब साहित्य की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। साहित्य न केवल जागरूकता का माध्यम है, बल्कि वह एक संवेदनशील पर्यावरणीय चेतना भी विकसित करता है, जो समाज को प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व की भावना सिखाता है। इस प्रकार, साहित्य और पर्यावरण के बीच का संबंध केवल काव्यात्मक नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक जिम्मेदारी का रूप है, जिसे समझना और संबर्धित करना आज की आवश्यकता है।

भारतीय साहित्य की सबसे विशेष बात यह रही है कि उसमें प्रकृति को केवल दृश्य सौंदर्य का माध्यम नहीं, बल्कि जीवंत चेतना और आध्यात्मिक तत्व के रूप में देखा गया है। प्रकृति को भारतीय संस्कृति में देवत्व का स्थान प्राप्त है, और यही भाव साहित्य में भी गहराई से प्रकट हुआ है।

वेदों में प्रकृति के तत्वों-जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी और अकाश-को देवताओं के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। ऋग्वेद में नदियों, विशेषतः सरस्वती, सिन्धु और यमुना की स्तुति की गई है। यजुर्वेद की अग्नि की महता और अथर्ववेद में वनों, औषधियों और पृथ्वी के संरक्षण की भावना व्यक्त की गई है। ये सभी रचनाएँ इस बात का प्रमाण है कि वैदिक साहित्य में मानव और प्रकृति के सह-अस्तित्व की गहरी समझ थी। उपनिषदों में "वसुधैव कुटुम्बकम्" की अवधारणा केवल मानव समाज तक सीमित नहीं है, बल्कि संपूर्ण सृष्टि को एक कुटुंब (परिवार) के रूप में देखने की प्रेरणा देती है। यह दृष्टिकोण समग्र पर्यावरणीय चेतना का मूल आधार है।

भारतीय लोक साहित्य-जैसे लोकगीत, लोककथाएँ, कहावतें और रीति-रिवाज-में प्रकृति एक जीवंत पात्र के रूप में मौजूद रहती है। बाँसुरी की धुन, पेड़ों की पूजा, बरगद और पीपल के वृक्षों की कथा, नदी से जुड़ी मान्यताएँ-इन सबमें प्रकृति के प्रति श्रद्धा, भय और स्नेह का अद्भुत मिश्रण दिखाई देता है। त्योहारों और परंपराओं के माध्यम से भी पर्यावरण के संरक्षण की भावना निरंतर संप्रेषित होती रहती है। संत कवियों-जैसे कबीर, सूरदास, तुलसीदास-की वाणी में प्रकृति प्रतीकात्मक रूप से प्रयुक्त हुई है। कबीर कहते हैं-"जल में कुंभ,

कुंभ में जल है, बाहर भीतर पानी''। यह पद पर्यावरणीय सह-अस्तित्व, एकात्मकता और ब्रह्मांडीय चेतना का सुंदर उदाहरण है। सूरदास की रचनाओं में वृंदावन, यमुना, पवन और फूल-पत्तियों का चित्रण भक्तिपूर्ण और सौंदर्यात्मक दोनों रूपों में मिलता है। तुलसीदास ने रामचरितमानस में वनवास प्रसंगों में प्राकृतिक परिवेश को गहराई से चित्रित किया है। आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय चेतना एक महत्वपूर्ण प्रवृति के रूप में उभरकर सामने आई हैं। यह चेतना केवल प्रकृति की प्रशंसा तक सीमित नहीं रही, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिक संकटों को उजागर करने का सशक्त माध्यम बनी है।

निष्कर्षः साहित्य और पर्यावरण का संबंध केवल सौंदर्यात्मक या आलंकारिक नहीं है, बल्कि यह एक गंभीर अस्तित्वात्मक संबंध है, जो मनुष्य के जीवन, संस्कृति और चेतना से गहराई से जुड़ा हुआ है। प्रकृति न केवल साहित्य को विषयवस्तु प्रदान करती है, बल्कि वह जीवन का मूलाधार भी है। साहित्य में जब प्रकृति का चित्रण होता है, तो वह केवल दृश्यात्मक अनुभव नहीं होता, बल्कि उसमें जीवन के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण भी प्रकट होता है। वर्तमान समय में जब पर्यावरणीय संकट-जैसे जलवायु परिवर्तन, बनों की कटाई, प्रदूषण, जैव विविधता का क्षरण-तेजी से बढ़ रहे हैं, तब साहित्य की भूमिका केवल मनोरंजन या सौंदर्यबोध तक सीमित नहीं रह जाती। साहित्यकारों की यह सामाजिक और नौतिक जिम्मेदारी बनती है कि वे अपने रचनाओं के माध्यम से न केवल इन संकटों को उजागर करें, बल्कि पाठकों के भीतर एक सजग पर्यावरणीय चेतना भी उत्पन्न करें।

साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण का सजीव चित्रण पाठकों को प्रकृति से जुड़ने, उसे समझने और उसकी रक्षा के लिए प्रेरित करता है। जब कविता, कहानी या उपन्यास में पर्यावरण की पीड़ा और उसकी सुंदरता को प्रस्तुत किया जाता है, तब वह संवेदना को जाग्रत कर सकारात्मक कार्यवाही की प्रेरण देता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि साहित्य और पर्यावरण का अंतः सम्बन्ध जितना गहरा और जीवंत होगा, हमारी धरती उतनी ही सुरक्षित, संतुलित और संवेदनशील बन सकेगी। आने वाली पीढ़ियों के लिए सतत विकास और पर्यावरणीय संतुलन सुनिश्चित करने में साहित्य एक प्रभावी माध्यम बन सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

- फणीश्वरनाथ रेणु-मैला आँचल, राजकमल पेपर बैक्स, 2016
- मुंशी प्रेमचंद-गोदान, विश्व बुक्स, 2008
- महादेवी वर्मा-स्मृति की रेखाएँ, लोकभारती प्रकाशन, 2008
- केदारनाथ सिंह-बाघ, भारतीय ज्ञानपीठ, 1998
- नामवर सिंह-कविता के नये प्रतिमान, राजकमल प्रकाशन, 1968
- कुंवर नारायण-आत्मयजी, भारतीय ज्ञानपीठ, 2024
- डॉ. प्रभाकरण हेब्बार इल्लत, पर्यावरण और समकालीन हिन्दी साहित्य, वाणी प्रकाशन, 2019
- डॉ. प्रभाकरण हेब्बार इल्लत, पर्यावरण और समकालीन हिन्दी साहित्य, वाणी प्रकाशन, 2022
- प्रो. राम, समकालीन भारतीय साहित्य, वाणी प्रकाशन
- डॉ. घनश्याम भारती, साहित्य में पर्यावरण-बिमर्श, जे.टी.एस. पब्लिकेशन 2021

आपदा प्रबंधन में खाद्य प्रबंधन पर एक समग्र अध्ययन

डॉ. कविता राज
सहायक प्राध्यापक
अध्यक्ष
लोक प्रशासन विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

किसी भी आपदा के घटित होने के पश्चात लोगों को अनाज बाँटने मात्र से आपदा से उबारा नहीं जा सकता। देश में व्याप्त भारी भूख और कुपोषण की समस्या को हल करने के लिए एक नए नजरिए की आवश्यकता है। आपदा प्रबंधन में इस बात को शामिल किया जाता है कि भूखे और कुपोषित लोगों को अनाज के अलावा अन्य कई वस्तुओं और सेवाओं की आवश्यकता होती है।

किसी प्रकार की आपदा में प्रषासन को कई समस्याओं का तत्काल सामना करना पडता है, जिसके लिए कई कार्य करने होते हैं, जिनमें पीडितों तक भोजन पहुँचाना एक महत्वपूर्ण कदम है। आपदाओं के कारण लोगों का बहुत कुछ छीन जाता है, उनकी मानसिक स्थिति ठीक नहीं रह जाती है, ऐसे में प्रशासन की दोहरी जिम्मेदारी हो जाती है। एक तरफ, हताहत हुए पीडितों को राहत पहुँचाना तो दूसरी ओर भोजन की सुरक्षा प्रदान करना । आपदा प्रबंधन में खाद्य प्रबंधन इसलिए प्रासंगिक हो जाता है क्योंकि एक बड़ी आपदा के आने के पूर्व प्रशासन को अन्य कदम उठाने के साथ ही यह भी देख लेना चाहिए कि खाद्य और खाद्य भण्डार सुरक्षित हैं, भोजन की सभी वैकल्पिक ब्यवस्था उपलब्ध हैं। ताकि कम-से-कम लोगों को भूखे मरने ना दिया जा सके। खाद्य प्रबंधन एक संवेदनशील विषय हैं। अतः आपदा प्रबंधन में खाद्य प्रबंधन का अध्ययन प्रासांगिक प्रतीत होता है ।

आपदाएँ अनन्त काल से सदा मानव जाति से जुड़ी रही हैं। मनुष्य को पीढ़ी–दर–पीढ़ी इन आपदाओं को झेलना और भोगना पड़ा है, तब भी जीवन यथावत चलता रहा है। इसी क्रम में आपदाओं से निपटने के लिए उसके प्रभावों कम करने के लिए कई उपाय भी समय–समय पर किए जाते रहे हैं। आपदा प्रबंधन में यह आपदा जोखिम न्यूनीकरण कहा जाता है। आपदा के प्रभावों को कम करने के लिए, आपदा से पूर्व की गई तैयारी ही न्यूनीकरण है। इसके लिए संरचनात्मक एवं गैर–संरचनात्मक उपाय शामिल है। '

आपदा प्रबंधन में खाद्य प्रबंधन एक महत्वपूर्ण विषय है। जैसे ही कोई बड़ी आपदा घटित होती है या फिर बाढ़ जैसी आपदा की संभावना होती है तो ना केवल आम आदमी जिन्हें आपदाओं का सामना करना पड़ेगा बल्कि प्रशासन को भी इस बात की चिन्ता हो जाती है, भोजन की व्यवस्था कैसे होगी।

आपदा प्रबंधन में खाद्य प्रबंधन इसलिए प्रासंगिक हो जाता है। क्योंकि एक बड़ी आपदा के आने के पूर्व प्रशासन को अन्य कदम उठाने के साथ हीं यह भी देख लेना चाहिए कि खाद्य और खाद्य भण्डार सुरक्षित हैं, भोजन की सभी वैकल्पिक ब्यवस्था उपलब्ध हैं। ताकि कम–से–कम लोगों को भूखे मरने ना दिया जा सके। खाद्य प्रबंधन एक संवेदनशील विषय हैं।

इसी प्रकार यह भी आवश्यक होता है कि आपदा पीड़ित लोगों को पौष्टिक और स्वच्छ भोजन प्राप्त हो। यदि स्वच्छता का ध्यान नहीं रखा जाएगा तो किसी रोग के फैलने की संभावना हो जाती है। आपदाओं के दौरान लोगों का बहुत कुछ छीन जाता है ऐसे में भोजन की अनुपलब्धता के कारण कई लोग कुपोषण के

शिकार हो जाते हैं। गर्भवती महिलाओं और बच्चों आदि को कुपोषण से बचाने के लिए पौष्टिक आहार की आवश्यकता होती है।

आपदा में खाद्य संवेदनशीलता :

किसी प्रकार की आपदा में प्रशासन को कई समस्याओं का तत्काल सामना करना पडता है , जिसके लिए कई कार्य करने होते हैं, जिनमें पीडितों तक भोजन पहुँचाना एक महत्वपूर्ण कदम है। आपदाओं के कारण लोगों का बहुत कुछ छीन जाता है , उनकी मानसिक स्थिति ठीक नहीं रह जाती है ,ऐसे में प्रशासन की दोहरी जिम्मेदारी हो जाती है। एक तरफ, हताहत हुए पीडितों को राहत पहुँचाना तो दूसरी ओर भोजन की सुरक्षा प्रदान करना ।

आपदाओं के तत्काल बाद और राहत कार्यों के समय संवेदनशील व्यक्तियों और संवेदनशील क्षेत्रों में आवश्यक भोजन की व्यवस्था सुनिश्चित करना आवश्यक होता है। आपदा संवेदनशील व्यक्तियों में बच्चें , महिलायें , रोगी, बुजुर्ग आदि होते हैं। संवेदनशील क्षेत्रों में आवश्यक भोजन की व्यवस्था अनाज बैंक, जल बैंक और बीज बैंक के रूप में स्थापित हो सकती हैं। इनके माध्यम से कमजोर और संवेदनशील व्यक्तियों के लिए उचित गुणवत्ता और उचित मात्रा में भोजन की पूर्ति की जा सकती है। भोजन से संबंधित होते हुए भी अलग–अलग है। मुख्य रूप से खाद्य प्रबंधन द्वारा खाद्य आपदा से बचा सकता है। इसी प्रकार सूखा एक धीमे–धीमे प्रभाव करने वाली आपदा है। इस आपदा के लिए तत्काल अनुक्रिया जैसे खोज व बचाव की आवश्यकता नहीं होती। परन्तु सूखे नल, वर्षा का अभाव, फसल की कमी व आजीविका का नुकसान जैसी समस्याओं को सही ढंग से सुलझाना ज़रूरी होता है।सूखे जैसी आपदा में भी हम लोगों को जीवित रख सकते है।

खाद्य आपदा के कई कारण होते है –

1. सूखा
2. अकाल
3. महंगाई
4. लोगों की क्रय शक्ति में ह्रास
5. उत्पादन के समय कृषि पैदावार के दाम में कमी
6. ब्लैकमार्केटिंग
7. अनियंत्रित जमाखोरी
8. खाद्यान्न के परिवहन व्यवस्था में व्यवधान
9. खाद्यान्नों के उत्पादन को प्रोत्साहित न करना
10. कृषि निवेशों जैसे बीज, खाद, बिजली, कीटनाशक, आदि के मूल्यों में वृद्धि
11. अन्य आपदाओं के कारण उत्पादन में नुकसान या फसलों को क्षति।
12. संक्रमित रोग या फसल में कीड़ा लगना।

वर्ष 1987 के सूखे के बाद भारत सरकार ने कुछ प्रयास किए

1. बेहतर जल प्रबंधन
2. और अधिक क्षेत्र में सक्रिय होना
3. बीज और उर्वरक के लिए बेहतर प्रौद्योगिकी और उसका प्रसार
4. नाबार्ड के माध्यम से आसान शर्तों पर कर्ज
5. सूखा प्रभावित क्षेत्रों में पेट्रोलियम पदार्थों की अतिरिक्त आपूर्ति
6. सब्जियों की खेती को बढ़ावा देने के लिए 1,37,000 सहायक उपकरणों का वितरण
7. रोजगार पैदा करने के कार्यक्रम
8. 54 प्रमुख सिंचाई परियोजना
9. लघु सिंचाई परियोजना जैसे भूमि संरक्षण
10. संपर्क मार्ग बिछाना

11. पेयजल का प्रावधान
12. मवेशियों के लिए चारा
13. मुफ्त सिंचाई
14. छोटे तथा सीमांत क्षेत्र के किसानों तथा 2,30,000 हेक्टेयर में चारा उगाने के लिए आपूर्ति का उपदान

इसी प्रकार सूखा प्रभावित समुदायों के विभिन्न समुदायों के लिए विकास कार्यक्रम : –

1. मरूस्थल विकास कार्यक्रम
2. सूखा संभावित क्षेत्र कार्यक्रम
3. काम के बदले अनाज कार्यक्रम
4. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम
5. ग्रामीण भूमिहीन रोजगार प्रत्याभूति कार्यक्रम
6. समकालीन ग्रामीण विकास कार्यक्रम
7. त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम
8. इंदिरा आवास योजना
9. जवाहर रोजगार योजना
10. रोजगार आश्वासन योजना

यहाँ यह कहना युक्ति संगत होगा कि देश के बाढ़ प्रवण क्षेत्र का 17 प्रतिशत क्षेत्र बिहार में पड़ता है।राज्य के पुनर्गठन के पश्चात् भी 16.03 प्रतिशत बाढ़ की क्षति का 30 प्रतिशत से 40 प्रतिशत क्षति केवल बिहार राज्य में होता है।

बिहार के 38 जिलों में निवास करनेवाली 8.28 करोड़ की आबादी में से 27 जिलों के 6,20 करोड की आबादी बाढ़ प्रवण क्षेत्रों में निवास करती है जो देश की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा है। इनमें गरीबी रेखा के नीचे जीवन बसर करने वाले 52,51,986 परिवारों की 2.63 करोड़ आबादी है जो क्षेत्र की 40 प्रतिशत आबादी है। बिहार में अनुसूचित जाति के लोगों की संख्या 99,82,448 है, जिसमें 28 लाख अनुसूचित जाति के व्यक्ति इसी क्षेत्र में निवास करते हैं। 77,13,000 सीमान्त किसान एवं 81,14,000 कृषक मजदूर भी बाढ़ की प्रवणता से प्रतिवर्ष प्रभावित होते हैं।

- राज्य के 38 जिलों में से 28 जिले बाढ़ प्रवण जिले हैं, जिनमें से 15 जिले अति बाढ़ प्रवण जिलों की श्रेणी में आते हैं।
- सुपौल, सारण, नालंदा, वैशाली, पूर्णियॉ, शिवहर, खगड़िया, सीतामढ़ी, मधुबनी, पश्चिमी चम्पारण, पूर्वी चम्पारण, पटना, सीवान, गोपालगंज, बक्सर, दरभंगा, समस्तीपुर, कटिहार, सहरसा, मुजफ्फरपुर, भागलपुर, अररिया, मधेपुरा, शेखपुरा, किशनगंज, भोजपुर, लखीसराय एवं बेगूसराय बाढ़ प्रवण जिले हैं।
- अति बाढ़ प्रवण 15 जिलों की श्रेणी में सुपौल, मधेपुरा, शिवहर, सहरसा, खगड़िया, सीतामढ़ी, दरभंगा, मुजफ्फरपुर, मधुबनी, समस्तीपुर, वैशाली, कटिहार, पूर्वी चम्पारण, बेगूसराय एवं भागलपुर आते हैं।

आपदा प्रबंधन में खाद्य संग्रहण या भंडारण

भोजन और पोषण के संदर्भ में आपदा की स्थिति में पोषणात्मक भोजन की उपलब्धता महत्त्वपूर्ण होती है। इसलिए सामुदायिक और स्वास्थ्य सेवा कार्यक्रम के साथ–साथ इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि आपदा के समय भोजन का संग्रहण किस प्रकार किया जा रहा है। स्थानीय स्तर पर भोजन की उपलब्धता के सर्वेक्षण करने और उसके संग्रहण, भंडारण और वितरण करने के लिए स्थानीय सरकार को विशेषज्ञों की सहायता और सुझाव लेने चाहिए। भोजन संग्रह करने और उसे आपदा पीड़ितों तक उपलब्धता कराने के लिए विभिन्न अभिकरणों की मदद लेनी चाहिए।

राष्ट्रीय स्तर पर केन्द्र सरकारी घटती–बढ़ती माँग को पूरा करने के उद्देश्य से आवश्यक वस्तुओं का सुरक्षित भंडार रखती है। खाद्य सामग्री की सूची का रखरखाव खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति मंत्रालय के अंतर्गत संचालित भारतीय खाद्य निगम करता है, जिसके भंडार घर समूचे देश में है। खाद्य भंडार सार्वजनिक वितरण प्रणाली की सहायता करते है और मौसम के अनुसार घटने–बढ़ने वाली माँगों तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का

ध्यान रखते है।

आपदा के दौरान भोजन वितरण के लिए सहायता के रूप में खाद्य पदार्थ इकट्ठे किए जाते है। विदेशी सरकार, संयुक्त राष्ट्र जैसी अन्तर्राराष्ट्रीय एजेंसियाँ, गैर–सरकारी संगठन नकद रूप में या सामान के रूप में सहायता देती है। ये संगठन या आपतस्थिति में खाद्य पदार्थो की आपूर्ति करते है या उनसे पहले ही करार कर लिया जाता है कि वे आपदा की स्थिति में खाद्य पदार्थो की आपूर्ति करेंगे।

भारतीय खाद्य निगम जैसी सरकारी एजेंसियॉ बड़ी मात्रा में खाद्य पदार्थो का भंडार सुरक्षित रखती है। स्थानीय प्रशासन पीड़ित व्यक्तियों के बीच भोजन का वितरण करने के लिए सरकार के आदेश से मुख्य रूप से इसी स्त्रोत से भोजन इकठ्ठा करती है।

आपदा प्रबंधन में खाद्यों की आपूर्ति के लिए सरकारी प्रशासन को सम्पूर्ण खाद्य स्थिति पर निगरानी रखनी चाहिए। राहत कार्यो के लिए लाये जाने वाले खाद्य पदार्थो का संयोजन स्थानीय प्रशासन के जिम्में होना चाहिए। खाद्य पदार्थ को लाने उनके रखरखाव और भण्डारण के लिए स्थानीय अधिकारियों को अन्य एजेंसियॉ की भी सहायता लेनी चाहिए।

स्थानीय प्रशासन के पास इस बात की सूचना मौजूद होनी चाहिए कि उनके जिले में या आस–पास के जिलों में खाद्य सामग्रियों की कितनी फैक्ट्रियाँ है उनकी क्षमता कितनी है। उस इलाके में कितने बड़े व्यापारी हैं, जिनके पास रेडिमेड भोजन का भंडारण उपलब्ध हो सकता है। खाद्य सामग्रियों के अंतर्गत ब्रेड, बिस्किट, चूड़ा, गुड़, सत्तु इत्यादि होंगे जिन्हें आपदा पीड़ितों द्वारा तत्काल उपयोग किया जा सके।

इसके अतिरिक्त समुदाय को इस बात के लिए जागरूक किया जाए कि आपदा आने के पूर्व अपने घर के खाद्यान्न भण्डार से अनाज को सुरक्षित स्थान तक पहुँचा दें। गाँव के लोगो द्वारा इस प्रकार की व्यवस्था आपदा पूर्व कर लेनी चाहिए ताकि गाँव के सभी लोग एक स्थान पर अनाज रखें औ उनकी सुरक्षा करें।

खाद्य संग्रहण का महत्त्व

आपदाएँ अचानक घटती है और कई आपदाएँ बिना चेतावनी के घटती है। ऐसी स्थिति में लोगों को जीवन जीने के लिए भोजन और पानी की आपूर्ति सबसे पहले जरूरी होती है।

आवश्यक खाद्य सामग्री तथा दवाईयों के अतिरिक्त प्रभावितों की खोज तथा उन्हें सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाने के लिए अन्य वस्तुओं, अस्थायी, बसेरों, संचार सुविधाओं और ईधन जुटाने की जिम्मेदारी भी विभिन्न सरकारी विभागों को निभानी होती है।

ऐसी अफरातफरी की स्थिति में यह आवश्यक होता है कि इन सामग्रियों की उलब्धता हो और भंडारघर आसपास और सुगम स्थान पर हो। इसलिए खाद्यों का संग्रहण और भंडारों में उसकी उचित रखरखाव खाद्य आपदा की स्थिति में और आपदाओं के दौरान खाद्य सामग्री की जरूरतों को पूरा करता है।

भण्डार घरों का प्रबंधन

जब आपदा आती है तो प्रशासन सर्वप्रथम भोजनः पानी की व्यवस्था करता है। भोजन–पानी द्वारा लोगों का जीवन बच सकता है। भोजन सुरक्षित पहुँचे, और भोजन की उपलब्धता दोनों ही महत्वपूर्ण है। आपदा की स्थितियों में यद्यपि खाद्य पदार्थों का संग्रहण विभिन्न एजेंसियॉ द्वारा हो सकता है तथापि संग्रहित खाद्यों का भंडारण उचित ढ़ंग से किया जाना चाहिए। इसलिए भंडार घरों के प्रबंधन की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है।

आपदा प्रबंधन में अच्छी भंडारण व्यवस्था के तहत् यह भी ध्यान् रखा जाना चाहिए कि वितरण करने वाले लोग खाद्यान्नों को तब तक सुरक्षित रखें जब तक कि यह जरूरतमंदो और आपदा पीड़ितों तक न पहुँचे। मुख्य रूप से भंडार घरों के प्रबंधन में प्रशिक्षक को इन बिन्दुओं पर प्रकाश डालना चाहिए। भारतीय खाद्य निगम और राज्य सरकारों की कुल खाद्यान्न भंडारण क्षमता फिलहाल 438 लाख टन है, जबकि एक जून 2012 को केन्द्रीय पुल में 750.17 लाख टन खाद्यान्न का स्टोक मौजूद होगा। विशेषज्ञों का कहना है कि देश में अभी कुल भंडारण

क्षमता का 76% ही उपयोग हो रहा है, उपर्युक्त योजना के अभाव में 24 प्रतिशत भंडारण क्षमता का उपयोग नहीं हो पा रहा है। खाद्य मंत्रालय ने हाल में यह स्वीकार भी किया है उचित रख–रखाव के अभाव में अनाज खेतों और असुरक्षित भंडार गृहों में बरबाद हो गया।

आपदा प्रबंधन में राहत कार्यो के दौरान खाद्यान्नों का वितरण एक प्रमुख कार्य होता है। इसलिए आपदा के पूर्व स्थानीय परिवहन और संचार अधिसंरचनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए। क्योंकि जब आपदाएँ आती है तो खराब मौसम और आपदा के बाद संचार व्यवस्थाओं में बाधा पड़ने से प्रभावित लोगों तक तुरन्त भोजन नहीं पहुँच पाता है। इसके लिए हेलिकॉप्टर, नाव जैसे सभी साधनों का उपयोग किया जाना चाहिए। कुछ बिन्दुओं पर विशेष जोर देते हुए राहत सामग्री का वितरण किया जाना चाहिए।

(1) साफ स्थानों और पर्याप्त संख्या में बनाए गए गोदामों में राहत सामग्री का भंडारण करना चाहिए।

(2) वितरण की योजना बनानी चाहिए।

(3) पके हुए राशन व सूखे राशन, पशु आहार और मानव आहार अलग–अलग होने चाहिए।

(4) खाद्य पदार्थो से अखाद्य पदार्थों को अलग रखना चाहिए।

(5) मानव राहत सामग्री का वितरण करना चाहिए।

(6) बच्चों, बृद्धों, महिलाओं और अपंगो की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए राहत वितरण के लिए संवेदनशीलता सूचिकाएँ तैयार रखनी चाहिए।

(7) भोजन देने की अनुसूचियों तैयार रखनी चाहिए।

(8) स्वयंसेवको में राहत ड्यूटियों को बाँटना चाहिए।

(9) राहत खाद्य सामग्री के वितरण के बाद रिकॉर्ड भी रखना चाहिए।

भोजन वितरण के तरीके

इसके अंतर्गत अनाज को ढ़ोने की चर्चा की जानी चाहिए। आमतौर पर राहत कार्य करने वाले स्वयं सेवी संस्था पास अपने परिवहन नहीं होते है और उन्हें खाद्यों की आपूर्ति के लिए भाड़े पर वाहन उपलब्ध करना पड़ता है। इसलिए खाद्यों के वितरण के लिए आवश्यक है कि आपदाओं के पूर्व सड़क, रेल, जल और वायु परिवहन व्यवस्था अच्छी हो। प्रत्येक प्रकार की परिवहन व्यवस्था के लिए अलग–अलग ढ़ंग से तैयारी आवश्यक है।

(क) सड़क परिवहन : मार्ग परिवहन के लिए ट्रक सबसे लचीला साधन है। फिर भी अलग–अलग जगहों के लिए अलग–अलग वाहनों का उपयोग करना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि जिन क्षेत्रों में खाद्य आपूर्ति की जानी है, वहाँ –

(1) रास्ते में पड़ने वाले क्षेत्र और मौसम किस प्रकार के है।

(2) ढ़ोने वाले माल की प्रकृति और मात्रा क्या है।

(3) ईंधन, कल पुर्जो और वाहन मरम्मत की सुविधा उपलब्ध हो।

(4) यह भी जाँच करना चाहिए कि खाद्य/राहत सामग्री सही लादे गए है।

(5) माल की आपूर्ति के बाद दस्तखत भी करवा लेना चाहिए।

(ख) रेल परिवहन : क्षेत्रीय भंडार घरों से ढ़ेरो सामग्री रेल मार्ग से पहुँचाई जाती है। पहले यह काम रेलगाड़ी के डिब्बों में माल भरकर किया जाता था। इस तरह टुकड़ों में सामग्री भेजने से काफी देर होती थी। अब आपदा स्थितियों में खाद्य सामग्री जैसी वस्तुएँ विशेष राहत रेलगाड़ियों से इधर–उधर भेजी जाती है जिससे उन्हें पहुँचाने तथा वितरित करने में लगने वाला बहुत सारा समय बच जाता है।

(ग) वायु परिवहन : वायुयान खाद्य सामग्री को ले जाने की सबसे तीव्र और भरोसेमंद परिवहन है। यद्यपि यह एक महँगा साधन है तथापि इसका उपयोग कोई विकल्प न हों तब किया जाना चाहिए। इस प्रकार के परिवहन का आपदा स्थितियों में इस्तेमाल करना एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि जहाँ से अनाज उतारा या चढ़ाया जा रहा है वहाँ सुरक्षा का इंतजाम हो और प्रत्येक स्थान पर सामान रखने की पर्याप्त क्षमता होनी चाहिए।

(घ) जल परिवहन : जिन आपदा क्षेत्रों के आसपास नदियाँ होती है वहाँ सड़क यातायात बाधित होता है और हेलिकॉप्टर के उतरने का भी जगह नहीं होता है। ऐसे में प्रशासन को खाद्यान्नों को ढ़ोने और आपदा पीड़ितों तक पहुँचाने के लिए कुछ बातों का प्रबंधन बाढ़ आदि आने पूर्व कर लेना चाहिए –

1. मौजूदा व्यवस्था और जलमार्गो का उपयोग
2. पर्याप्त क्षमता वाले और पर्याप्त संख्या में माल ढ़ोने वाली नौकाओं की उपलब्धता के बारे में।
3. नाव को लगाने की व्यवस्था 1 माल रखने, उतारने, माल ले जाने और मालों को सुरक्षित स्थान पर रखने की व्यवस्था।
4. ऐसे कार्यो के लिए प्रशिक्षित कर्मिकों को लगाना।
5. इस दौरान आने वाली बाधा और मौसम संबंधी परेशानियों के लिए तैयार रहना।
6. इस काम के लिए लागत और ठेके में दिए जाने की व्यवस्था भी करनी चाहिए।

महत्त्वपूर्ण बातें

(1) राहत सामग्री उन सभी को मिले जिन्हें उसकी जरूरत है।

(2) यह ध्यान रखना चाहिए कि एक ही समुदाय को राहत सामग्री बार–बार तब तक दी जानी चाहिए जब तक उन्हें उसकी जरूरत है।

(3) यह आवश्यक है कि वास्तविक पीड़ितों की पहचान की जाए या फिर वितरणकारी अभिकरण एक–दूसरे से समन्वयन करें।

(4) ऐसी घटनाओं से बचने के लिए पीड़ितों को पहचान पत्र अथवा पर्चियॉ दी जाएँ और कुल वितरण के समन्वय का काम कोई एक व्यक्ति अथवा संस्था करें।

(5) खाद्य सामग्री का सीधा वितरण पीड़ितों के राहत शिविरों में स्थापित अस्थायी रसोईघरों के माध्यम् से किया जाता है।

(6) या फिर विमानों से भी खाद्य सामग्री गिरायी जाती है जहाँ पर तत्काल पहुँचाने की व्यवस्था न हो पाए।

(7) यह भी ध्यान रखना चाहिए कि राहत सामग्री उन लोगों के हाथ न लगे जिन्हें राहत की जरूरत नहीं होती।

खाद्य सुरक्षा

आपदा प्रबंधन के तहत् संतुलित और पोषणात्मक भोजन उपलब्ध कराने में खाद्य सुरक्षा एक प्रमुख मुद्दा है।

खाद्य सुरक्षा का तात्पर्य यह है कि लोगों को पर्याप्त भोजन मिले और इसका मूल्य भी उनकी क्रयशक्ति से बाहर न जाए यानि मंहगाई उनके भोजन के अधिकार का हनन न करें।

खाद्य सुरक्षा के लिए विशेष रूप से कुछ बातें अमल की जानी चाहिए।

1. खाद्य पदार्थों की आपूर्ति में राष्ट्रीय माँग पूरी की जानी चाहिए, जिसमें घरेलू उत्पादन और आयात भी शामिल है।
2. खाद्य पदार्थों की आपूर्ति में होने वाले मौसमी उतार–चढ़ाव को कम–से–कम करना चाहिए और इसकी

कीमत हर मौसम में लगभग एक–सी होनी चाहिए।

3. लोगों की आय इतनी हो जिससे वे खाद्य पदार्थ खरीद सके या फिर सरकार को ऐसे कार्यक्रम बनाने चाहिए, जिससे सबके लिए भोजन उपलब्ध हो सके।
4. सरकार को लघु अवधि राहत कार्य के दौरान प्रभावित क्षेत्रों में सभी लोगों को भोजन उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखना चाहिए।

खाद्य सुरक्षा के लिए सरकार के सिद्धांत

1. मूल्य में स्थिरता रहे
2. खाद्य सहायता दी जाए
3. रोजगार कार्यक्रम चलाए जाने चाहिए
4. आम खाद्य वितरण हो
5. अनुपूरक खाद्य कार्यक्रम चलायें जाएं
6. पशुधन और पशुचारी आबादी के लिए विशेष कार्यक्रम हों।
7. मुफ्त पानी उपलब्ध कराने के लिए कार्यक्रम हो
8. मुफ्त स्वास्थ्य कार्यक्रम का आयोजन हो।
9. सरकार के पास बीजों का भंडारण भी हो ताकि आपदा के तुरन्त बाद उसे रोप दिया जाए।

निष्कर्ष

किसी भी आपदा के घटित होने के पश्चात लोगों को अनाज बाँटने मात्र से आपदा से उबारा नहीं जा सकता। देश में व्याप्त बीमारी, भूख और कुपोषण की समस्या को हल करने के लिए एक नए नजरिए की आवश्यकता है। आपदा प्रबंधन में इस बात को शामिल किया जाता है कि भूखे और कुपोषित लोगों को अनाज के अलावा अन्य कई वस्तुओं और सेवाओं की आवश्यकता होती है। जैसे... तेल मसाले दालें सब्जी खाद्य स्वच्छ पेयजल गुड़ चीनी ईंधन इत्यादि।

भूख और कुपोषण को दूर करने के लिए आपदा प्रबंधन में एक नई सोच की जरूरत प्रतीत होती है मसलन मीड डे मील समन्वित बाल विकास योजना एवं अन्न्पूर्णा योजना के तहत कम से कम आपदा संवेदनशील लोगों को कुपोषित होने से बचाया जा सके। इन योजनाओं को एक नया रूप दिये जाने की आवश्यकता है जिससे भोजन से वंचित लोगों को भोजन उपलब्ध किया जा सके। आपदा से प्रभावित जनसंख्या समूहों में सभी परिवारों के सभी सदस्यों को बुनियादी खाद्य या भोजन दिया जाता है। खास कमियों को पूरा करने के लिए पोषण की दृष्टि से, असहाय दुर्बल व्यक्तियों को अतिरिक्त भोजन दिया जाता है। इस प्रकार का भोजन सामान्यतया पोषण पुनर्वास के लिए प्रारंभ किया जाता है। विशेष गहन भोजन, गंभीर रूप से कुपोषित व्यक्तियों, सामान्यतया बच्चों के लिए डाक्टरी चिकित्सा की देखरेख में दिया जाता है। आपदा से प्रभावित और वहॉ काम करने वाले कार्यकर्ताओं के लिए भोजन की व्यवस्था करने के अलावा फसलों को हुए नुकसान का आकलन करते हुए भोजन संग्रहण और वितरण की व्यवस्था आपदा प्रबंधन है।एक अच्छे खाद्य आपदा प्रबंधन द्वारा अन्न की सुरक्षा भी की जा सकती है। क्योंकि प्रत्येक बड़े सूखे के कारण खाद्यान्न उत्पादन में होने वाली कमी के कारण अर्थव्यवस्था और अन्न की सुरक्षा अत्यधिक पिछड़ जाती है। किसानों के लिए कई विकल्पों का प्रावधान अनिवार्य हो जाता है।

इसमें निम्नलिखित शामिल हैं

1 बीमा फसल

2 वैकल्पिक फसल तकनीक

3 मिश्रित /विभिन्न प्रकार की खेती

4 आजीविका में विभिन्नता, ऐसे कार्यों से, जो खेती पर आश्रित न हो।

5 खेती के अलावा अन्य क्षेत्रों में नए कार्य अवसरों का निर्माण इस प्रकार आपदा प्रबंधन में खाद्य प्रबंधन का विशेष महत्व है ।

संदर्भ

- सिन्हा, पी 0 आर0 एन और इंदु बाला , श्रम एवं समाज कल्याण, भारती भवन ,पृव 328–339
- प्रकाश, इंदु, 1994, 'डिजास्टर मैनेजमेंट (Disaster Management), राष्ट्र प्रहरी प्रकाशन, गाजियाबाद (यू०पी०)
- सचदेव,डा0 डी0 आर 0, भारत में समाज कल्याण प्रशासन, किताब महल।
- सिंह, सविन्द्र, 2016, आपदा प्रबंधन, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।
- CDM –02 ईकाई–04, आपदा प्रबंधन : विधियाँ और तकनीक, इग्नु, मैदानगढ़ी, नई दिल्ली।
- मिश्र, गिरीश के० ,और जि० सी 0 माथुर (संपादन),१९९३,नेचुरल डिजास्टर रिडक्शन,रिलायंस पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
- Disaster Management Act ,2005
- IGNOU **प्रशिक्षण मैनुअल** पुस्तिका 4ए, आपदा पुनरुत्थान व भविष्य का मार्गचित्र
- मानव एवं आर्थिक भूगोल NCERT ,1978

श्रृंगार के रससिद्ध कवि सूरदास

डॉ. संजय कुमार
सहायक प्राध्यापक
मनोविज्ञान विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

सूर ने वियोग की हर अंतर्दशा का सहजता से वर्णन किया है और इसके त्रासद अनुभवों के चित्रण में भी पूरी तरह सफल रहे हैं। वियोग के संदर्भ में उन्होंने अतीत के जिन स्मृति-चित्रों को उरेहा है, वे आज भी धुंधले नहीं पड़े हैं।

मथुरा-आगरा मार्ग पर स्थित रूनकता गांव में 1478 में जन्मे सूरदास को जन्मांध माना गया है। एक ऐसे व्यक्ति का जिसने अपनी आंखों से कभी दुनिया न देखी हो,श्रृंगार का रससिद्ध कवि होना अकल्पनीय है। सूरदास के गुरु वल्लभाचार्य ने उन्हें पुष्टिमार्ग में दीक्षित किया और कृष्णलीला के पद गाने की प्रेरणा दी। इसी कृष्ण भक्ति ने उन्हें श्रृंगार का अद्वितीय कवि बना दिया। राधा-कृष्ण के रूप सौंदर्य का जैसा सजीव चित्रण इस नेत्रहीन कवि ने किया है, वैसा नेत्र वाले कवि भी नहीं कर पाए। कदाचित इसीलिए हिंदी साहित्य के कई विद्वानों ने सूरदास के जन्मांध होने की बात नहीं मानी है।

सूर ने वियोग की हर अंतर्दशा का सहजता से वर्णन किया है और इसके त्रासद अनुभवों के चित्रण में भी पूरी तरह सफल रहे हैं। वियोग के संदर्भ में उन्होंने अतीत के जिन स्मृति-चित्रों को उरेहा है, वे आज भी धुंधले नहीं पड़े हैं। उनके विरह वर्णन में मानव सुलभ सौंदर्य और प्रेम की भावना का जैसा मार्मिक चित्रण हुआ है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हस्तलिखित पुस्तकों की जो विवरणी उपलब्ध है, उसमें सूरदास के सोलह ग्रंथों का उल्लेख है। इनमें से पाँच- सूरसागर, सूरसारावली, साहित्य-लहरी, नल-दमयंती, ब्याहलो -उनकी प्रमुख कृतियां है। सूरसागर के ही 400 पदों को आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने सूरसागर का सबसे मर्मस्पर्शी और वाग्वैदग्ध्य पूर्ण अंश मानते हुए भ्रमरगीत सार के रूप में संग्रहित किया है।

संयोग की तरह वियोग का वर्णन भी सूरदास ने भावपूर्ण ढंग से किया है। कृष्ण के गोकुल छोड़कर मथुरा जाने से नंद एवं यशोदा तो दुखी हैं ही, ब्रज की युवतियां भी विरह वेदना से व्याकुल हैं। श्रीकृष्ण के रूप माधुर्य के रस में पगी हुई ये गोपियां वन-वन ढूंढ कर कहती हैं-

एक वन ढूंढ सकल वन ढूंढौ, कतहूं न श्याम लहौं।

गोपियां प्रेम और भक्ति की प्रतीक हैं और कृष्ण भक्ति के अतिरिक्त उनके मन और हृदय में दूसरी कोई बात है ही नहीं। इस भक्ति के सामने न ज्ञान टिकता है और न योग। वह प्रेम और भक्ति की हर परीक्षा में खरी उतरती हैं और अपनी एकनिष्ठा से लेशमात्र भी नहीं डिगतीं,

उर में माखन चोर गड़े।
अब कैसे हूँ निकसति नाहीं तिरछे ह्वै जु अड़े।।

वे कृष्ण की याद में क्षण-क्षण टूटती हैं, परंतु अपनी प्रतिष्ठा दांव पर लगाकर कृष्ण से मिलने मथुरा नहीं जातीं। वे प्रेम की सात्विकता को ग्रहण कर प्रेम के उस मार्ग पर अग्रसर हैं, जो संदेह से परे है। यह प्रेम मनोरंजन या वासना का पर्याय नहीं है और न ही यहाँ प्रेमी के स्खलन अथवा उसके पराभव की कोई संभावना है। यही सूर की

मानिनि नारी का रूप है। तत्कालीन सामंती व्यवस्था में नारी अस्मिता पर मंडराते खतरे से सूर परीचित थे और उन्होंने इस खतरे के बीच से नारी सम्मान को उभार कर उसे एक उँचे आसन पर प्रतिस्थापित किया। वे कहती हैं :

अँखियाँ हरि दर्शन की भूखी।
कैसे रहैं रूपरसराची ये बतियाँ सुनि रूखी।।

वृन्दावन के जिस स्वच्छन्द और प्राकृतिक वातावरण में कृष्ण और गोपियों का प्रेम प्रस्फुटित हुआ उसकी आभा और उत्कर्ष की सच्ची झलक वियोग में ही दिखाई देती है। वस्तुतः वियोग में प्रेम का प्रवाह अधिक तीव्र और उत्कट हो जाता है। परन्तु सूर का वियोग वर्णन केवल शरीर की कृशता या विरह ज्वर की माप-तौल तक ही सीमित नहीं है, वरन उसमें प्रेम-वृत्तियों के अन्नत स्रोत फूटते रहते हैं, जिसका रसास्वादन सहृदय और भावुक जन आनन्दमग्न हो कर करते हैं। इसीलिए उनके पदों में जैसा प्रेम अभिव्यक्त हुआ है, वैसा उनसे पहले के या बाद के किसी कवि में दिखाई नहीं देता -

कहाँ लगि मानिए अपनी चूक?
बिन गोपाल, ऊधो, मेरी छाती ह्वै न गई द्वै टूक।।

सूर के विरह वर्णन में घटनाएं विविध नहीं, बल्कि एकांगी हैं। परंतु वचन भंगिमा में विविधता के कारण यह एकांगी वर्णन भी वैविध्यपूर्ण बन गया है। कृष्ण का वियोग गोपियों के लिए असह्य है और इस वियोग में प्रकृति भी उनका साथ दे रही है। मनुष्य को लगता है, कि प्रकृति उसके सुख-दुख में साथ देती है। उसके साथ सुख में हंसती और दुख में रोती है। दुख की घड़ी में रात में काले मेघ के बीच बिजली का चमकना गोपियों को कैसा लगता है इसका बड़ा ही अनूठा चित्रण सूर ने किया है :

पिया बिनु साँपिन कारी रात।
कबहुँ जामिनी होति जुन्हैया डसि उलटी ह्वै जात।।

सूर के विरह वर्णन के व्यापक चित्रण में जड़ और चेतन सभी एक ही धरातल पर आ कर खड़े हो गए हैं। कृष्ण के विरह में केवल गोपियां ही नहीं बल्कि पशु-पक्षी, लोनी-लता, करील-कुंज आदि भी दग्ध हो रहे हैं। यहां तक कि यमुना नदी भी गोपियों को कृष्ण के वियोग ज्वर से काली पड़ी हुई जान पड़ती है-

देखियत कालिंदी अति कारी।
कहियो, पथिक जाय हरि सों ज्यों भई विरह-जुर-जारी।

सूर के काव्य में भावनात्मकता एवं कलात्मकता का जबरदस्त मेल है। उसमें जयदेव एवं विद्यापति की गीतात्मकता भी समन्वित रूप में उपस्थित है। उन्होंने हर पद में सुर और लय का ध्यान रखा है। संगीत की सभी राग-रागिनीयां उनके पदों में मिल जाती हैं। उन्होंने नौ रसों में से सबसे महत्वपूर्ण तथा रसराज कहे जाने वाले श्रृंगार को यदि गरिमा दी है, तो अलंकारों को भी सौंदर्य की एक नई अर्थवत्ता प्रदान की है। उनके अलंकार काव्य को एक नई ऊंचाई पर ले जाते हैं :

निरखत अंक स्यामसुंदर के बार-बार लावति छाती।
लोचन-जल कागद-मसि मिलि कै ह्वै गई स्याम स्याम की पाती।।

जड़-चेतन सभी पदार्थों में सहृदयता का आरोप सूर के विरह की जीवंतता का परिचायक है। उन्होंने विप्रलंभ श्रृंगार को उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों से रससिक्त कर दिया है और उपमानों से नए अर्थ व्यंजित किए हैं। इसीलिए सूर प्रेम को एक नए धरातल पर ले जाने में सफल रहे हैं। वे श्रृंगार के श्रेष्ठ कवि हैं।

POPULATION AND DEVELOPMENT WITH REFERENCE TO INDIA AND BIHAR

Dr. Mrinalini
Asst. Professor
P.G. Dept. of Economics
A.N. College, Patna

The most shocking part is that the word, "population control" has become untouchable in our country and state although it should have been at the top of our all agendas. There is, therefore, urgent need for manpower planning in underdeveloped countries like India and a least developed state like Bihar so that the standard of living of our people increases reasonably.

The consequences of population growth on economic development have attracted the attention of economists ever since Adam Smith wrote his Wealth of Nations. Adam Smith wrote, "The annual labour of every nation is the funds which originally supply it with all the necessaries and conveniences of life". It was only Malthus and Ricardo who raised an alarm about the effects of population growth on the economy.

Population growth adversely affects their economic development because the faster population growth makes the choice more scarce between higher consumption now and the investment needed to bring higher consumption in the future. Economic development virtually depends upon investment. The adverse impact of explosive population situation as prevailing in India and Bihar on economic development is elaborated below:

Population and Per Capita Income : The effect of population growth on per capita income is unfavourable. The growth of population tends to retard the per capita income in three ways :

(I) It increases the pressure of population on land;

(ii) It leads to a rise in cost of consumption goods because of the scarcity of the factors to increase their supplies; and

(iii) It leads to a decline in the accumulation of capital because with increase in family members, expenses increase.

These adverse effects of population growth on per capita income operate more severely if the percentage of children in the total population is high, as is actually the case in all the Developing Countries of the world.

The per capita income for Bihar has increased from Rs. 21,750 in 2011-12 to Rs. 30,617 in 2018-19. Bihar has the lowest per capita income among the states in India and it was only 33.1 per cent of the national average, Rs. 92,565 in 2018-19. The nominal per capita income in the state is expected to be Rs. 59,637 with an increase of

13.9 per cent over the previous year. After adjusting for increase in prices, the real per capita income of the State is estimated to grow by 9.1 per cent in 2022-23 to reach Rs. 35,119. This has been mainly due to very high population burden in Bihar as compared to India. The burden of population can best be measured through density of population which is 1,106 in Bihar against only 382 in India. The ratio of density of population in Bihar to India comes to 34.5 percent which is quite similar to the ratio of per capita income of Bihar to that of India (33.1%). Obviously there appears to be inverse relationship between population growth and economic development.

Likewise, our India is also lagging behind many countries of the word mainly on account of its heavy population pressure. This is substantiated by the data thrown through the following table:

Countries by Income & Density

Sl. No.	Country	Density of Population	Income : US$
1.	India	412	2,010
2.	China	143	9,771
3.	France	118	50,152
4.	USA	35	62,795

Source: World Bank

Population and Standard of Living : Some one of the important determinants of the standard of living is the per capita income, the factors affecting per capita income in relation to population growth equally apply to the standard of living. A rapidly increasing population leads to an increased demand for food products, clothes, houses, etc. But their supplies cannot be increased in the short run due to the lack of factors, like raw materials, skilled labour, capital, etc. Consequently, their costs and prices rise which raise the cost of living of the masses.

Hirschman is, however, of the view that "population pressure on living standards will lead to counter-pressure, i.e., to activity, designed to maintain or restore the traditional standard of living of the community" which "causes an increase in its ability to control its environment and to organise itself for development".

Colin Clark also holds similar views when he writes that population growth "brings economic hardship to communities living by traditional methods, but it is the only force powerful enough to make such communities change their methods, and in the long run transforms them into much more advanced and productive societies".

Thus the consequence of population growth is to lower the standard of living.

Population and Agricultural Development : In Developing Countries people mostly live in rural areas. Agriculture is their main occupation. So with population

growth the land-man ratio is distributed. Pressure of population on land increases because the supply of land is inelastic. It adds to disguised unemployment and reduces per capita productivity further. As the number of landless workers increases, their wages fall. Thus low per capita productivity reduces the propensity to save and invest. As a result, the use of improved techniques and other improvements on land are not possible. Capital formation in agriculture suffers and the economy is bogged down to the subsistence level.

The problem of feeding the additional population becomes serious due to acute shortage of food products. These have to be imported which accentuate the balance of payments difficulties. Thus the growth of population retards agricultural development and creates a number of other problems.

Population and Employment : A rapidly increasing population plunges the economy into mass unemployment and underemployment. As population increases the proportion of workers to total population rises. But in the absence of complementary resources, it is not possible to expand jobs. The result is that with the increase in labour force, unemployment and underemployment increase. A rapidly increasing population reduces incomes, savings and investment. Thus capital formation is retarded and job opportunities are reduced, thereby increasing unemployment. Moreover, as the labour force increases in relation to land, capital and other resources, complementary factors available per worker decline, and as a result unemployment and underemployment increase. Developing Countries have a backlog of unemployment which keeps on growing with a rapidly increasing population. This tends to raise the level of unemployment manifold as compared with the actual increase in labour force.

Population and Social Infrastructure : Rapidly growing population necessitates large investments in social infrastructure and diverts resources from directly productive assets. Due to scarcity of resources, it is not possible to provide educational, health, medical, transport and housing facilities to the entire population. There is over-crowding everywhere. As a result, the quality of these services goes down. "Larger numbers mitigate against an improvement in the quality of the population as productive agents.

The rapid increase in school-age population and the expanding number of labour force entrants put ever-greater pressure on educational and training facilities and retard improvement in the quality of education. Similarly, too dense a population or a rapid rate of increase of population aggravates the problem of improving the health of population". All this entails colossal investment.

Population and Labour Force : The labour force in an economy is the ratio of working population to total population. Assuming 50 years as the average life-

expectancy in an underdeveloped country, the labour force is in effect the number of people in the age-group of 15-50 years. During the demographic transitional phase, the birth rate is high and the death rate is on the decline. The result is that a larger percentage of the total population is in the lower age-group of 1-15 years, and hence a smaller percentage comprises the labour force.

Population and Capital Formation : Population growth retards capital formation. As population increases, per capita available income declines. People are required to feed more children with the same income. It means more expenditure on consumption and a further fall in the already low savings and consequently in the level of investment.

Population and Environment : Rapid population growth leads to environmental damage. Scarcity of land due to rapidly increasing population pushes large number of people to ecologically sensitive areas such as hillsides and tropical forests. It leads to overgrazing and cutting of forests for cultivation leading to severe environmental damage. Moreover, the pressures of rapid growth of population force people to obtain more food for themselves and their livestock. As a result, they over cultivate the semi-arid areas. This leads to desertification over the long run when land stops yielding anything. This results in severe air, water and noise pollution in cities and towns. Besides, rapid population growth leads to the migration of large numbers to urban areas with industrialization.

Not only this, thousands of our well-off and worthy citizens have been emigrating to developed countries in a planned and regular way over the last many decades. They are giving up Indian citizenship and taking up foreign ones. Their thinking is that India may not be a good place to live even if it becomes a developed nation. They foresee that the problems of pollution, congestion, etc. are very difficult to be addressed in remote future also.

Thus, the consequences of a rapidly increasing population are to retard all development effort in an underdeveloped country unless accompanied by high rates of capital accumulation, and technological progress. But these counteracting factors are not available and the result is that population explosion leads to declining agricultural productivity, low per capital income, low living standards, mass unemployment, and low rate of capital formation. The most shocking part is that the word, "population control" has become untouchable in our country and state although it should have been at the top of our all agendas. There is, therefore, urgent need for manpower planning in underdeveloped countries like India and a least developed state like Bihar so that the standard of living of our people increases reasonably.

REFERENCES

1. Economic Survey (2020-21), Govt. of India, New Delhi.

2. Parikh, Ramalal, Population Development and Panchayati Raj, Report, Orientation Programme for West Bengal Legislators on Population and Development, August, 2022, New Delhi, P. 44.
3. Pethe, Vasant P. Population Policy and Compulsion in Family Planning Continental Prakashan, Poona, 2023.
4. Planning Commission, Tenth Five Year Plan, Vol. - II Government of India, New Delhi.
5. Ruddar Datt, Outsourcing, Nationalism and Globalization, Mainstream, May 8, 2004.
6. Shandilya, Tapan Kumar (1995), Population Problem and Development, Deep & Deep Publications, New Delhi.
7. Unni, Jeemol and Rani, Uma (2003), "Changing Structure of Workforce in Unorganised Manufacturing", the Indian Journal of Labour Economics, Vol. 46, No. 4.
8. Vohra, B.B., Population and Environment, Report, Orientation Programme for West Bengal Legislatures on Population and Development, New Delhi, August 8-11, 2019, P. 40.
9. World Bank (2022), World Development Report

SOLAR CELLS : Powering India's SPACE DREAMS

Dr. Prashant Bhaskar
Assistant Professor
Physics
A.N. College, Patna

The operation of solar cells is a beautiful interplay of quantum mechanics, semiconductor physics, and materials science. TJSC represent a pinnacle of photovoltaic engineering, using carefully designed semiconductor layers to extract the maximum possible energy from sunlight.

Solar energy is an abundant and sustainable energy source, increasingly harnessed for both terrestrial and extraterrestrial applications. The Indian Space Research Organization (ISRO) relies heavily on solar cells to power its satellites and deep-space probes. But how do these devices convert sunlight into usable electrical energy? Let's delve into the physics underlying solar cell operation, in brief.

Solar cells, commonly known as photovoltaic (PV) cells, are semiconductor devices that exploit the photovoltaic effect to convert incident solar radiation into electricity. Most commercial solar cells are fabricated from crystalline silicon, a group IV element with a bandgap of ca. 1.1 eV, which is well-suited to the solar spectrum. A typical silicon solar cell consists of a p-n junction formed by doping one side of a silicon wafer with phosphorus (n-type) and the other with boron (p-type). This creates an internal electric field at the junction, essential for charge separation. The operations of energy conversion within a solar cell broadly involves the following steps:

Photon Absorption and Electron-Hole Pair Generation: When photons with energy ($h\nu \geq E_g$)(where E_g is the bandgap energy, h is the Planck's constant and v is the frequency of light) strike the silicon, they excite electrons from the valence band to the conduction band, creating electron-hole pairs.

Charge Separation via Built-in Electric Field: The internal electric field at the p-n junction drives the photogenerated electrons toward the n-type side and holes toward the p-type side, preventing recombination and facilitating charge separation.

Current Collection: Metal contacts on the top (front) and bottom (back) of the cell collect the electrons and holes, allowing them to flow through an external circuit, thus generating an electric current.

Output Characteristics: The output current (I) of a solar cell are described by the diode equation (in simple words though it can get complicated): I=I_ph-I_0 (e^(qV/kT)-1), where I_ph is the photo-generated current, I_0 is the dark saturation current, q is the elementary charge, V is the terminal voltage, k is Boltzmann's constant, and T is the absolute temperature.

The theoretical maximum efficiency of a single-junction silicon solar cell is described by the Shockley–Queisser limit, which is about 33%. In practice, commercial silicon cells achieve only 15–22% efficiency due to several loss mechanisms, described below:

Thermalization Losses: Photons with energy greater than the bandgap lose excess energy as heat.

Transmission Losses: Photons with energy less than the bandgap are not absorbed.

Recombination Losses: Some electron-hole pairs recombine before contributing to the current.

Recent research explores multi-junction cells (stacking materials with different bandgaps), perovskite solar cells, and thin-film technologies to overcome the efficiency limits of traditional silicon cells. These approaches aim to capture a broader range of the solar spectrum and reduce recombination losses.

ISRO's satellites, such as Insat, CartoSat, Spadex, Mars Orbiter Mission (Mangalyaan) and Chandrayaan, utilize large arrays of high-efficiency triple junction solar cells (TJSCs), often with radiation-hardened designs and anti-reflective coatings to maximize power output in the harsh space environment. The reliability, low maintenance, and high power-to-weight ratio of solar cells make them indispensable for space missions.

TJSCs feature three subcells stacked with maximum lattice-matching in order to reduce the defect densities at the heterojunctions. In a typical space-grade TJSC, the top subcell is made-up of InGaP (Indium Gallium Phosphide), with a bandgap of ca. 1.85-2.0 eV, the middle subcell is made of GaAs (Gallium Arsenide), with a bandgap of ca. 1.4 eV and the bottom subcell, is a Ge (Germanium) substrate, with a bandgap of ca. 0.67 eV. The top subcell absorbs photons with energies lying in the blue/UV range, the middle subcell absorbs green/yellow light and the bottom subcell harnesses the red/infrared light, ensuring a wider absorption of the solar spectrum in comparison to the terrestrial counterpart. It is rather surprising to know that a total of 16 layers of materials form a typical TJSC including the layers like back-surface field (BSF), window layers, tunnel diodes, and anti-reflective coating (ARC).

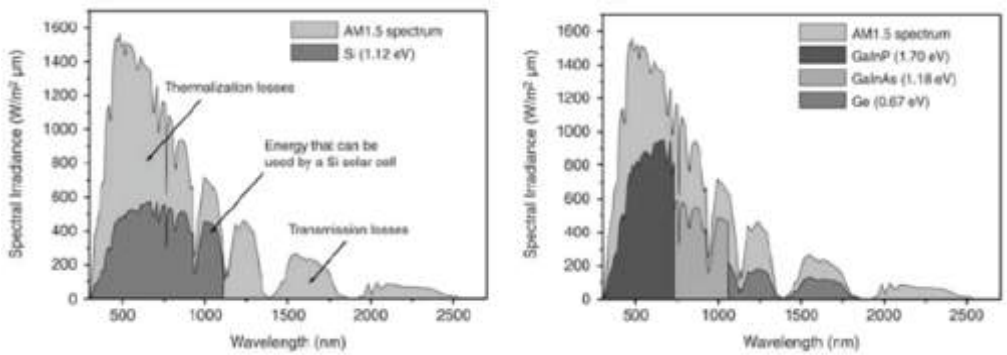

The gray areas in both the figures denote the spectral irradiance, total energy per unit area for various wavelengths of photons coming from the Sun. The shaded region in red in the left figure denotes the portion of solar spectrum being converted to electricity by a silicon based solar cell in comparison to the triple junction solar cell in the right. The colored shaded regions illustrate the energy conversion by the three subcells of the TJSC. (Source: Natalya et al. High-efficiency multi-junction solar cells: Current status and future potential, 2007, University of Ottawa)

The operation of solar cells is a beautiful interplay of quantum mechanics, semiconductor physics, and materials science. TJSC represent a pinnacle of photovoltaic engineering, using carefully designed semiconductor layers to extract the maximum possible energy from sunlight. Their structure, materials, and interconnections are optimized for efficiency at ISRO, making them indispensable in demanding applications like space exploration. As research advances, we can expect even more efficient and robust solar technologies to power both our homes and our journeys into deep space.

भारतीय संस्कृति में प्रकृति पूजा

डॉ. मधु मंजरी
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

प्रकृति के साथ हमारा केवल भौतिक साहचर्य और सहयोग का संबंध नहीं है, हमारी संस्कृति में उसके प्रति भावनात्मक लगाव विकसित किया गया है। अतः प्रकृति अपने विभिन्न अंशों के साथ सर्वथा मानवेतर नहीं रह जाती, वह हमारी आत्मीय बनकर अपने साहचर्य सहयोग और मैत्री से हमारे जीवन को मुद मंगलमय बनाती है।

आज कंक्रीट के जंगलों में रहने वाले हर लोग अपनी सुख सुविधा के कृत्रिम उपकरणों के सहवर्ती कुप्रभाव से स्वस्थ जीवन यापन के लिए पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को दिनों-दिन विकट बनाते जा रहे हैं। ऐसे में प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण आवश्यक है, धरती पर उसके अस्तित्व के अनुपात का कम होते जाना हमारे अस्तित्व पर संकट भी है। इस दृष्टि से भारतीय संस्कृति में निहित 'प्रकृति के प्रति पूजा भाव' का औचित्य स्वतः सिद्ध है ।

मानव सभ्यता का विकास प्रकृति की छत्रछाया में ही हुआ है। आदिकाल में प्राकृतिक आपदाओं से संत्रस्त मानव समुदाय ने आत्मरक्षा के लिए प्रकृति के सहारे ही, लेकिन उससे भिन्न संसाधनों का निर्माण आरंभ किया। उसकी सभ्यता का इतिहास चाकू और चक्के से लेकर आज की वैज्ञानिक उपलब्धियों का इतिहास भी है। इसे प्रकृति पर मानव के विजय अभियान के रूप में भी देखा जाता है, लेकिन विज्ञान वास्तव में प्रकृति के रहस्यों को समझने का और उसे मानवोपयोगी बनाने का प्रयास है। इसी क्रम में आज यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि मानव अस्तित्व के लिए प्रकृति का अस्तित्व भी अनिवार्य है। प्रकृति के विकल्प के रूप में सुख सुविधा के कृत्रिम साधनों पर अत्यधिक निर्भर होना आत्मघाती कदम है। सभ्यता के आरंभिक काल के समान आज मनुष्य प्रकृति पर निर्भर नहीं है, लेकिन मनुष्येतर प्रकृति के साथ आज भी उसका संबंध अटूट है। इसे और घनिष्ठ बनाना आज आवश्यक प्रतीत हो रहा है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति के साहचर्य और उस से सहयोग की प्रवृति को जिसे श्रद्धाभाव से मंडित किया गया है, उसका महत्त्व आज पर्यावरण प्रदूषण से उत्पन्न जीवन रक्षा के संकट की परिस्थिति में बढ़ गया है ।

प्रकृति की अनुकूलता में ही भारतीय संस्कृति का विकास हुआ है। हमारे प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद में प्राकृतिक शक्तियों के प्रतीक रूप में विभिन्न देवताओं - सूर्य, अग्नि, इंद्र, वरुण एवं मारुति की स्तुति की गई है। इनमें मानसून के देश भारत में बादल और वर्षा के देवता इंद्र को विशेष महत्त्व मिलना स्वाभाविक है। वृत्तानुसार वध या सुर-असुर संग्राम में इंद्र की अग्रणी भूमिका से लगता है कि वह कोई वीर नायक थे। इससे अलग उषा (उषस) की स्तुति एक नियमित प्राकृतिक परिघटना की वंदना है, जो तमस पर ज्योति की जय में आस्था का शक्ति-संचार करती है। अग्नि और सूर्य दूसरी सभ्यताओं में भी उपास्य देवता बने हैं। वेदों से अनभिज्ञ भारतीय लोकमानस में भी

सूर्य देवता के रूप में प्रतिष्ठित रहे हैं। नित्यप्रातः सूर्य को जल के अर्घ्यदान की और चैत्र तथा कार्तिक में सूर्य षष्ठी व्रत (छठ) की लोक परंपरा भी संभवतः बहुत पुरानी है ।

भारतीय मान्यता है कि प्रकृति के पंच तत्वों से मानव शरीर की रचना हुई है,

"क्षिति जल पावक गगन समीरा । पंच रचित अति अधम सरीर ।।"

भौतिक जगत के रूप, रस, गंध, शब्द और स्पर्श की अनुभूति में भी इन्हीं तत्वों के कारण मनुष्य सक्षम होता है। इस प्रकार प्रकृति हमारे जीवन का आधार है और उसके प्रति पूजा भाव वांछनीय है। 'यज्ञ प्रधान' वैदिक युग के बाद इस जम्बू द्वीप के भारत खंड के विभिन्न क्षेत्रों की लोक जीवन की मान्यताओं, विविधता को एक सूत्र में पिरोने का काम भारतीय संस्कृति की समन्वयकारी प्रवृत्ति ने किया, उसने अनेक ग्राम देवियों और देवताओं को अपनी दैवत योजना (Mythology) में शामिल कर लिया। भारतीय लोकमानस में प्रकृति के घनिष्ठ साहचर्य और उसके साथ सहयोग की जीवन दृष्टि ने उसके प्रति श्रद्धा और आत्मीयता के संस्कार विकसित किए हैं। जलाशयों और नदियों के तीरों पर तीर्थों की स्थापना ईष्ट देवता के साथ उन्हें भी महिमामंडित करती है। पतितपावनी गंगा ही नहीं नर्मदा, गोदावरी आदि नदियों के प्रति हम श्रद्धा भाव रखते हैं। गंगा के भौगोलिक अस्तित्व में उसका पौराणिक महत्त्व एकमेक हो गया है, "एक अपराध छेमब मोर जानी, परसल पाय माय तुअ पानी ।"

उसी प्रकार हिमालय तो देवतात्मा ही है, "अस्ति उत्तस्याम दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।" द्वापर युग में इंद्र के विरोध में उपेंद्र कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत की पूजा की परिपाटी चला दी। मानवेतर प्राणियों में गोमाता तो अमृतोपम दूध की उपादेयता के कारण स्वाभाविक रूप से पूजनीय हैं ही, भारतीय मानस विषधर सर्प की भी पूजा कर प्रकृति के प्रति अपने सहयोग भाव को व्यक्त करता है, 'नागपंचमी' इसका प्रतीक पर्व है। इसी प्रकार भारतीय गृहस्थों की ओर से सुखाए जाते हुए अनाज के ढेर से यथाशक्ति दाना चुगने की पूरी छूट गौरैयों को हैं, क्योंकि उसकी दृष्टि में वे ब्राह्मण वत अवध्य है सचमुच ही, **"राम जी की चिरई राम जी का खेत। खालो चिरई भर भरपेट ।।"**

वैदिक ऋषि की शांति कामना प्रकृति के विविध रूपों के साथ वनस्पति के लिए भी होती थी। संभवतः हिमालय की घाटियों में बसे यक्ष कहे जाने वाले लोगों में ही पहले वृक्षों की पूजा की परिपाटी प्रचलित थी। अशोक वृक्ष की पूजा उनकी जीवन दृष्टि को भी व्यक्त करती थी। कभी वट-पीपल की महिमा तथागत बुद्ध की तपस्थली से संबद्ध होने के कारण बढ़ी होगी, अब तो लोक जीवन में भी जेठ की भीषण गर्मी में 'वट सावित्री व्रत' करती हुई भारतीय नारी को मानो ये घने छायादार वृक्ष संसार के संताप से उसके सौभाग्य की रक्षा की आश्वस्ति प्रदान करने वाले कुटुम्ब के बड़े बुजुर्ग प्रतीत होते हैं, उसी तरह 'अक्षय नवमी के दिन आंवले का वृक्ष' मानो भारतीय गृहस्थ जीवन को अक्षय आशीष प्रदान करता है और भारतीय गृहलक्ष्मी के घर-आंगन में तुलसी मैया की पत्ती-पत्ती, मंजरी-मंजरी उसके सुख सौभाग्य की मंगलकामना से भरी हुई है। अतः सांझ सकारे उसकी पूजा चित्त को शुचिता और शांति प्रदान करती है। केले का वृक्ष भी केवल अपने सुमधुर फल के कारण ही नहीं, अपने हरे भरे अस्तित्व से हमारे मांगलिक कार्यों को शोभायमान करने के कारण हमारे लिए वांछनीय हो जाता है। वृक्षरोपण की उपयोगिता तो स्पष्ट ही है, भारतीय संस्कृति में उसे पुण्य कर्म का महत्त्व प्रदान किया गया है। तात्पर्य यह की हम वनस्पति जगत का केवल उपयोग नहीं करते, उसे आत्मीयता और सम्मान प्रदान करते हैं। पौधों को जल से अभिषिक्त करने की उपयोगिता तो है ही उसके प्रति भावनात्मक लगाव से हम पावन कर्तव्य के रूप में इसका निर्वाह करते हैं। आधुनिक युग में देवी रूप में भारत माता की कल्पना करते हुए हम उसके सुजल, सुफल, शस्य, श्यामल रूप की वंदना करते हैं।

फल-फूलों को ही नहीं, नन्ही दूब को भी अपने आराध्य देवता की उपासना का अंग बनाकर विशेष महत्त्व प्रदान करना भारतीय संस्कृति की विशेषता है। पुष्पांजलि का अंश बनकर फूल हमारी भक्ति भावना को प्रतीकित करते हैं। इसी प्रकार कमल का फूल हमारे लिए श्री-समृद्धि का विशेष प्रतीक बन गया है। आद्याशक्ति के विभिन्न रूपों के लिए वह अनुकूल आसन हैं, अतः वह भी हमारी वंदना का पात्र हो जाता है, **"सिंह पर इक कमल राजत ताहि ऊपर भगवती ।"**

प्रकृति के साथ हमारा केवल भौतिक साहचर्य और सहयोग का संबंध नहीं है, हमारी संस्कृति में उसके प्रति भावनात्मक लगाव विकसित किया गया है। अतः प्रकृति अपने विभिन्न अंशों के साथ सर्वथा मानवेतर नहीं रह जाती, वह हमारी आत्मीय बनकर अपने साहचर्य सहयोग और मैत्री से हमारे जीवन को मुद मंगलमय बनाती है। उसका संरक्षण हम मनुष्यों का पुनीत कर्तव्य बन जाता है। आज यह संबंध-भावना विशेष प्रासंगिक प्रतीत होती हैं।

दर्शन और आज की राजनीति

डॉ. कुमकुम रानी
असिस्टेंट प्रोफेसर
दर्शनशास्त्र विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

राजनीति की अत्मा के रूप में अगर हम देखें तो, राजनीति केवल सत्ता प्राप्त करने या शासन करने की कला नहीं है, बल्कि यह समाज को न्याय, समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व जैसे मूल्यों की ओर ले जाने का साधन है। ये मूल्य कोई आकस्मिक आविष्कार नहीं हैं, बल्कि दार्शनिक मंथन से उपजे हैं।

आज की राजनीति जिस तीव्र गति से बदल रही है, उसमें दर्शन (Philosophy) की भूमिका को अक्सर दरकिनार कर दिया जाता है। जबकि यदि हम इतिहास की ओर मुड़कर देखें तो दर्शन और राजनीति का संबंध अत्यंत गहरा और पुराना है। सुकरात, प्लेटो, अरस्तू से लेकर चाणक्य, गांधी और अंबेडकर तकराजनीतिक विचारों की नींव हमेशा दार्शनिक चिंतन पर ही आधारित रही है। यह लेख इसी विमर्श को आधुनिक सन्दर्भ में समझने का प्रयास है कि आज की राजनीति में दर्शन की क्या प्रासंगिकता है, और क्यों इस गहराई को पुनः खोजने की आवश्यकता है।

राजनीति की अत्मा के रूप में अगर हम देखें तो, राजनीति केवल सत्ता प्राप्त करने या शासन करने की कला नहीं है, बल्कि यह समाज को न्याय, समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व जैसे मूल्यों की ओर ले जाने का साधन है। ये मूल्य कोई आकस्मिक आविष्कार नहीं हैं, बल्कि दार्शनिक मंथन से उपजे हैं। प्लेटो ने 'दार्शनिक राजा' (Philosopher King) की परिकल्पना इसलिए की थी क्योंकि वह मानते थे कि जब तक सत्ता दार्शनिकों के हाथ में नहीं आती, तब तक समाज में न्याय की स्थापना असंभव है।

भारतीय दर्शन में भी 'राजधर्म' और 'न्याय' की चर्चा बहुत व्यापक है। महाभारत में भीष्म द्वारा युधिष्ठिर को दिया गया 'राजधर्म' उपदेश एक गहरा दार्शनिक संदेश लिए हुए है। चाणक्य का 'अर्थशास्त्र' हो या बुद्ध का 'धम्म', सभी ने राजनीति को नैतिकता और विवेक के अधीन माना है।

आज की राजनीति दार्शनिक शून्यता की ओर बढ़ रही है ।दुर्भाग्यवश, आज की राजनीति में दर्शन की गूंज कहीं सुनाई नहीं देती। विचारधाराओं के स्थान पर व्यक्तिवाद और प्रचारवाद ने ले लिया है। नीतियों के पीछे सिद्धांतों का नहीं, बल्कि अवसरवाद और तात्कालिक लाभ का वर्चस्व है। राजनीतिक संवाद अब विमर्श का रूप नहीं लेते, बल्कि कटाक्ष, अपमान और ध्रुवीकरण में बदल जाते हैं।दार्शनिकता राजनीति को विवेकपूर्ण बनाती है, जबकि उसका अभाव इसे मात्र सत्ता संघर्ष बना देता है। इसी कारण आज राजनीति में नैतिक पतन, भ्रष्टाचार, असहिष्णुता और जनविरोधी निर्णय बढ़ते जा रहे हैं।

दर्शन के बिना लोकतंत्र अधूरा लगता है। लोकतंत्र केवल चुनावी प्रक्रिया नहीं है, यह एक दार्शनिक दृष्टिकोण है जो नागरिकों की गरिमा, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अल्पसंख्यकों के अधिकार और राज्य की जवाबदेही पर आधारित है। यदि राजनीति इन मूल्यों से कट जाएगी तो लोकतंत्र केवल दिखावा बनकर रह जाएगा।

अंबेडकर ने भारतीय संविधान की रचना करते समय बौद्धिक और नैतिक दृष्टि से दार्शनिक आधारों को

महत्व दिया। उन्होंने स्पष्ट कहा था कि "राजनीति को यदि नैतिकता से अलग कर दिया गया, तो उसका पतन निश्चित है।"

आज दार्शनिक पुनर्जागरण की बहुत आवश्यकता है ।आज के दौर में आवश्यकता है कि राजनीतिक दल, कार्यकर्ता और नीति-निर्माता दार्शनिक मूल्यों को फिर से आत्मसात करें। उन्हें चाहिए कि वे सत्ता के साधन मात्र न बनें, बल्कि समाज को दिशा देने वाले नैतिक नेतृत्वकर्ता बनें। इसके लिए शिक्षा व्यवस्था में राजनीतिक दर्शन को गंभीरता से पढ़ाया जाना चाहिए। युवाओं में विचारशीलता, आलोचनात्मक दृष्टि और विवेकशील नागरिकता का विकास आवश्यक है।

राजनीति में गहराई लाने के लिए गांधी, लोहिया, अरविंदो, नेहरू, अंबेडकर, और विनोबा भावे जैसे विचारकों के लेखन को पुनः जीवित करना होगा। इनके विचार आज भी प्रासंगिक हैं और राजनीति को आत्मा प्रदान कर सकते हैं।

राजनीति जब दर्शन से जुड़ती है, तो वह मात्र सत्ता का साधन नहीं रह जाती, वह समाज का मार्गदर्शक बनती है। लेकिन जब राजनीति दर्शन से कट जाती है, तो वह मूल्यहीन, स्वार्थपरक और खतरनाक हो जाती है। आज के समय में यदि हम स्वस्थ, समावेशी और नैतिक राजनीति की कल्पना करना चाहते हैं, तो हमें दर्शन को पुनः राजनीति के केंद्र में स्थापित करना होगा। यही समय की मांग है और यही एक स्वस्थ लोकतंत्र की नींव भी।

Debt, Informal Credit, and Labour Bondage : A Study among Landless Rural Households in Bihar

This review analysed existing literature on interconnected effects of gender, caste discrimination and policy failures in relation to landlessness and informal finance. It showed that landless labourers still depend on informal sources of credit for their many needs and this is very exploitative for them.

Vandana Kumari
Assistant Professor
Dept. of LSW
A.N. College, Patna

Bihar is the one of the most densely populated and economically a developing state of India. Urbanisation of Bihar was 11.3 percent in 2011 (Census, 2011), and the Bihar Economic Survey (2021-22) reported that the urbanization level had risen to 15.3 percent, which is least in India. 84.7 percent of the population of Bihar still lives in the rural areas. Landlessness among rural households in Bihar is widespread. 50.2 percent of the rural households are landless in Bihar (ADRI, 2018). Landless labourers are largely dependent on casual agricultural labour and seasonal migration. Therefore, it becomes tough to manage their basic needs of family. In many cases like medical, daughter's marriage, family functions expenditure, they depend upon money lender, family friends and relatives. In most cases these loans are small but essential. Money lenders charge high interest rates and then they become the part of the unending vicious cycle of loan repayments. Despite many land reforms, Bihar still faces huge disparity in terms of landholdings. More than 55 percent of the households in Bihar are still landless (NSSO, 2013). Large number of them belong to scheduled caste and other marginalized communities. This deprivation makes landless laborers go to indigenous sources of the high interest rate loan.

Theoretical Reflection

Enough research documentation on juncture of landless labourers and indebtedness in India is available especially agrarian economy like Bihar (Mehrotra, 2022). Despite many initiatives of land reforms, stark land inequality is still and agenda. 55 percent of rural households are landless and a significant portion of that are from marginalized and scheduled tribe communities. This structural deprivation makes landless labourers particularly vulnerable to high-interest informal loans, often tied with conditional labour arrangements—an enduring form of debt bondage (Srivastava, 2005).

In Bihar's rural economy, debt is linked to future labour obligations at low wages

called credit labour contracts is common. Rao (2004) said that this type of employment/ debt structure stops labourers to mobilise for the other employment options. Many times, this structure enforces caste-based hierarchy. Existing literature shows that lack of formal financial institutions leads to dependence on indigenous sources of credits. Several initiatives were taken to improve the outreach of banking, especially credit outreach but even after those initiatives there is huge sub-regional disparity (Ravi and Ghosh, 2022). Landless labourers, especially from marginalized communities, heavily rely on the moneylenders due to collateral barriers, lack of banking literacy, and geographical exclusion (Khanna & Majumdar, 2020; Tripathy, 2021). Due to high interest rates, sometimes exceeding 60 percent, they put them into a vicious cycle of loan repayment (Khanna & Majumdar, 2020) and this becomes a barrier in their socio-economic upliftment.

Many a times landless laborers take informal credit for day-to-day survival especially in case of health emergencies ranging from 5-10 percent to 60-120 percent annually (Pandey, 2024). These debt ties frequently bind workers to employers, reviving semi-feudal dependency patterns. In these types of situation gender and caste simultaneously play role and those they are on juncture of that and finically excluded from formal credit system or wage labour schemes (Patel, 2023; Sinha, 2024). According to Patel (2023) and Homes et. al. (2010), in MGNREGA women do not receive 33 percent share of employment, and minimum working days employment along with payment delays forces them to depend upon indigenous sources of borrowing. Moreover Shelar (2020) evidence of agroecological distress in driving debt-based migration among Bihar's landless labourers.

Conclusion

This review analysed existing literature on interconnected effects of gender, caste discrimination and policy failures in relation to landlessness and informal finance. It showed that landless labourers still depend on informal sources of credit for their many needs and this is very exploitative for them. It also shows the credit outreach issues of formal credit institutions even after many initiatives is an unfinished agenda. Other interventions like MGNREGA and microfinance are unable to cater to their basic needs. As a result, debt remains a tool of bondage, reinforcing cycles of poverty and inequality.

References

Asian Development Research Institute (ADRI). (2018). *Poverty and social assessment: A district-wise study of Bihar*. Asian Development Research Institute. Retrieved March 28, 2025, from https://www.adriindia.org/images/monographs/1562838906PovertyandSocialAssessmentADistrictwiseStudyofBihar.pdf

Holmes, R., Sadana, N., & Rath, S. (2010). *Gendered Risks, Poverty and Vulnerability in India: MGNREGA Case Study.* Overseas Development Institute.

Khanna, M., & Majumdar, S. (2020). *Caste-ing wider nets of credit: A mixed methods analysis of informal lending and caste relations in Bihar. World Development Perspectives, 19*, 100240.
https://doi.org/10.1016/j.wdp.2020.100240

Mehrotra, I. (2022). *Political Economy of Class, Caste and Gender: A Study of Rural Dalit Labourers in India.* Routledge.

NSSO (2013). *Key Indicators of Land and Livestock Holdings in India.* National Sample Survey Office, Ministry of Statistics and Programme Implementation, Government of India.

Pandey, M. (2024). *Analysing Livelihood Choices Of Landless Labour Households in Bihar.*

Patel, V. (2023). *Women, Work and the COVID-19 Pandemic: Paving the Path Forward.*

Rao, J. (2004). *Understanding Bonded Labour in Bihar: Interlinkages, Exploitation, and Policy Gaps. Journal of Social and Economic Development*, 6(2).

Ravi, R., & Ghosh, A. (2021). Efficiency analysis of scheduled commercial banks of Bihar: An outreach perspective. *Journal of Rural Development (Hyderabad), 40*(3), 424–441. https://doi.org/10.25175/jrd/2021/v40/i3/149505

Srivastava, R. (2005). Bonded Labour in India: Its Incidence and Pattern. *ILO Working Paper.*

Tripathy, S. N. (2021). *Distress Migration Among Ultra-poor Households in Western Odisha.*
Journal of Land and Rural Studies, 9(1), 87–104.
https://doi.org/10.1177/23210249211001975

Shelar, K. (2020). *India's Agro-Ecological Crisis and Debt Entrapments.* MA Thesis, Erasmus University.

A New & Forward-looking Vision for India's Higher Education System

Dr. Lav Kumar
Assistant Professor
Dept. of Physics
A.N. College, Patna

HEIs will develop specific hand holding mechanisms and competitions for promoting innovation among student communities. The NRF will function to help enable and support such a vibrant research and innovation culture across HEIs, research labs, and other research organizations.

Higher education plays an extremely important role in promoting human as well as societal well being and in developing India as envisioned in its Constitution - a democratic, just, socially conscious, cultured, and humane nation upholding liberty, equality, fraternity, and justice for all. Higher education significantly contributes towards sustainable livelihoods and economic development of the nation. As India moves towards becoming a knowledge economy and society, more and more young Indians are likely to aspire for higher education.

Given the 21st century requirements, quality higher education must aim to develop good,thoughtful, well-rounded, and creative individuals. It must enable an individual to study one or more specialized areas of interest at a deep level, and also develop character, ethical and Constitutional values, intellectual curiosity, scientific temper, creativity, spirit of service, and 21st century capabilities across a range of disciplines including sciences, social sciences, arts, humanities, languages, as well as professional, technical, and vocational subjects. A quality higher education must enable personal accomplishment and enlightenment, constructive public engagement, and productive contribution to the society. It must prepare students for more meaningful and satisfying lives and work roles and enable economic independence.

For the purpose of developing holistic individuals, it is essential that an identified set of skills and values will be incorporated at each stage of learning, from pre-school to higher education.

At the societal level, higher education must enable the development of an enlightened, socially conscious, knowledgeable, and skilled nation that can find and implement robust solutions to its own problems. Higher education must form the basis for knowledge creation and innovation thereby contributing to a growing national economy. The purpose of quality higher education is, therefore, more than the creation

of greater opportunities for individual employment. It represents the key to more vibrant, socially engaged, cooperative communities and a happier, cohesive, cultured, productive, innovative, progressive, and prosperous nation.

Some of the major problems currently faced by the higher education system in India include :

(a) A severely fragmented higher educational ecosystem;
(b) Less emphasis on the development of cognitive skills and learning outcomes;
(c) A rigid separation of disciplines, with early specialisation and streaming of students into narrow areas of study;
(d) Limited access particularly in socio-economically disadvantaged areas, with few HEIs that teach in local languages
(e) Limited teacher and institutional autonomy;
(f) Inadequate mechanisms for merit-based career management and progression of faculty and institutional leaders;
(g) Lesser emphasis on research at most universities and colleges, and lack of competitive peer reviewed research funding across disciplines;
(h) Suboptimal governance and leadership of HEIs;
(I) An ineffective regulatory system; and
(j) Large affiliating universities resulting in low standards of undergraduate education.

National Education policy 2020 envisions a complete overhaul and re-energising of the higher education system to overcome these challenges and thereby deliver high-quality higher education, with equity and inclusion. The policy's vision includes the following key changes to the current system: (a) moving towards a higher educational system consisting of large, multidisciplinary universities and colleges, with at least one in or near every district, and with more HEIs across India that offer medium of instruction or programmes in local/Indian languages; (b) moving towards a more multidisciplinary undergraduate education; (c) moving towards faculty and institutional autonomy; (d) revamping curriculum, pedagogy, assessment, and student support for enhanced student experiences; (e) reaffirming the integrity of faculty and institutional leadership positions through merit appointments and career progression based on teaching, research, and service; (f) establishment of a National Research Foundation to fund outstanding peer-reviewed research and to actively seed research in universities and colleges; (g) governance of HEIs by high qualified independent boards having academic and administrative autonomy; (h) "light but tight" regulation by a single regulator for higher education; (i) increased access, equity, and inclusion through a range of measures, including greater opportunities for outstanding public education; scholarships by private/philanthropic universities for disadvantaged and underprivileged students; online education, and Open Distance Learning (ODL); and all

infrastructure and learning materials accessible and available to learners with disabilities.

Institutional Restructuring and Consolidation:

The main thrust of this policy regarding higher education is to end the fragmentation of higher education by transforming higher education institutions into large multidisciplinary universities, colleges, and HEI clusters/Knowledge Hubs, each of which will aim to have 3,000 or more students. This would help build vibrant communities of scholars and peers, break down harmful silos, enable students to become well-rounded across disciplines including artistic, creative, and analytic subjects as well as sports, develop active research communities across disciplines including cross-disciplinary research, and increase resource efficiency, both material and human, across higher education.

Moving to large multidisciplinary universities and HEI clusters is thus the highest recommendation of this policy regarding the structure of higher education. The ancient Indian universities Takshashila, Nalanda, Vallabhi, and Vikramshila, which had thousands of students from India and the world studying in vibrant multidisciplinary environments, amply demonstrated the type of great success that large multidisciplinary research and teaching universities could bring. India urgently needs to bring back this great Indian tradition to create well-rounded and innovative individuals, and which is already transforming other countries educationally and economically.

This vision of higher education will require, in particular, a new conceptual perception/understanding for what constitutes a higher education institution (HEI), i.e., a university or a college. A university will mean a multidisciplinary institution of higher learning that offers undergraduate and graduate programmes, with high quality teaching, research, and community engagement. The definition of university will thus allow a spectrum of institutions that range from those that place equal emphasis on teaching and research i.e., Research-intensive Universities, those that place greater emphasis on teaching but still conduct significant research i.e. Teaching-intensive Universities. Meanwhile, an Autonomous degree-granting College (AC) will refer to a large multidisciplinary institution of higher learning that grants undergraduate degrees and is primarily focused on undergraduate teaching though it would not be restricted to that and it need not be restricted to that and it would generally be smaller than a typical university.

A stage-wise mechanism for granting graded autonomy to colleges, through a transparent system of graded accreditation, will be established. Colleges will be encouraged, mentored, supported, and incentivized to gradually attain the minimum benchmarks required for each level of 34 National Education Policy 2020 accreditation. Over a period of time, it is envisaged that every college would develop

into either an Autonomous degree-granting College, or a constituent college of a university - in the latter case, it would be fully a part of the university. With appropriate accreditations, Autonomous degree-granting Colleges could evolve into Research-intensive or Teaching-intensive Universities, if they so aspire.

It must be clearly stated that these three broad types of institutions are not in any natural way a rigid, exclusionary categorization, but are along a continuum. HEIs will have the autonomy and freedom to move gradually from one category to another, based on their plans, actions, and effectiveness. The most salient marker for these categories of institutions will be the focus of their goals and work. The Accreditation System will develop and use appropriately different and relevant norms across this range of HEIs. However, the expectations of high quality of education, and of teaching-learning, across all HEIs will be the same.

In addition to teaching and research, HEIs will have other crucial responsibilities, which they will discharge through appropriate resourcing, incentives, and structures. These include supporting other HEIs in their development, community engagement and service, contribution to various fields of practice, faculty development for the higher education system, and support to school education.

By 2040, all higher education institutions (HEIs) shall aim to become multidisciplinary institutions and shall aim to have larger student enrolments preferably in the thousands, for optimal use of infrastructure and resources, and for the creation of vibrant multidisciplinary communities. Since this process will take time, all HEIs will firstly plan to become multidisciplinary by 2030, and then gradually increase student strength to the desired levels.

More HEIs shall be established and developed in underserved regions to ensure full access, equity, and inclusion. There shall, by 2030, be at least one large multidisciplinary HEI in or near every district. Steps shall be taken towards developing high-quality higher education institutions both public and private that have medium of instruction in local/Indian languages or bilingually. The aim will be to increase the Gross Enrolment Ratio in higher education including vocational education from 26.3% (2018) to 50% by 2035. While a number of new institutions may be developed to attain these goals, a large part of the capacity creation will be achieved by consolidating, substantially expanding, and also improving existing HEIs.

Growth will be in both public and private institutions, with a strong emphasis on developing a large number of outstanding public institutions. There will be a fair and transparent system for determining increased levels of public funding support for public HEIs. This system will give an equitable opportunity for all public institutions to grow and develop, and will be based on transparent, pre-announced criteria from within the accreditation norms of the Accreditation System. HEIs delivering education of the highest quality as laid down in this Policy will be incentivized in expanding their capacity.

Institutions will have the option to run Open Distance Learning (ODL) and online programmes, provided they are accredited to do so, in order to enhance their offerings, improve access, increase GER, and provide opportunities for lifelong learning (SDG 4). All ODL programmes and their components leading to any diploma or degree will be of standards and quality equivalent to the highest quality programmes run by the HEIs on their campuses. Top institutions accredited for ODL will be encouraged and supported to develop high-quality online courses. Such quality online courses will be suitably integrated into curricula of HEIs, and blended mode will be preferred.

Single-stream HEIs will be phased out over time, and all will move towards becoming vibrant multidisciplinary institutions or parts of vibrant multidisciplinary HEI clusters, in order to enable and encourage high-quality multidisciplinary and cross-disciplinary teaching and research across fields. Single-stream HEIs will, in particular, add departments across different fields that would strengthen the single stream that they currently serve. Through the attainment of suitable accreditations, all HEIs will gradually move towards full autonomy - academic and administrative - in order to enable this vibrant culture. The autonomy of public institutions will be backed by adequate public financial 35 National Education Policy 2020 support and stability. Private institutions with a public-spirited commitment to high-quality equitable education will be encouraged. The new regulatory system envisioned by this Policy will foster this overall culture of empowerment and autonomy to innovate, including by gradually phasing out the system of 'affiliated colleges' over a period of fifteen years through a system of graded autonomy, and to be carried out in a challenge mode. Each existing affiliating university will be responsible for mentoring its affiliated colleges so that they can develop their capabilities and achieve minimum benchmarks in academic and curricular matters; teaching and assessment; governance reforms; financial robustness; and administrative efficiency. All colleges currently affiliated to a university shall attain the required benchmarks over time to secure the prescribed accreditation benchmarks and eventually become autonomous degree-granting colleges. This will be achieved through a concerted national effort including suitable mentoring and governmental support for the same.

The overall higher education sector will aim to be an integrated higher education system, including professional and vocational education. This Policy and its approach will be equally applicable to all HEIs across all current streams, which would eventually merge into one coherent ecosystem of higher education. University, worldwide, means a multidisciplinary institution of higher learning that offers undergraduate, graduate, and Ph.D programmes, and engages in high-quality teaching and research. The present complex nomenclature of HEIs in the country such as 'deemed to be university', 'affiliating university', 'affiliating technical university', 'unitary university' shall be replaced simply by 'university' on fulfilling the criteria as per norms.

Towards a More Holistic and Multidisciplinary Education:

India has a long tradition of holistic and multidisciplinary learning, from universities such as Takshashila and Nalanda, to the extensive literatures of India combining subjects across fields. Ancient Indian literary works such as Banabhatta's Kadambari described a good education as knowledge of the 64 Kalaas or arts; and among these 64 'arts' were not only subjects, such as singing and painting, but also 'scientific 'fields, such as chemistry and mathematics, 'vocational ' fields such as carpentry and clothes-making, 'professional 'fields, such as medicine and engineering, as well as ' soft skills' such as communication, discussion, and debate. The very idea that all branches of creative human endeavour, including mathematics, science, vocational subjects, professional subjects, and soft skills should be considered 'arts', has distinctly Indian origins. This notion of a ' knowledge of many arts' or what in modern times is often called the 'liberal arts' (i.e., a liberal notion of the arts) must be brought back to Indian education, as it is exactly the kind of education that will be required for the 21st century.

Assessments of educational approaches in undergraduate education that integrate the humanities and arts with Science, Technology, Engineering and Mathematics (STEM) have consistently showed positive learning outcomes, including increased creativity and innovation, critical thinking and higher-order thinking capacities, problem-solving abilities, teamwork, communication skills, more in depth learning and mastery of curricula across fields, increases in social and moral awareness, etc., besides general engagement and enjoyment of learning. Research is also improved and enhanced through a holistic and multidisciplinary education approach.

A holistic and multidisciplinary education would aim to develop all capacities of human beings -intellectual, aesthetic, social, physical, emotional, and moral in an integrated manner. Such an education will help develop well-rounded individuals that possess critical 21st century capacities in fields across the arts, humanities, languages, sciences, social sciences, and professional, technical, and vocational fields; an ethic of social engagement; soft skills, such as communication, discussion and debate; and rigorous specialization in a chosen field or fields. Such a holistic education shall be, in the long term, the approach of all undergraduate programmes, including those in professional, technical, and vocational disciplines.

36 National Education Policy 2020

A holistic and multidisciplinary education, as described so beautifully in India ' s past, is indeed what is needed for the education of India to lead the country into the 21st century and the fourth industrial revolution. Even engineering institutions, such as IITs, will move towards more holistic and multidisciplinary education with more arts and

humanities. Students of arts and humanities will aim to learn more science and all will make an effort to incorporate more vocational subjects and soft skills. Imaginative and flexible curricular structures will enable creative combinations of disciplines for study, and would offer multiple entry and exit points, thus, removing currently prevalent rigid boundaries and creating new possibilities for life-long learning. Graduatelevel, master's and doctoral education in large multidisciplinary universities, while providing rigorous research-based specialization, would also provide opportunities for multidisciplinary work, including in academia, government, and industry. Large multidisciplinary universities and colleges will facilitate the move towards high-quality holistic and multidisciplinary education. Flexibility in curriculum and novel and engaging course options will be on offer to students, in addition to rigorous specialization in a subject or subjects. This will be encouraged by increased faculty and institutional autonomy in setting curricula. Pedagogy will have an increased emphasis on communication, discussion, debate, research, and opportunities for cross-disciplinary and interdisciplinary thinking.

Departments in Languages, Literature, Music, Philosophy, Indology, Art, Dance, Theatre, Education, Mathematics, Statistics, Pure and Applied Sciences, Sociology, Economics, Sports, Translation and Interpretation, and other such subjects needed for a multidisciplinary, stimulating Indian education and environment will be established and strengthened at all HEIs. Credits will be given in all Bachelor's Degree programmes for these subjects if they are done from such departments or through ODL mode when they are not offered in-class at the HEI.

Towards the attainment of such a holistic and multidisciplinary education, the flexible and innovative curricula of all HEIs shall include credit-based courses and projects in the areas of community engagement and service, environmental education, and value-based education. Environment education will include areas such as climate change, pollution, waste management, sanitation, conservation of biological diversity, management of biological resources and biodiversity, forest and wildlife conservation, and sustainable development and living. Value-based education will include the development of humanistic, ethical, Constitutional, and universal human values of truth (satya), righteous conduct (dharma), peace (shanti), love (prem), nonviolence (ahimsa), scientific temper, citizenship values, and also life-skills; lessons in seva/service and participation in community service programmes will be considered an integral part of a holistic education. As the world is becoming increasingly interconnected, Global Citizenship Education (GCED), a response to contemporary global challenges, will be provided to empower learners to become aware of and understand global issues and to become active promoters of more peaceful, tolerant, inclusive, secure, and sustainable societies. Finally, as part of a holistic education, students at all HEIs will be provided with opportunities for internships with local industry, businesses, artists, crafts persons, etc., as well as research internships with

faculty and researchers at their own or other HEIs/research institutions, so that students may actively engage with the practical side of their learning and, as a by-product, further improve their employability.

The structure and lengths of degree programmes shall be adjusted accordingly. The undergraduate degree will be of either 3 or 4-year duration, with multiple exit options within this period, with appropriate certifications, e.g., a certificate after completing 1 year in a discipline or field including vocational and professional areas, or a diploma after 2 years of study, or a Bachelor ' s degree after a 3-year programme. The 4-year multidisciplinary Bachelor's programme, however, shall be the preferred option since it allows the opportunity to experience the full range of holistic and multidisciplinary education in addition to a focus on the chosen major and minors as per the choices of the student. An Academic Bank of Credit (ABC) shall be established which would digitally store the academic credits earned from various recognized HEIs so that the degrees from an HEI can be awarded taking into account credits earned. The 4-year programme may also lead to a degree 'with 37 National Education Policy 2020 Research' if the student completes a rigorous research project in their major area(s) of study as specified by the HEI.

HEIs will have the flexibility to offer different designs of Master's programmes: (a) there may be a 2-year programme with the second year devoted entirely to research for those who have completed the 3-year Bachelor ' s programme; (b) for students completing a 4-year Bachelor's programme with Research, there could be a 1-year Master's programme; and (c) there may be an integrated 5-year Bachelor's/Master's programme. Undertaking a Ph.D. shall require either a Master's degree or a 4-year Bachelor's degree with Research. The M.Phil. programme shall be discontinued.

Model public universities for holistic and multidisciplinary education, at par with IITs, IIMs, etc., called MERUs (Multidisciplinary Education and Research Universities) will be set up and will aim to attain the highest global standards in quality education. They will also help set the highest standards for multidisciplinary education across India. HEIs will focus on research and innovation by setting up start-up incubation centres; technology development centres; centres in frontier areas of research; greater industryacademic linkages; and interdisciplinary research including humanities and social sciences research. Given the scenario of epidemics and pandemics, it is critical that HEIs take the lead to undertake research in areas of infectious diseases, epidemiology, virology, diagnostics, instrumentation, vaccinology and other relevant areas. HEIs will develop specific hand holding mechanisms and competitions for promoting innovation among student communities. The NRF will function to help enable and support such a vibrant research and innovation culture across HEIs, research labs, and other research organizations.

सार्थक जीवन की खोज

किसी भी वस्तु, पदार्थ अथवा व्यक्ति (जो नाशवान है) को सुख का कारण मानना हमारी बुद्धि का भ्रम है और इस भ्रम का निवारण ही हमारे सार्थक जीवनयात्रा का पहला पड़ाव है। पुनः कर्म एवं ज्ञान के प्रभाव तथा उनके परिणाम के विषय में भी हमें सजग रहने की आवश्यकता है।

डॉ. दीपक कुमार
सहायक प्राध्यापक
भूगोल विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

एकांत के क्षणों हम सभी के मन में कभी न कभी ऐसे विचार अवश्य हीं आए होंगे कि मैं कौन हूँ? मेरे जन्म लेने का उदेश्य क्या है? क्या मेरा जीवन सही दिशा में जा रहा है? क्या जितना कमा लिया उतना पर्याप्त है? ऐसा क्या है कि सबकुछ होते हुए भी हर्ष तो है अपितु आनंद नहीं..विश्राम तो है अपितु शांति नहीं? बहुत कुछ भौतिक चाहने और पाने की लालसा मे क्या कुछ मौलिक छूट गया वास्तव मे ये चिंतन का विषय है।

आज मानव का अस्तित्व सभी ओर से भौतिकवादी प्रभावों से परिवेष्टित है किन्तु हम अपने जीवन की सार्थकता का मूल्यांकन इस कसौटी पर कर सकते हैं कि हम विषय जगत को कितना महत्व देते हैं।

"हमारे दुर्लभ मानव जीवन का मूल्य उतना ही कम हो जाता है जितना अधिक हम विषय जगत को मूल्यवान मान लेते हैं'' बहुधा बाह्य जगत के साथ हमारी प्रीति इतनी अधिक हो जाती है कि हमारी आंतरिक मौलिकता अपना अस्तित्व खोने लगती है। हमारी आंतरिक यात्रा जो अत्यंत गूढ है हमारी दिखावटी बाह्य यात्रा के कारण खो जाती है, आनंद, शांति, सद्भाव, दिव्यता, संपूर्णता, मौलिकता और भगवत्ता की प्राप्ति ही मूल रूप से मानव जीवन का उद्देश्य है और हमारा एक एक क्षण इनकी प्राप्ति के लिए ही व्यतीत होना चाहिए।

हम प्रायः उन वस्तुओं से अपनी प्रीति रखते हैं जो अनित्य और नाशवान हैं, प्रारंभ में इनसे होने वाला हमारा लगाव हमें क्षणिक सुख प्रदान करता है और हम उसे ही अपना मान लेते हैं, ये भूल जाते हैं कि इस माने हुए संबंध का विच्छेद अवश्य होगा और ये हमारे दुख का कारण होगा। हमने कई बार लोगों को ऐसा कहते हुए सुना है कि "बेहिसाब हसरतें मत पालिए जो मिला है उसे संभालिए" इसे इस रूप में समझा सकता है कि प्राप्त वस्तुओं के सदुपयोग और अप्राप्त वस्तुओं की आकांक्षा न करने से राग की निवृति हो जाती है और आगे चलकर इसका प्रभाव द्वेष के अंत और निर्वासना के भाव के उदय से होता है।

एक बात तो बिल्कुल स्पष्ट होनी चाहिए कि हमारा वर्तमान स्थाई नहीं है और इस परिवर्तनशील अवस्था में हमारा राग जिस किसी भी विषय में होता है उसका मूल कारण अभेदभाव और भेद भाव का संबंध है। अभेदभाव ईश्वर से हमारा एकत्व स्थापित कर बताता है कि जगत में व्याप्त कुछ भी ईश्वर की सत्ता से पृथक नहीं है। हमारे भीतर होने वाला ऐसा जागरण हमें राग से वैराग्य और भोग से योग की ओर ले जाता है। इस लौकिक जगत में हमें जो कुछ भी प्राप्त हुआ है वो केवल साधन मात्र है इस दुर्लभ मानव जीवन के परम उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, लेकिन हमारी आसक्ति धीरे धीरे हमें उस ओर ले जाती है जहां हमें असह्य दुख मिलता है और उसका कारण होता है कालचक्र में होने वाला वियोग। हमारा प्रयास होना चाहिए कि हम मानव जीवन के अविनाशी श्रेष्ठ तत्व को समझें और उसमें पूर्ण निष्ठा रखते हुए उसकी प्राप्ति की ओर अग्रसर हों, इस परम उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें एक सच्चे मार्गदर्शक की आवश्यकता होती है और उनसे हमारा मिलना जीवन की एक दुर्लभ घटना है, जिसके लिए हमारा

प्रति क्षण सजग और जागरूक रहना आवश्यक है क्यूंकि न जाने कब, कहाँ और किस रूप में वो हमारे सम्मुख आ जाएं द्य इतिहास में हमें ऐसे कई सामान्य व्यक्तियों और उनके आदर्श पुरुषों से मिलन की घटनाएं पढ़ने को मिलती हैं जिनसे मिलने के बाद वे सामान्य व्यक्ति महापुरुषों की श्रेणी में आ गए।

किसी भी वस्तु, पदार्थ अथवा व्यक्ति (जो नाशवान है) को सुख का कारण मानना हमारी बुद्धि का भ्रम है और इस भ्रम का निवारण ही हमारे सार्थक जीवनयात्रा का पहला पड़ाव है। पुनः कर्म एवं ज्ञान के प्रभाव तथा उनके परिणाम के विषय में भी हमें सजग रहने की आवश्यकता है। सत असत कर्मों के कर्मफल का समायोजन कर्म के द्वारा ही संभव है किन्तु अज्ञान से जनित भ्रम की निवृति कर्म के द्वारा नहीं अपितु ज्ञान के द्वारा ही संभव है। अनित्य में नित्य बुद्धि और अशुचि में शुचि बुद्धि अथवा नाशवान वस्तुओं में सुख बुद्धि का कारण कर्म नहीं बल्कि हमारा अज्ञान है जिसकी निवृति ज्ञान से ही होगी और तभी हम अविनाशी तत्व की ओर उन्मुख होंगे, जिससे हमें अपूर्व शांति, अखंड आनंद और श्रेष्ठ जीवन की प्राप्ति हो सकती है।

पीपल

डॉ. मंजु कुमारी
सहायक प्राध्यापक
भौतिकी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

कितना कूड़ा करता है पीपल आंगन में,
मां को दिन में दो बार बोहारी फेरनी पड़ती है
कैसे-कैसे दोस्त यार आते हैं इसके,
खाने को ये पीपलियां देता है,
सारा दिन शाखों पे बैठे तोते, मैंनें
आधा खाते, आधा जाया करते हैं
गिटक-विटक सब आंगन में ही फेंक के जाते हैं।

एक डाल पर चिड़िया ने भी घर बनाए हैं
तिनके उड़ते रहते हैं दिनभर आंगन में,
एक गिलहरी भोर से लेकर सांझ तलक
जाने क्यों धमाचौकड़ी करती है
दौड़ दौड़ कर दसियों बार सारी शाखें घूम आती है

चील कभी ऊपर भी डाली पर बैठी बौराई सी
अपने आप से बात करती रहती है।
आस-पड़ोस से झपटी लूटी हड्डी,
मांस की बोटी भी कंबख्त ये कव्वे
पीपल की ही डाल पर बैठ के खाते हैं।

हुष-हुष करती है मां तो यह मांसखोर सब
कांए-कांए उस पर फेंक कर उड़ जाते हैं
फिर भी जाने क्यों मां कहती है
आ काका आ काका आ कागा...
मेरे बच्चों के आने का संदेष दे जा कागा...
संदेष दे जा कागा...

नारी-विमर्श : हिन्दी की प्रमुख समकालीन कवयित्री

डॉ. अनामिका शिल्पी
हिन्दी विभाग
ए.एन.कॉलेज, पटना

किसी भी वस्तु, पदार्थ अथवा व्यक्ति (जो नाशवान है) को सुख का कारण मानना हमारी बुद्धि का भ्रम है और इस भ्रम का निवारण ही हमारे सार्थक जीवनयात्रा का पहला पड़ाव है। पुनः कर्म एवं ज्ञान के प्रभाव तथा उनके परिणाम के विषय में भी हमें सजग रहने की आवश्यकता है।

'नारी केवल मांसपिंड की संज्ञा नहीं है । आदिम काल से आज तक विकास-पथ पर पुरुष का साथ देकर, उसकी यात्रा को सरल बनाकर उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और अपने वरदानों से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर, मानवी ने जिस व्यक्तित्व, चेतना और हृदय का विकास किया है, उसी का पर्याय नारी है ।' महादेवी वर्मा, दीपशिखा, पृष्ठ संख्या - 45-46 , नारी की इसी शक्ति व अस्तित्व को समाज में स्थापित करने का प्रयास है - 'नारी-विमर्श', जिसके माध्यम से नारी-जीवन के विभिन्न पहलुओं यथा - पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक स्तर पर भागीदारी एवं समाज, संस्कृति, धर्म, राष्ट्र आदि में उसके स्थान व महत्व को स्थापित करने का प्रयास किया गया है। नारी-विमर्श का उद्येश्य नारियों में चेतना, आत्मविश्वास और साहस जगाना है, जिससे वह अपने अस्तित्व को स्थापित कर सकें और अपने अधिकारों के प्रति सचेत रहे। नारी-विमर्श पितृसत्तात्मक सोच को नकारकर नारी-पुरुष की समानता को महत्व देता है। यही कारण है कि समकालीन समय में नारी-विमर्श साहित्य के केंद्र में है। समकालीन कविता में पहली बार नारी-मुक्ति के प्रश्न तीक्ष्णता से उभरकर सामने आएँ। नारी-जीवन के बहुआयामी पहलुओं को लेखन के द्वारा सामने रखने का साहसिक कार्य समकालीन कवयित्रियों ने किया। इन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से नारी-विमर्श के विभिन्न पहलुओं, आयामों, स्थितियों एवं संघर्षों को अभिव्यक्ति प्रदान की। यही कारण हैं कि समकालीन कविता में नारी-विमर्श का स्वर प्रमुखता से दिखाई देता है। इस काल में नारी जीवन के संघर्ष, नारी-पुरुष संबंधों में परिवर्तन तथा नारी जीवन की विसंगतियों को अनुभूति की गहराई से प्रकट करना, नारी मन के अंतर्द्वन्द्वों और मध्यम वर्गीय समाज की विडंबनाओं को प्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत करने का सफल प्रयास समकालीन कवयित्रियों ने किया है। साथ ही जीवन के प्रति नवीन दृष्टिकोण, वैचारिक प्रतिबद्धता और तीखेपन को नारी-विमर्श के माध्यम से अपनी कविताओं में अभिव्यक्त किया ।

कवयित्री अनामिका समकालीन कविता के संदर्भ में कहती हैं - "चिरपरिचित का भी कोई कोना अदेखा-अजाना जो रह जाता है, समकालीन कविता अचानक किसी क्षण भवभूति की चकित आँख की तरह उसका मर्मोद्घाटन कर लेती है और उसी क्षण से उसका और उसके बहाने से सारे संसार का अर्थ उसके लिए बदल जाता है। एक नए ढंग का प्रत्यभिज्ञा दर्शन यह है, जो सामान्य से सामान्य वस्तु के भीतर भी अर्थ समुच्चय के द्वन्द्व-संकुल सहस्त्रदल कमल खिल सकने की संभावना रेखांकित करता है। नए सिरे से स्थापित करता है कि चीजें कभी उतनी सपाट नहीं होती जितनी दिखती हैं, सतह का यथार्थ कभी अंतिम यथार्थ नहीं होता - 'सेवेन लेयर्स ऑफ ऐम्बिग्युइटि' की एक परत भी कभी अचानक खुल पाती है तो चमत्कार का सा बोध हमें आप्यायित कर डालता है। अनादृत को यथेष्ट मान देने की यह पुरी प्रक्रिया जो समकालीन कवियों के बिंबों-प्रतीकों को एक अलग धार देती है, प्रायः किसी अच्छी कविता में साफ दिख सकती है।" इधर की कविता, समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई-अगस्त 2000, पृष्ठ संख्या - 140 ,

एक ओर जहाँ इन कवयित्रियों ने मानवीय संबंधों की संवेदनात्मक भावों का सूक्ष्मता से विश्लेषण किया, वहीं दूसरी ओर नारी-पुरुष के मध्य असमानता, अशिक्षा, आर्थिक वैषम्यता, शोषण, रूढ़िवादी परंपरा एवं समाज में नारी के स्थान को प्रमुखता से रेखांकित किया। कवयित्री कात्यायनी का मानना है कि - 'लौटना' जैसा ही, समकालीन कविता का एक और बीज शब्द है 'बचाना' । लगातार बचाव की मुद्रा। 'बचाना' - यह एक पुकार या अकर्मक कामना जैसा अधिक है, इसमें प्रतिरक्षात्मक संघर्ष का स्वर भी नहीं है। प्रत्याक्रमण का उद्यम तो दूर, ऐसी सोच भी नहीं ।"ए.अरविन्दाक्षन, कविता का यथार्थ, पृष्ठ संख्या - 53 ,

'सच तो यह है कि हमारी सारी परंपरागत सोच ने नारी को दो हिस्सों में बाँट दिया है। कमर से ऊपर की नारी और कमर से नीचे की औरत। पुरुष को यह समाज उसकी संपूर्णता में देखता है, उसकी कमियों और कमजोरियों का मूल्यांकन करता है, किन्तु नारी को वह संपूर्णता में नहीं देख पाता। कमर से ऊपर की नारी महिमामयी है, करूणा भरी है, सुंदरता और शील की देवी है, वह कविता है, संगीत है, अध्यात्म है और अमूर्त है। कमर से नीचे वह काम-कन्दरा है, कुत्सित है, अश्लील है, ध्वंसकारिणी, राक्षसी है और सब मिलाकर नारी नरक है। वस्तुतः नारी के प्रति समस्त धारणा दो मूलभूत तत्वों से बनी है - भय और घृणा, किन्तु फिर भी यह वही नारी है, जिसे यह संसार कभी सरस्वती मानता है, कभी दुर्गा। कभी वह जगज्जननी है, कभी संहारिणी, कभी भैरवी तो कभी पराशक्ति भी - वह इस संसार के लिए दुर्जेय और रहस्यमयी एक साथ है - बल्कि रहस्य है, इसलिए दुर्जेय है ।

अपनी अखंडता एवं संपूर्णता में नारी दुर्जेय और अजेय है। यही कारण है कि, आदमी ने औरत की स्वतंत्रा को मारा, कुचला या पालतू बनाया। आदमी हमेशा से नारी की स्वतंत्र सत्ता से डरता रहा है और उसे ही उसने अपने आक्रमण का केंद्र बनाया है। इस पुरुष-प्रधान समाज ने हर तरह कोशिश की है कि उसे परतंत्र और निष्क्रिय बनाया जा सके - तभी बॉउआर कहती हैं कि- 'औरत पैदा नहीं होती, बनाई जाती है।'राजेन्द्र यादव, आदमी की निगाह में औरत, पृष्ठ संख्या - 14-15

समकालीन कविता सामाजिक यथार्थ के इसी अंतर्विरोधों को तलाशती है। नवीन बिंबों के द्वारा यथार्थ को नए रूप में परिभाषित करते हुए, तटस्थता से उसका सामना करती प्रतीत होती है। समकालीन हिन्दी कविता में नारी-विमर्श की एक नयी सुदृढ़ परंपरा का सूत्रपात करने का श्रेय इस काल की कवयित्रियों को जाता हैं। अस्सी के दशक के बाद हिन्दी कविता में बहुत सी कवयित्रियों का कविता के क्षेत्र में आगमन हुआ और इन्होनें नब्बे के दशक तक अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करवाई। अपनी रचनाशीलता के माध्यम से इन्होंने नारी-जीवन की प्रत्येक स्थितियों एवं आधी आबादी के संघर्ष का चित्रण किया है। इन कवयित्रियों में - तेजी ग्रोवर, गगन गिल, निर्मला गर्ग, अनामिका, कात्यायनी, मैत्रेयी पुष्पा, गगन गिल, गीताश्री, अर्चना वर्मा, पद्मा सचदेव, सविता सिंह, रंजना जायसवाल, अनीता वर्मा, नीलेश रघुवंशी, निर्मला पुतुल, इंदु जैन, जया जादवानी, नीरजा माधव, वर्तिका नंदा आदि प्रमुख हैं । ये समकालीन कवयित्रियाँ अपनी प्रतिबद्धता, निर्भीकता एवं बेबाकीपन के कारण साहित्य के क्षेत्र में अपना एक विशिष्ट स्थान एवं महत्व रखती हैं। इन कवयित्रियों ने जहाँ कविता के क्षेत्र में अपनी एक अलग पहचान बनाई, तो वहीं नारी-जीवन के विभिन्न पहलुओं का सजीव चित्रण कविता के माध्यम से किया। इनकी कविताओं में नारी-जीवन की विसंगतियों, अनुभूतियों, संघर्ष, विद्रोह, अस्मिता, शोषण, स्वप्न, आशा-निराशा, अपने अस्तित्व को स्थापित करने की छटपटाहट आदि सभी मनोभावों की अभिव्यक्ति हुई है। इनकी कविताओं में नई कोमलता, शांत संघर्ष, संयमित ऐंद्रियता आदि स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

कवयित्री गगन गिल व तेजी ग्रोवर के काव्य-संसार में गहरी निजता है, एक प्रकार की शांति, प्रकृति की उपस्थित शक्ति है, तो वहीं अनामिका के काव्य-संसार में प्रकृति, नारी-जीवन की व्यथा, करूणा, स्त्री-पुरुष के

मध्य सामंजस्य को स्थापित करना, नारी-शक्ति को जागृत करना एवं नारी की संवेदनात्मक अनुभूति को अभिव्यक्ति प्रदान करना एवं नारी के स्वातंत्र्य अस्तित्व को स्थापित करना है। कवयित्री कात्यायनी की कविताएँ मुखर राजनैतिक प्रतिबद्धता और उग्र सामाजिकता को प्रकट करती हैं। इनकी कविताओं की विशेषता यह है कि वह गहरे सामाजिक संपृक्ति के साथ प्रखर राजनीतिक चेतना से निर्मित होती है। कवयित्री की ये कामना है कि नारी की अपनी एक स्वाधीन एवं स्वायत्त पहचान पुरुष के समान ही एक नागरिक के तौर पर हो। यही कारण है कि इनकी कविताएँ नारी को पराधीनता और दमन के सीमित संसार से मुक्त कर, उसे लोकतान्त्रिक चेतना स्तर पर प्रतिष्ठित करने प्रयास करती हैं। सविता सिंह की कविता में नारी के स्वतंत्र अस्तित्व की बात है। कविता का ये स्त्री स्वर स्त्रीत्व को नए रूप से परिभाषित करता है एवं स्त्री-स्वतंत्रता की नई जमीन तैयार करती हैं, तो वहीं निर्मला गर्ग की कविता में पितृसतात्मक व्यवस्था के अंतर्गत बेटे और बेटियों के बीच के फर्क को दर्शाया गया है। निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी नारी के जीवन की परिस्थिति, संघर्ष, आर्थिक-शोषण, मानसिक-दैहिक शोषण आदि की अभिव्यक्ति हुई है । जीवन के दुष्कर अभावों के बीच दैहिक शोषण झेलती स्त्री, भय और असुरक्षा के मध्य अपने घर की तलाश करते हुए अपने सपनों एवं आकांक्षाओं का पीछा करते हुए इस समाज में अपने स्थान को स्थापित करना चाहती है ।

समकालीन कवि एवं लेखक अरुण कमल जी नारी-मुक्ति के विषय में एवं कविता में नारी की उपस्थिति पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं - "प्राचीन काल से सारे लोकगीत मुख्यतः स्त्रियों ने ही रचे जो दुनिया की सर्वाधिक मर्मस्पर्शी कविताएँ हैं। थेरी गाथाएँ जो बौद्ध भिक्षुणियों ने रचीं, स्त्री मन की उन्मुक्त अभिव्यक्ति तो है ही, साथ ही प्रतिरोध का भी जीवंत दस्तावेज है। बाद में मध्यकाल में भक्ति आंदोलन के साथ अक्का महादेवी, लल मद और मीराबाई जैसी महान कवयित्रियों ने मुक्ति की अदम्य आकांक्षा को वाणी दी। न केवल शब्दों से बल्कि स्वयं अपने आचार-व्यवहार से, अपने जीवन से सिद्ध किया कि एक वैकल्पिक जीवन-पद्धति संभव है। फिर स्वाधीनता आंदोलन के दौर में महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान और रशीद जहाँ जैसी लेखिकाओं ने स्त्री-जीवन, मन और आंतरिक लालसा को उद्दाम आवेग के साथ व्यक्त किया। आज तो हिन्दी में अनेक कवयित्रियाँ सक्रिय हैं। इतनी बड़ी संख्या में इतनी श्रेष्ठ कवयित्रियाँ इसके पहले कभी नहीं हुई। और ये स्वयं अपनी कविता की शक्ति के कारण महत्वपूर्ण हैं। गगन गिल, अनामिका, कात्यायनी, निर्मला पुतुल, निर्मला गर्ग, सविता सिंह, नीलेश रघुवंशी जैसी अनेकानेक स्त्री-कवियों की कविताएँ केवल स्त्री-मुक्ति की चेतना को ही नहीं वरन् सम्पूर्ण समाज के रूपांतर की कामना को वाणी दे रही है।"संपादक, प्रमीला के.पी., स्त्री-मुक्ति और कविता, पृष्ठ संख्या - 3 ,

गगन गिल का रचना संसार उनकी गहन संवेनशीलता का पर्याय है। उनकी रचनाशीलता मानवीय संवेदना को बदलने का आग्रही है। इनकी कविताओं में नारी-मन की इच्छा-आकांक्षा एवं घर की देहरी के मिलेजुले अनुभव हैं, जिसमें स्त्री अपने 'स्व' की तलाश करती हैं। ये जीवन के उस उदात्त अनुभव की तलाश करती हैं, जिसमें देह से अधिक स्त्री-चेतना हो। इनकी कविता में स्त्री के जख्म भी देह से अधिक आत्मा के ही हैं और पीड़ा मछली के शरीर में फँसे काँटे के सदृश्य : "जिस एक काँटे से, बचने के लिए तैरती रही मछली - समुंदर-दर-समुंदर उसकी देह में छिपा था ।"गगन गिल, जिस एक काँटे से, अँधेरे में बुद्ध, पृष्ठ संख्या - 15 ,

अभिप्राय यह है कि स्त्री की देह उसके भीतर व बाहर के बीच का झीना आवरण है, जो उन दोनों को एक करती हुई उनके बीच घुलती जाती है और उनके बीच फँसा है आकांक्षा का काँटा, जो स्त्रीत्व से अभिन्न है। इनकी कविताएँ आत्म-साक्षात्कार करती स्त्री का प्रतिबिम्ब हैं। कवयित्री कहती हैं -

"एक दिन लौटेगी लड़की, हथेली पर जीभ लेकर

हाथ होगा उसका लहू से लथपथ
मुहँ से टपका लहू कपड़ों में सुख हुआ
दिखने में तो बाहर से वह खुशमिजाज होगी
मुँह उसका जुबान बिना आदी - आँखें उसकी दृश्यों से दूर
रंग उसके चेहरे में गड्डमड्ड
जुबान के बारे में वह कभी नहीं सोचेगी - भूलकर भी नहीं

न जुबान के बारे में - न हथेली के बारे में - न होंठों के बारे में "गगन गिल, एक दिन लौटेगी लड़की, पृष्ठ संख्या - 28-29 ,

स्त्री की चुप्पी के ऐसे बिम्ब, जिसमें उसकी खामोशी, उदासी, अन्याय को सहनकर, चेहरे पर खुशी के भाव को प्रकट करना, अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। विरोध के स्वर भी ना निकले उसकी जुबान से। उस लड़की के सपनें जो खो गए हैं अंधेरे में, वो सोचती नहीं, परंतु कभी झाँक लेते हैं सपने मन के किसी गहरे परत से, पर अब भूल चुकी है लड़की उसे फिर से जीना। यह भी एक प्रकार का विरोध है, जब हम जीवन को, स्वयं को छोड़ देते हैं परिस्थितियों के हवाले, फिर चाहे जो हो फर्क नहीं पड़ता। नारी जीवन की ये विसंगतियाँ उभर कर इनकी कविताओं में अभिव्यक्त हुई हैं ।

इनकी कविताओं के विषय में मृणाल पांडे लिखती हैं - "गगन की इन कविताओं में स्त्री-मन का एक अनुशासित लेकिन भव्य संशय और दुखबोध है, जो अभी एक रुढ़ि नहीं बना। इन कविताओं के रचाव का रंग बड़ी सहजता से कहीं गहन और कहीं धीमा होता चलता है, ऊपर से चढ़ाया कोई रोगन इनमें लगभग नहीं है। इसीलिए इन कविताओं में भावों का गठन और विकास, गगन का एकदम अपना भी है, और हमारे समय में एक स्त्री की अवस्थिति की खुरदुरी सच्चाईयों का आईना भी ।"गगन गिल, एक दिन लौटेगी लड़की, आवरण पृष्ठ से, तात्पर्य यह है कि इनकी कविताओं में स्त्री-मन की अनचीन्हे पृष्ठ खुलते हैं, जो स्त्री-जीवन की विडंबनात्मक स्थितियों को दर्शाते हैं। इनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं - 'एक दिन लौटेगी लड़की', 'अँधेरे में बुद्ध', 'यह आकांक्षा समय नहीं', 'थपक-थपक दिल थपक-थपक' आदि। कवयित्री कहती हैं कि - "साहित्य में उभरने वाला स्त्री-पक्ष बहुत अर्थवान हो सकता है, जो स्त्रियों के किसी आंदोलन और विमर्श से कहीं अलग और अधिक सूक्ष्म होगा।"गगन गिल, स्त्रीत्व को भाषा में पढ़ते हुए, भाषण का अंश , अभिप्राय यह है कि साहित्य में नारी की जो उपस्थिति है, वो अपने-आप में अपने अस्तित्व व अस्मिता को दृढ़ता से स्थापित कर रही है ।

नारी-स्वातंत्र्य की पक्षधर अनामिका का सम्पूर्ण साहित्य नारी की संवेदनात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति है । इनके प्रमुख काव्य-संग्रह हैं - 'शीतल स्पर्श ह धूप को', 'गलत पते की चिट्ठी', 'समय के शहर में', 'बीजाक्षर', 'अनुष्टुप', 'कविता में औरत', 'पानी को सब याद है', 'बंद रास्तों का सफर' एवं साहित्य अकादमी से सम्मानित काव्य-संग्रह- 'टोकरी में दिगंत, थेरी गाथा - 2014' आदि । इन सभी काव्य-संग्रहों की कविताओं के माध्यम से कवयित्री ने नारी-जीवन के विभिन्न पहलुओं, संघर्षों, कठिनाईयों एवं नारी-व्यक्तित्व की दृढ़ता को दर्शाने का प्रयास किया है । कविता को नारी-मन से जोड़ते हुए अपनी कविता 'स्त्री कवियों की जहालतें' में कहती हैं -

"कविता भी है तो स्त्री ही, कोई उसे सुनता नहीं,
सुनता भी है तो समझता नहीं, सब उसके प्रेमी हैं और दोस्त कोई नहीं !

"अनामिका, टोकरी में दिगन्त, पृष्ठ सांख्य ' 140 ,

अनामिका कहती हैं - "स्त्री समाज एक ऐसा समाज है, जो वर्ग, नस्ल, राष्ट्र आदि संकुचित सीमाओं के पार

जाता है और जहां कहीं दमन है-चाहे जिस वर्ग, जिस नस्ल, जिस आयु, जिस जाति की स्त्री त्रस्त है - उसको अँकवार लेता है। बूढ़े-बच्चे-अपंग-विस्थापित और अल्पसंख्यक भी मुख्यतः स्त्री ही हैं - यह मानता है। "अनामिका, स्त्री-विमर्श का लोकपक्ष, पृष्ठ सांख्य - 23-24 , अनामिका वृहत्तर समाज की गति व विडंबनाओं को एक स्त्री की नजर से देखना और परखना चाहती है। यही कारण है कि अनामिका के काव्य में समाज के हर वर्ग की नारी का चित्रण है। अनामिका की कविता गंभीर-गहन अर्थवता को दर्शाती हैं। इनकी कविताओं में मध्यम वर्ग की नारियों की पीड़ा, संघर्ष एवं भावनाओं का चित्रण हुआ है, परंतु कहीं भी उसे दयनीय रूप में नहीं चित्रित किया गया है, अपितु वे संघर्ष में भी अदम्य जिजीविषा का परिचय देती हैं ।

1979 में आई 'गलत पत्ते की चिट्ठी' काव्य-संग्रह में भी प्रकृति से संपृक्त कविताएं हैं । अनामिका प्रकृति की तरह ही कवि मन को विस्तार देना चाहती हैं । नीलगगन के समान विस्तार चाहती हैं, उसी का आह्वान है दृ'मन इधर उड़ा,मन उधर उड़ा',

"तुलसी-चौरों के इर्द-गिर्द कब तक मंडराएगा कोई? विस्तार बड़ा !
विस्तार बड़ा देगा उधार देगा उधार यह नीलगगन ।

"अनामिका, गलत पते की चिट्ठी, पृष्ठ संख्या - 1 ,

एक स्त्री का जीवन भी इसी प्रकार का विस्तार चाहता है, अपनी अस्मिता का विस्तार। नीलगगन तक की उड़ान, अपने अस्तित्व की इसी विस्तार के लिए संघर्षरत है नारी। अपने काव्य-संग्रह 'कविता में औरत' में अनामिका लिखती हैं - "स्त्री-आंदोलन पितृसतात्मक समाज में पल रहे स्त्री-संबंधी पूर्वग्रहों से पुरुषों की क्रमिक मुक्ति असंभव नहीं मानता। दोषी पुरुष नहीं, वह पितृसत्तात्मक व्यवस्था है, जो जन्म से लेकर मृत्यु तक पुरुषों को लगातार एक ही पाठ पढाती हैं कि स्त्रियाँ उनसे हीनतर हैं, उनके भोग का साधन-मात्र। आंदोलन की सार्थकता इसमें है कि वहाँ-वहाँ उँगली रखे जहाँ-जहाँ मानदंड दोहरें हैं य विरूपण, प्रक्षेपण, विलोपन (डिस्टार्शन, प्रोजेक्शन, एबोलिशन) के तिहरे षड्यन्त्र स्त्री के खिलाफ लगातार कारगर हैं, जिनसे निस्तार मिलना ही चाहिए और सारा संघर्ष इसी बात का है। "अनामिका, कविता में औरत, पृष्ठ संख्या - 15, इस प्रकार कवयित्री ने निर्भीक रूप से नारियों की समस्याओं पर, स्त्री-असमानता के व्यूहात्मक यथार्थ पर, प्रतिगामी संत्रासों से गुजरती नारियों की दशा पर और समाज में नारी की स्थिति के इस खुरदुरे यथार्थ को 'कविता में औरत' में चित्रित किया है। 'चिट्ठी लिखती हुई औरत' में कवयित्री ने नारी-जीवन के कठिन सफर को दर्शाने का प्रयास किया है, वे कहती हैं -'इतना उनके भीतर क्या है, जो शताब्दियों से संचित है और जिसकी टीस आज भी है', जिसका आकार द्रौपदी की उस साड़ी के समान है, ना खत्म होने वाला। पुनः कवयित्री नारी को पानी और मिट्टी सदृश्य बतलाती हैं, एक जो जीवन प्रदान करता है, दूसरा जो नव-सृजन करता है, परंतु दोनों का कोई ओर-छोर नहीं होता, नारी भी ऐसी ही है, जीवन-दायिनी, नव-सृजन करने वाली। कवयित्री मानती हैं, ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति है 'नारी' -

"पानी और मिट्टी, खुद एक धारावाहिक चिट्ठी ही तो हैं

ईश्वर की - "पूर्ववत, पृष्ठ संख्या - 39 ,

अनामिका का सम्पूर्ण काव्य-संसार नारी-जीवन की संवेदनात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति है । उस जीवन की समस्या, संघर्ष, संत्रस, वेदना, अदम्य जिजीविषा एवं नारी के अस्तित्व को स्थापित करने की ललक स्पष्ट परिलक्षित होती है ।

समकालीन कविता में कवयित्री कात्यायनी अपनी एक अलग पहचान रखती हैं। इनके लिए कविता जीवन, सृजन और संघर्ष की बुनियादी आवश्यकता है। जीवन-रूढ़ियों को तोड़ने के बहुआयामी संघर्ष के मध्य इन्होनें

काव्य-रूढ़ियों को भी तोड़ा। इनके प्रमुख काव्य-संग्रह हैं - 'सात भाइयों के बीच चंपा', 'इस पौरुषपूर्ण समय में', 'फुटपाथ पर कुर्सी', 'जादू नहीं कविता', 'राख-अंधेरे की बारिश में' एवं 'एक कुहरा पारभासी' आदि। इनकी कविताओं में सहजता की लय, वैविध्य ताजगी, जिजीविषा की ऊष्मा है। इन्होंने अकादमिक सीमांतों का अतिक्रमण करके आम-पाठक-चित्त में अपनी कविता के लिए जगह बनाई। इनकी कविता में जीवन की व्यापकता, सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति एवं वैचारिक पक्ष की सबलता है, जो इनकी संवेदनात्मकता के विविध धरातल का निर्माण करती हैं। कात्यायनी कविता के माध्यम से नारी के साहस, दृढ़ता व संकल्प शक्ति का आह्वान करती हैं। अपने काव्य संग्रह 'इस पौरुषपूर्ण समय में' वे कहती हैं -

"संकल्प चाहिए, अद्भुत-अंतहीन

इस सांद्र, क्रूरता भरे अँधेरे में, जीना ही क्या कम है, एक स्त्री के लिए

जो वह रचने लगी, कविता! "कात्यायनी, इस पौरुषपूर्ण समय में, पृष्ठ संख्या - 57 ,

विश्वनाथ मिश्र जी कहते हैं - "बीसवीं सदी के अंतिम दो दशक की हिन्दी कविता पर उनकी कविताओं के बिना चर्चा नहीं की जा सकती ।...स्त्री-प्रश्न के विविध पक्षों की कात्यायनी की समझ में इतिहास-बोध और वैज्ञानिक तर्कसम्मति के साथ की एक कवि की गहरी संवेदना भी है और एक 'ऐक्टिविस्ट' की सुलझी हुई व्यवहारोन्मुखता भी। "कात्यायनी, दुर्ग द्वार पर दस्तक, आवरण पृष्ठ से, कात्यायनी की कविताओं में नारी की स्वतंत्रता की तीव्र छटपटाहट तो है ही, वहीं समाज को बदलने का आह्वान भी है। नारी किस प्रकार रचती है जीवन और संसार एवं उसके अंतर्मन की पुकार क्या है? इसे कवयित्री ने अपनी कविता 'वह रचती है जीवन और.....'

"जिसके बिना सब कुछ अधूरा है, प्यार भी, सौन्दर्य भी, मातृत्व भी....
सोचती है वह, और पूछती है चीख-चीखकर ।
प्रतिध्वनि गूँजती है, घटियों में मैदानों में
पहाड़ों से, समुद्र की ऊँची लहरों से टकराकर
आजादी ! आजादी !! आजादी !!!

"कात्यायनी, सात भाईयों के बीच चम्पा, पृष्ठ संख्या - 42 ,

वास्तव में नारी के बिना जीवन की कल्पना भी व्यर्थ है और अधूरी भी, परंतु उसी जीवनदायिनी नारी की ऐसी स्थिति? उसकी पुकार आज गूंज रही है व दृढ़ता से प्रश्न भी कर रही है - समाज से। वह मांग रही है आजादी ! अपने होने की, अपनी स्वतंत्र अस्मिता की, अपने स्व की। इनकी कविताओं में अपने समय और समाज के यथार्थ का चित्रण है। नारी के सामाजिक-आर्थिक स्वातंत्र्य की मांग के साथ ही रुग्ण परंपराओं के प्रति विद्रोह का स्वर एवं पुरुष मानसिकता के बदलने का आग्रह भी ।

कवयित्री निर्मला पुतुल ने आदिवासी नारियों के उत्थान के लिए अनेक कार्य किए। इनके प्रमुख काव्य-संग्रह हैं - 'नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द', 'अपने घर की तलाश में', 'फूटेगा एक नया विद्रोह'। इनकी कविताओं में चित्रित नारी अपने घर-परिवार, रिश्तों में खोजती है अपना - स्थान। अपने अस्तित्व की तलाश करते हुए तलाशती है - अपनी जमीन। वास्तव में नारी स्वयं एक घर है - नवसृजन का, जिससे वो पनाह देती है - मानवता को, विकास को और करती है नवसृजन जीवन का, परंतु फिर भी जिसे वो अपना कह सके ऐसा कोई 'घर' क्यों नहीं? इस प्रश्न की

खोज में और 'अपने घर की तलाश में'
"धरती के इस छोर से उस छोर तक?

मुट्ठी भर सवाल लिए मैं
दौड़ती-हाँफती-भागती....
तलाश रही हूँ सदियों से निरंतर.....

अपनी जमीन, अपना घर / अपने होने का अर्थ !!

"निर्मला पुतुल, अपने घर की तलाश में, पृष्ठ संख्या - 3 ,

नारी-जीवन की वेदना, संघर्ष, शोषण को कविता में प्रखर स्वर में प्रदान करते हुए, नारी-मन की वेदना, उसके अंतर्मन की व्यथा को अभिव्यक्त करते हुए कवयित्री पुरुष समाज से ये प्रश्न करती हैं - तन से परे जाकर क्या कभी स्त्री के मन की गांठों को खोलकर, पढ़कर देखा है?

"तन के भूगोल से परे, एक स्त्री के

मन की गाँठें खोल कर, कभी पढ़ा है तुनमे,

उसके भीतर का खौलता इतिहास? "निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द, पृष्ठ संख्या - 8 ,

वास्तव में नारी के आंतरिक भावों, पीड़ाओं एवं वेदनाओं कोई नहीं समझ सकता। जब तक वो उसकी गहराई को ना समझे। अपने एक लेख 'झारखंडी महिलाओं का पलायन एवं उनका शोषण' में आदिवासी महिलाओं के जीवन यथार्थ के विषय में वे लिखती हैं - "आदिवासी महिलाएँ, जिनके पास भूख है, भूख में दूर तक पसरी ऊबड़-खाबड़ धरती है, सपने हैं, सपनों से दूर तक पीछा करती अधूरी इच्छाएँ हैं, जिसकी लिजलिजी दीवारों पर पाँव रखकर वे भागती हैं, बेतहाशा, कभी पूरब तो कभी पश्चिम की ओर....। "संपादक, उमाशंकर चौधरी, हिस्सेदारी के प्रश्न-प्रतिप्रश्न, पृष्ठ संख्या - 203 , इस प्रकार वे आह्वान करती हैं समस्त नारी जाति से, अपने जीवन का इतिहास स्वयं लिखने के लिए -

"स्त्रियों को इतिहास में जगह नहीं मिली
इसलिए हम स्त्रियाँ लिखेंगी अपना इतिहास
हम खून से लिखेंगे अपना इतिहास आँसू से नहीं,
हम भूगोल की सारी सीमाएँ लाँघकर
पहुँच जाएँगे इतिहास के उस गलियारे में

और दर्ज करेंगे अपना सशक्त हस्ताक्षर ।

"निर्मला पुतुल, बेघर सपने, स्त्रियाँ लिखेंगी अपना इतिहास, पृष्ठ संख्या - 74 ,

अतः इनकी कविताओं में नारी-विमर्श एवं नारी का सशक्त स्वर है, जिसके प्रत्येक शब्द में चुनौती, संघर्ष एवं विरोध की गूंज है। तभी नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द। नारी-मन की कोमल भावनाओं का रचा-बसा संगीत भी उभरकर सामने आया है । कवयित्री सविता सिंह अपनी कविताओं के माध्यम से नारी के स्वतंत्र अस्तित्व की मांग करती हैं। इनकी कविता में आत्मनिर्भता, निर्भीकता व बेझिझक अपनी बात रखने का साहस, स्वयं अपने जीवन के लिए निर्णय लेना एवं हर प्राणी से सहानुभूति के भाव की अभिव्यक्ति करती है। अपनी कविता 'मुझे वह स्त्री पसंद है' में कवयित्री कहती हैं -

"मुझे वह स्त्री पसंद है, जो कहती है अपनी बात साफ-साफ
बेझिझक जितना कहना है बस उतना

निर्भीक जो करती है अपने काम
नहीं डरती सोचती हुई आत्मनिर्भरता पर अपनी..
समझती हुई सारे घात-प्रतिघात जो
खतरे सारे जीवन के, खुद से प्रेम करती है
और संसार के हर प्राणी से सहानुभूति रखती है।

"सविता सिंह, नींद थी और रात थी, पृष्ठ संख्या - 14 ,

इनके प्रमुख काव्य-संग्रह हैं - 'अपने जैसा जीवन', 'नींद थी और रात थी', 'पचास कविताएं नई सदी' आदि । कवयित्री स्त्री के उस 'स्व' को जागृत करना चाहती है, क्योंकि अब 'बस खुद को पाने की उत्कंठा है' ना जीतने की इच्छा है, ना ही हारने का भय है। अब बस नारी की उस अस्मिता को स्थापित करना है, जो नारी होने के अर्थ और अस्तित्व को महत्ता प्रदान कर सके।

इनकी कविताओं पर टिप्पणी करते हुए सुधीर पचौरी लिखते हैं - "सविता सिंह की कविता हिन्दी की स्त्री-कविता में एक ब्रेक पैदा करती है। कच्ची प्राथमिक सहजानुभूति भर की जगह पक्की संरचनाएँ, व्याख्यामूलकता से आगे विमर्शात्मकता की स्थापना, स्त्रीवादी दृष्टि को सचमुच में एक लिंगात्मक और ग्लोबल संदर्भ से जोड़ देना और सर्वोपरि वर्जीनिया वुल्फ की 'ए रूम ऑफ वन्स ओन' की दुर्दमनीय पुकार की तरह पूर्णतया अपनी स्त्री का निर्माण ऐसे अंतरण हैं जो हिन्दी की समकालीन स्त्रीत्ववादी कविता को हठात एक नए चरण में दाखिल कर देते हैं। "सुधीर पचौरी, वो किसकी औरत है, जनसत्ता, 17 जून, 2001 ,

अपनी कविता 'मैं किसकी औरत हूँ' में कवयित्री ने नारी-स्वतंत्रता की नई जमीन तैयार करते हुए घोषणा करती हैं -

"मैं किसी की औरत नहीं हूँ, मैं अपनी औरत हूँ
मैं किसी की मार नहीं सहती / और मेरा परमेश्वर कोई नहीं
उन्मुक्त हूँ देखो, और यह आसमान / समुद्र यह और इसकी लहरें,
हवा यह / और इसमें बसी प्रकृति की गन्ध सब मेरी हैं,
और मैं हूँ अपने पूर्वजों के शाप और अभिलाषाओं से दूर / पूर्णतया अपनी ।

"सविता सिंह, मैं किसकी औरत हूँ, अपने जैसा जीवन, पृष्ठ संख्या - 40-41 ,

अतः इनकी कविताएं मानवीय मुक्ति के अनुभव का अपना स्त्रीपाठ हैं। इनकी कामना है कि जो स्वप्न और आकांक्षा इनकी कविताओं में है, वो सामाजिक स्तर पर भी संभव हो। नारी का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है और समाज में उसका अपना महत्व व स्थान है ।

नीलेश रघुवंशी का रचना संसार नारी-जीवन के महाख्यान का नया सौंदर्यशास्त्र गढ़ता है। साथ ही इनकी कविताएँ सामाजिक वर्ग-विषमता को भी उजागर करती है। सहज जीवनबोध एवं अपने परिवेश को देखने की निस्संग-दृष्टि इनकी कविताओं विशिष्ट बनाती है। इनके प्रमुख काव्य-संग्रह हैं - 'घर-निकासी', 'पानी का स्वाद', 'अन्तिम पंक्ति में', 'खिड़की खुलने के बाद' आदि। इनकी कविताएँ में समाज के पिछड़े, हाशियाकृत जन-समुदाय के प्रति संवेदनशील मानवीय पक्षधरता को प्रमाणित करती हैं। अपने एक साक्षात्कार में इन्होंने कहा - "भारतीय समाज में सिर्फ स्त्री ही नहीं और दूसरे तबके भी शोषित और वंचित हैं। अन्याय का शिकार सिर्फ स्त्री ही नहीं है, पुरुष भी हैं। एक उच्च वर्ग की स्त्री और एक निम्न वर्ग के पुरुष की स्थिति को कैसे देखेंगे? क्या यहाँ स्त्री की तुलना

में पुरुष शोषित नहीं है? हमें जड़ से पूरी व्यवस्था को बदलना होगा। आमूलचूल परिवर्तन ही एक स्वस्थ समाज का निर्माण कर सकेगा। टुकड़ों में बात करने या परिवर्तन करने से कुछ भी हासिल नहीं होगा। "नया ज्ञानोदय, मई 2017, पृष्ठ संख्या - 18 ,

नीलेश जी को स्त्री-जीवन के अंतर्विरोधों की बारीक पहचान है और स्त्री-मुक्ति के स्वप्न का चित्र बिल्कुल स्पष्ट है, जिसे वे अपनी कविता 'बेखटके' में ट्रक एवं विश्लेषण के साथ प्रस्तुत करती हैं - "इतनी कमियाँ हैं जीवन में कि / पानी के तोड़ को भी

देखने लगी हूँ उम्मीद से / अन्तिम इच्छा कहें या कहें पहली इच्छा

मैं बेखटके जीना चाहती हूँ।

"नीलेश रघुवंशी, खिड़की खुलने के बाद, पृष्ठ संख्या - 99 ,

जीवन संघर्षों के मध्य हम यह सीख ही जाते हैं कि अनेक प्रकार की चुनौतियाँ आयेंगी और उसके हमें सतर्क एवं संघर्षरत होना ही पड़ेगा और जीवन की कोमलता को सुरक्षित रखने हेतु एक नई दुनिया का स्वप्न आँखों में छा जाता है, जिसमें नारी-पुरुष के मध्य कोई अंतर ना हो, अपितु नारी का अस्तित्व भी पुरुष के समान सम्मान पा सकें। तब कवयित्री कहती हैं -

"इस दुनिया को तोड़-मरोड़कर बनानी चाहिए एक नई दुनिया

बेटी जिसमें इतनी पराई न हो।

"नीलेश रघुवंशी, तोड़-मरोड़कर, पानी का स्वाद, पृष्ठ संख्या - 59 ,

अतः इनकी कविताएँ सिर्फ नारी-मुक्ति की आकांक्षा नहीं करती, वरन् उसे प्राप्त करने हेतु अपने सामर्थ्य एवं उद्येश्य के साथ इस सकारात्मक परिवर्तन के लिए संघर्ष करती हैं एवं नए समाज के निर्माण में अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करती हैं ।

इस प्रकार हिन्दी कविता में नारी-विमर्श समकालीन कविता के केंद्र में है। तत्कालीन कविता की सबसे प्रमुख विशेषता है - नारी के द्वारा नारी-मन की सूक्ष्म अभिव्यक्ति। उसकी पीड़ा, दुःख, वेदना, संघर्ष आदि का मार्मिक चित्रण तथा अपने अस्मिता के अस्तित्व को स्थापित करने की छटपटाहट। अपने होने के स्वत्व को, अपनी जमीन, अपना घर और अपने जीवन के लक्ष्य को तलाशती व तराशती नारी, आत्मविश्वास, निर्भीकता और आत्मनिर्भरता से। इन कवयित्रियों की कविताएं नारी-विमर्श के नए फलक का निर्माण कर रही है, जिस प्रकार आज जीवन हर क्षेत्र में नारी ने स्वयं को बड़ी दृढ़ता से स्थापित किया है तथा समाज में अपनी गरिमामयी छवि बनाई है। निःसंदेह आने वाले समय में नारी का जीवन विभिन्न प्रकार के पारिवारिक, सामाजिक कठिनाईओं से ऊपर उठकर नए समाज का निर्माण करेगा ।

संदर्भ :

- महादेवी वर्मा, दीपशिखा, पृष्ठ संख्या - 45-46
- इधर की कविता, समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई-अगस्त 2000, पृष्ठ संख्या - 140
- ए.अरविन्दाक्षन, कविता का यथार्थ, पृष्ठ संख्या - 53
- राजेन्द्र यादव, आदमी की निगाह में औरत, पृष्ठ संख्या - 14-15
- संपादक, प्रमीला के.पी., स्त्री-मुक्ति और कविता, पृष्ठ संख्या - 3
- गगन गिल, जिस एक काँटे से, अँधेरे में बुद्ध, पृष्ठ संख्या -15

अनुग्रह ज्योति

- गगन गिल, एक दिन लौटेगी लड़की, पृष्ठ संख्या - 28-29
- गगन गिल, एक दिन लौटेगी लड़की, आवरण पृष्ठ से
- गगन गिल, स्त्रीत्व को भाषा में पढ़ते हुए, भाषण का अंश
- अनामिका, टोकरी में दिगन्त, पृष्ठ सांख्य - 140
- अनामिका, स्त्री-विमर्श का लोकपक्ष, पृष्ठ सांख्य - 23-24
- अनामिका, गलत पते की चिट्ठी, पृष्ठ संख्या - 1
- अनामिका, कविता में औरत, पृष्ठ संख्या - 15
- पूर्ववत, पृष्ठ संख्या - 39
- कात्यायनी, इस पौरुषपूर्ण समय में, पृष्ठ संख्या - 57
- कात्यायनी, दुर्ग द्वार पर दस्तक, आवरण पृष्ठ से
- कात्यायनी, सात भाईयों के बीच चम्पा, पृष्ठ संख्या - 42
- निर्मला पुतुल, अपने घर की तलाश में, पृष्ठ संख्या - 3
- निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द, पृष्ठ संख्या - 8
- संपादक, उमाशंकर चौधरी, हिस्सेदारी के प्रश्न-प्रतिप्रश्न, पृष्ठ संख्या - 203
- निर्मला पुतुल, बेघर सपने, स्त्रियाँ लिखेंगी अपना इतिहास, पृष्ठ संख्या - 74
- सविता सिंह, नींद थी और रात थी, पृष्ठ संख्या - 14
- सुधीर पचौरी, वो किसकी औरत है, जनसत्ता, 17 जून, 2001
- सविता सिंह, मैं किसकी औरत हूँ, अपने जैसा जीवन, पृष्ठ संख्या - 40-41
- नया ज्ञानोदय, मई 2017, पृष्ठ संख्या - 18
- नीलेश रघुवंशी, खिड़की खुलने के बाद, पृष्ठ संख्या - 99
- नीलेश रघुवंशी, तोड़-मरोड़कर, पानी का स्वाद, पृष्ठ संख्या - 59

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP)

''सीबीसीएस पद्धति और बिहार में विश्वविद्यालयों के सामने चुनौतियां''

डॉ. कुन्दन कुमार सिंह

''राष्ट्रीय शिक्षा नीति'' के तहत छात्रों के अन्दर सीखने की प्रवृत्ति का विकास करना होगा। जरूरत है कि हम पढ़ने-पढ़ाने की जगह सीखने और सीखाने की प्रवृत्ति का विकास करें। समय लगेगा, लेकिन आनेवाले समय में शायद हम राष्ट्रीय शिक्षा नीति के लक्ष्यों को पूरी तरह से हासिल कर सके।

भारत सरकार द्वारा 34 साल पुरानी शिक्षा प्रणाली को बदलकर इसे ''राष्ट्रीय शिक्षा नीति'' का नाम दिया गया। भारत सरकार ने 29 जुलाई 2020 को राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू किया। माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी की अध्यक्षता में केन्द्रीय मंत्रीमंडल ने इसे मंजूरी प्रदान की। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के सम्बन्ध में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व वाली सरकार का स्पष्ट तौर पर कहना है कि वैश्विक स्तर पर भारतीय मूल्यों को स्थापित करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति जरूरी कदम है।

अगर स्वतंत्र भारत के इतिहास में शिक्षा नीति और शिक्षा की बात की जाए तो 1986 में जारी नई शिक्षा नीति के बाद राष्ट्रीय शिक्षा नीति का लागू होना एक क्रातिंकारी कदम के तौर पर देखा जा रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति को जिस समिति के प्रतिवेदन पर तैयार किया गया उसक नेतृत्व अंतरिक्ष वैज्ञानिक के. कस्तुरीरंगन द्वारा किया गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कुल 27 अध्याय और 4 भाग शामिल है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में किए गए बदलाव को समझने के लिए नई शिक्षा नीति 1986 को समझना होगा। इसकी शुरूआत अगस्त 1985 के एक दस्तावेज से होती है, दस्तावेज का शीर्षक था ''शिक्षा की चुनौती'' इस दस्तावेज को तैयार करने में समाज के हर स्तर के लोगों की सहायता ली गई थी। इसके अन्तर्गत बौद्धिक, सामाजिक, राजनैतिक, व्यावसायिक, प्रशासकीय आदि सभी तरह के लोगों के सुझाव को शामिल किया गया था। इन सभी के सुझाव के आधार पर ही 1986 में भारत सरकार ने नई शिक्षा नीति 1986 का प्रारूप तैयार किया था। अगर 1986 के शिक्षा नीति को बहुत कम शब्दों में परिभाषित करें तो कह सकते हैं कि इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण भारत के लिए एक समान शैक्षिक ढ़ाँचे को स्विकार कर भारत के अधिकतर राज्यों में 10+2+3 संरचता को अपनाया गया था। अगर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की बात करे तो इसमें 10+2 प्रणाली की जगह 5+3+3+4 में बदल दिया गया है। 1986 की नई शिक्षा नीति के तहत भारतीय संविधान के नीति निदेशक तत्वों के अन्तर्गत 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की गई थी। लेकिन राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अन्तर्गत इसे 3 वर्ष से 18 वर्ष के आयु के छात्रों के लिए अनिवार्य कर दिया गया है। एक तरफ नई शिक्षा नीति 1986 बहुविषयक ना होकर पारम्परिक और एकल थी। वही दूसरी तरफ राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को समग्र और बहुविषयक बनाया गया है।

अब, जब 5+3+3+4 के प्रक्रिया को अपनाया गया है तब इसके अन्तर्गत 5 वर्ष का काल प्रारिम्भक चरण, 3 वर्ष का प्रारम्भिक चरण, फिर 3 वर्ष का मध्य चरण और चार वर्षीय माध्यमिक चरण में विभाजित किया गया है।

अगर भाषा के आधार पर देखा जाए तो नई शिक्षा नीति में भाषा के अन्तर्गत हिन्दी, अँग्रेजी और क्षेत्रीय भाषाओं पर बल दिया गया था लेकिन राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत पांचवी कक्षा तक की शिक्षा में मातृभाषा को पूरी तरह से लागू कर क्षेत्रीय भाषाओं पर विशेष बल दिया गया है।

इन सभी बदलावों के बाद देश भर के उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए भारतीय उच्च शिक्षा परिषद नामक एकल नियामक की परिकल्पना की गई है। वैसे इस परिकल्पना को बहुत पहले लागू किया गया था लेकिन 2020 में इसे कार्यान्वित किया गया। अगर शिक्षा के लिए अर्थात राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत पाठ्यक्रम को लागू करने हेतु शिक्षा क्षेत्र पर सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत व्यय का प्रावधान किया गया है।

इस आलेख के सबसे महत्वपूर्ण बिन्दु पर लिखते समय उच्च शिक्षा संस्थान, शिक्षण पद्धति और सीबीसीएस पद्धति पर बात करना आवश्यक है। विशेषकर बिहार के विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों के सम्बन्ध में। ऐसा इसलिए क्योंकि जब पूरे भारत में राष्ट्रीय शिक्षा नीति को कार्यान्वित करने का प्रयास किया जा रहा है। तब बिहार के सन्दर्भ में लिखना और बोलना अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

सबसे पहले हमें च्वाईस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम को समझना होगा। क्योंकि इसको समझे बिना इसको लागू करना छात्रों के साथ बहुत बड़ा अन्याय और हमारे शिक्षकों के साथ अधिक कार्य करने का बेमतलब दबाव है। नीति बनाने वाले शिक्षाविदों का मानना है कि पहले जो पाठ्यक्रम विश्वविद्यालयों में था वह बहुत ही अस्पष्ट और मौलिक नहीं था। सीबीसीएस पद्धति में कठोरता को हटाकर उसमें लचीलापन लाने का प्रयास किया गया है। लचीलापन का सीधा मतलब है कि छात्र अपने रूची के हिसाब से विषयों का चयन कर अपने स्किल को विकसित कर सकते हैं जो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का उद्देश्य है। इसके अन्तर्गत पाठ्यक्रमों का क्रेडिट आधारित मूल्यांकन है जो पाठ्यक्रम के कार्यभार और अवधि से सम्बन्धित है। अगर सबकुछ मिलाकर च्वाईस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम के सम्बन्ध में निष्कर्ष के तौर पर कहे तो "सीबीसीएस प्रणाली" छात्रों को अपनी शिक्षा को अधिक लचीला और व्यक्तिगत बनाने का अवसर प्रदान करती है, जिससे वे अपनी रूची के अनुसार पाठ्यक्रम चून सकते हैं और अपनी शिक्षा को अपनी आवश्यकता के अनुसार अनुकूलित कर सकते हैं।

अब आते है बिहार के शिक्षा में सीबीसीएस प्रणाली पर, एक तरफ सीबीसीएस प्रणाली कहती है कि छात्र रूची के हिसाब पाठ्यक्रम चूने। आखिर छात्रों में यह रूची कैसे पैदा होगी। सच्च तो यही है कि आज भी छात्र इंटरमीडियट के बाद आर्टस, सायंस, कामर्स ही चून रहे हैं। बस अंतर यह आया है कि स्नातक के लिए उनके पास 04 साल तक का समय है पहले स्नातक में प्रतिष्ठा विषय के पाठ्यक्रम की जगह मेजर और सब्सिडियरी की जगह माइनर कर दिया गया है। इसके अलावा जो भी पाठ्यक्रम छात्रों के पास रखा गया है इससे पहले वो शायद कभी इसके बारे में नहीं जानते। स्क्ल विकसित करने के नाम पर बस परीक्षाएं होती हैं। जैसे उदाहरण के तौर पर स्नात्तक प्रथम सेमेंस्टर के अधिकांश छात्रों के द्वारा पठकथा लेखन पेपर का चयन किया गया। 2023-27 के छात्र जो अब एजी सेमेस्टर में हैं। वो अपने मेजर और माइनर के अलावा कुछ नहीं जानते। इसके पीछे का सबसे बड़ा कारण है कि आज भी छात्रों को आनर्स और सब्सिडियरी में ही उलझा कर रखा गया बस नाम बदला गया है। मेजर और माइनर। ठीक वैसे ही जैसे मानव संसाधन का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय कर दिया गया है। इन सभी समस्याओं के पीछे जो सबसे बड़े कारक है वो बहुत आम और पूर्णतः सबको समझ में आनेवाले हैं।

(1) अनुसंधान किए बिना पाठ्यक्रम को लागू करना
(2) एक वर्ग विशेष बुद्धिजीवि द्वारा थोपना
(3) भारतीय और भारत तत्व को सही से परिभाषित नहीं करना
(4) छात्र और शिक्षक अनुपात का गलत सामंजस्य
(5) संसाधनों की कमी।

इसे मैं एक उदाहरण द्वारा समझाता हूँ। वर्तमान समय में, मैं एक महाविद्यालय में विजटिंग फैक्लटी के तौर पर कार्यरत हूँ। हमारे इतिहास विभाग में कुल 460 छात्र इतिहास मेजर में और लगभग 680 छात्र इतिहास माइनर

में नामांकित है। अब आते है राष्ट्रीय शिक्षा नीति के लक्ष्य पर 100 प्रतिशत नामांकन और उपस्थिति अगर ये सभी छात्र एक दिन महाविद्यालय में उपस्थित हो जाए तो सच यह है कि ना इनके बैठने की जगह है और ना ही पढ़ाने के लिए शिक्षक। विभाग में तीन शिक्षक जो सरकारी तौर पर और एक विजटिंग, क्या सम्भव है कि छात्रों का प्रोजेक्ट, असाइनमेंट और इंटरनल असेसमेंट समय पर पूरा हो सकेगा।

मैं अपने अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि आज के समय में जब छात्रों को VIIIth सेमेस्टर तक की पढ़ाई करनी है। आनेवाले दो वर्षों में कई सेमेंस्टर के छात्र एक साथ होगें तब स्थिति और भी भयावह होगी। सिर्फ बिहार ही नहीं लगभग सम्पूर्ण उत्तरी भारत इस समस्या का सामना कर रहा है। जबकि जरूरत है कि 06 छात्र पर कम से कम एक शिक्षक जरूर बहाल किए जाए। मैं ऐसा इसलिए कह रहा हूँ कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति को अगर बिहार के विश्वविद्यालयों में पूर्णतया लागू करना है तो पहले शिक्षकों की बहाली और दूसरा संसाधनों की व्यवस्था करनी होगी।

''राष्ट्रीय शिक्षा नीति'' के तहत छात्रों के अन्दर सीखने की प्रवृत्ति का विकास करना होगा। जरूरत है कि हम पढ़ने-पढ़ाने की जगह सीखने और सीखाने की प्रवृत्ति का विकास करें। आज के समय गुगल/चैट जीपीटी/किताबों में ज्ञान का भण्डार हम शिक्षकों से अधिक है तब जरूरी हो जाता है कि हम शिक्षक छात्रों के साथ मिलकर सीखे और सीखांए। समय लगेगा, लेकिन आनेवाले समय में शायद हम राष्ट्रीय शिक्षा नीति के लक्ष्यों को पूरी तरह से हासिल कर सके।

विश्वविद्यालयों के साथ सबसे बड़ी समस्या है कि यहाँ इतना काम है कि ''कोई काम ही'' नहीं होता। विश्वविद्यालय सिर्फ नामांकन, परीक्षा और परीक्षाफल घोषित करने के साथ-साथ, शिक्षकों के प्रोमोशन, सैलरी, छुट्टी, VC की बहाली, प्राचार्य की बहाली तक सीमित होकर रह गया है। विश्वविधालयों में अनुसंधान के नाम पर काम करनेवाले छात्रों को गरीब, मजबूर या हेय दृष्टि से देखा जाता है। जबकि जरूरत है कि रिसर्च करनेवाले छात्रों को उनके कार्य प्रणाली में पूरी तरह से समाहित किया जाए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति और सीबीसीएस पद्धति का अध्ययन करने पर पता चलता है कि यह भारत का भविष्य है लेकिन इसके लिए कम संसाधनों में बेहतर छात्र-विकास को कैसे पूरा किया जाए ये सभी जरूरी है। अंततः बिहार अभी भी अपने लक्ष्य से बहुत दूर है। क्या हम बिहारी शिक्षक अपने छात्रों के लिए कुछ सोचकर कर सकते है क्या? क्या हम प्रोमोशन, सैलरी और विश्वविद्यायल के नकारात्मक राजनीति से बाहर आकर अपने छात्रों का भविष्य तय कर बिहार का भविष्य स्वर्णिम कर सकते है क्या?

अपने इस आलेख के माध्यम से सरकार को कहना चाहूँगा कि सरकार BPSC के तौर पर BTSC की स्थापना करें। जो शिक्षा में प्रशासनिक गतिविधियों को संचालित करने हेतु विकेन्द्रीकरण पद्धति को अपनाए। साथ ही नीतियों का इंप्लीमेंट और मॉनिटरिंग कर अपने छात्रों के लिए कुछ किया जाए। एक सच है कि आज छात्र महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में सिर्फ डिग्री के लिए आते हैं। इसके लिए सरकारी व्यवस्था दोषी है। शिक्षक भी चाहते है कि छात्रों के लिए बेहतर करें। लेकिन सराकरी और विश्वविद्यालय शिक्षा पद्धति ने छात्रों को आसान रास्ता चुनने के लिये मजबूर कर दिया है। इसलिए अगर बिहार के विश्वविद्यालयों को बचाना है तो छात्रों को अपने साथ लेकर उनके अन्दर सीखने के गुण में लचिलापन लाकर ही कुछ सम्भव है।

''कल शायद हम ना रहें, हमारे कर्म रहेंगे
अगर कर्म शिक्षा हो, तो शायद हम सदा रहेंगे।

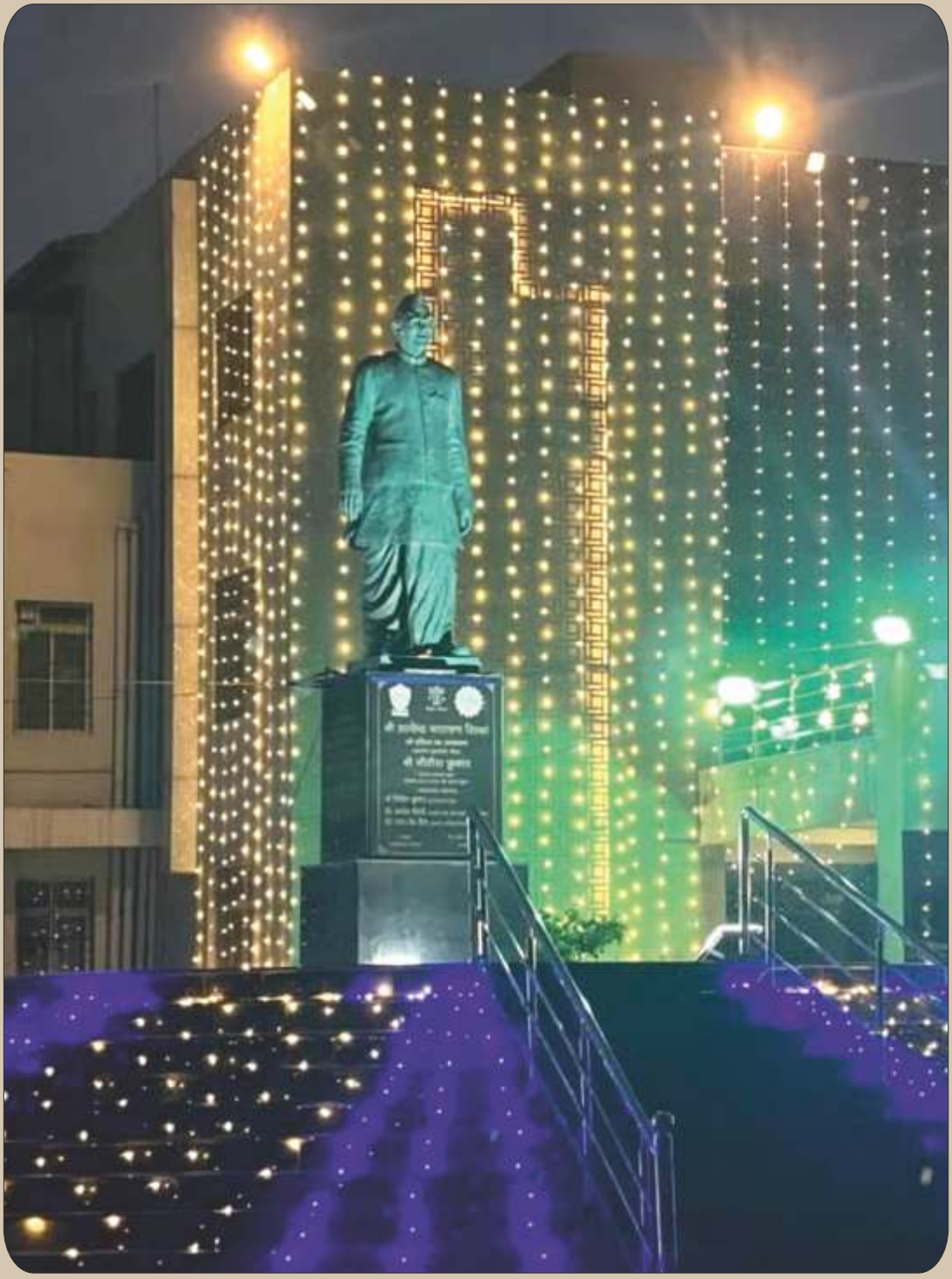

Design & Print @ Gyan Ganga Creations # 09334110685

ए.एन. कॉलेज, पटना

चतुर्थ चक्र, श्रेणी 'ए+' - राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद् (नैक) द्वारा पुनर्मूल्यांकित
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) द्वारा 'विशिष्ट' महाविद्यालय के रूप में रेखांकित
पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना